समालोचनार्थ

जिस पत्र में इस पुस्तक की समालोचना छपे उसकी दो प्रतियाँ भेजने की कृपा करें।

किताब महल
इलाहाबाद ३

ज्वालामुखी

●

लेखक
जगपति चतुर्वेदी, हिन्दी-भूषण, विशारद
[सहायक-सम्पादक, विज्ञान]
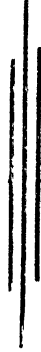
कि ता ब म ह ल
इ ला हा बा द

६. जीने के लिए

भयानक संक्रामक तथा छूत के रोग क्या हैं? रोगाणु और कीटाणु की खोजें किस प्रकार हुईं? रोगाणुओं से उत्पन्न घातक रोगों के शमन तथा उपचार के लिए उद्भट वैज्ञानिकों तथा खोजियों ने किस प्रकार प्रबल साधन निकाले? इन सब कथाओं को बड़े ही मार्मिक रूप में स्फूर्तिदायक तथा ओजस्वी भाषा में लिखा गया है। कथाओं के प्रबल आकर्षण को किसी भी एक के पढ़ने से बलात् अनुभव किया जा सकता है। हिन्दी जगत के सम्मुख ऐसी सरल किन्तु प्रभावोत्पादक शैली में विज्ञान की कथाएँ प्रस्तुत करने का यह पहला ही प्रयत्न है। मूल्य २)

७. ज्वालामुखी

धरती में ऊपरी परत की किस विचित्र रचना से हलचलें उत्पन्न होती हैं, ज्वालामुखी उत्पन्न करने वाले स्थान कुछ निश्चित भागों में ही क्यों हैं? ज्वालामुखी क्यों उत्पन्न होते हैं? उनके लुप्त या शान्त होने के क्या कारण हो सकते हैं? धरती की कोख में आग उठने का क्या परिणाम होता है? हरकुलेनियम, पाम्पाई आदि नगरों का कैसे विलोप हुआ। ५ हजार वर्ष पुराने गाँवों को कैसे आज भी धरती की ऊपरी चट्टानों के बीच पाया जा सका है? गीसर या कीचड़ के उभाड़ क्यों होते हैं। इन सब अद्भुत घटनाओं का वर्णन इस पुस्तक में देखें! मूल्य २)

८. परमाणु के चमत्कार

परमाणु विज्ञान-विशेषज्ञ डा० शिवयोगी तिवारी, पी० एच० डी० (पेनिसिलवेनिया विश्वविद्यालय, फिलेडेल्फिया) लखते हैं:—

"पुस्तक के विषय का प्रतिपादन लेखक ने बड़ी रोचकता से किया है और उसे पढ़कर परमाणु-संबंधी वैज्ञानिक खोजों का सुन्दर चित्र पाठकों के सम्मुख खिंच जाता है।

"श्री चतुर्वेदी जी सरल सुबोध विज्ञान के अभ्यस्त लेखक हैं और आप आप इस दिशा में यथेष्ट समय से संलग्न हैं। आप सरल, सुबोध और परिमार्जित हिन्दी में विज्ञान संबंधी पुस्तकें प्रस्तुत करने में अपना एक विशेष स्थान रखते हैं और उनसे हिन्दी-साहित्य की वृद्धि कर रहे हैं। समय-समय पर आपने इस प्रकार की पुस्तकों को हिन्दी-जनता के सम्मुख रखकर जो सराहनीय कार्य किया है, वह अपनी तरह का बेजोड़ है। आशा है कि लोकप्रिय वैज्ञानिक साहित्य के पाठक आपके इस प्रयत्न को भी रुचिकर पायेंगे।" मूल्य २)

इस पुस्तक माला की प्रथम दो पुस्तकों पर उत्तर प्रदेश सरकार ने ५००) का पुरस्कार प्रदान किया है।

सरल विज्ञान पुस्तक माला

लेखक—जगपति चतुर्वेदी, हिन्दी-भूषण, विशारद

१. विलुप्त जंतु

चट्टान के अन्दर जीवों की ठठरी कैसे सुरक्षित रहती है? हाथी के बराबर पक्षी, पैर से साँस लेने वाले त्रिफंकांगी, कहाँ पर और कब पैदा हुए? पूंछ पर भाले और पीठ पर हड्डी की ढाल वाले जन्तु, ८० मन के जन्तु आदि किस युग और स्थान में हुए?

धरती पर विचित्र जंतुओं के वंश पुरातन युगों में रहने के क्या प्रमाण हैं? उनके वंशों का कब और कैसे लोप हुआ होगा? क्या आधुनिक युग में भी कुछ जन्तुओं के वंश लोप होने के प्रमाण पाए जाते हैं? इसी भाँति ५० करोड़ वर्ष पूर्व तक के जन्तुओं का वर्णन इस पुस्तक में पढ़ें। मूल्य २)

२. बिजली की लीला

बिजली कैसे उत्पन्न होती है? बाटरी, डायनमो आदि क्या है तार, टेलीफोन, एक्सरे, रेडियो आदि किस शक्ति से काम करते हैं? एक सेकेंड में धरती की सात बार परिक्रमा कर आने वाले कण क्या हैं? वे कौन-सी शक्ति उत्पन्न करते हैं? इसी प्रकार के अनेक प्रश्नों और समस्याओं का समाधान और मनोरंजक उत्तर इस पुस्तक में दिया है। बिजली के खेलों और चमत्कारों का कौतूहलपूर्वक विवरण आप 'बिजली की लीला'' में पढ़ सकते हैं। मूल्य २)

३. समुद्री जीव-जन्तु

प्रवाल, स्पंज, कुसुमाभ वनस्पति हैं या जीवन ? सीप, घोंघा, शंख आदि की कड़ी खोल कैसे बनती हैं ? उड़ाकू मछली, पेड़ पर चढ़ने वाली मछली, साँपनुमा, गोल, चपटी गोमुखी आदि मछलियाँ कैसी होती हैं ? बिजली की मार से अपनी रक्षा करने और उभरवेट करने वाले जंतु कौन हैं ? गहरे समुद्र में प्रकाश करने वाले कज्जल मत्स्य कैसे होते हैं ? इन सबका कौतूहलपूर्ण वर्णन इस पुस्तक में देखें। मूल्य २)

४. वनस्पति की कहानी

वनस्पति किस प्रकार उगते हैं ? उनके अंगों के महत्वपूर्ण कार्य क्या हैं ? सारा जीव-जगत् अपने भोजन के लिए किस प्रकार वनस्पतियों का आश्रित है ? सबसे पुराना वृक्ष कौन-सा है ? वृक्षों की आयु कैसे जानी जाती है ? जंतु और वनस्पति में क्या-क्या भेद हैं ? हरियाली से क्या काम निकलता है ? ऐसे प्रश्नों का उत्तर आप इस पुस्तक में मनोरंजक ढंग से पा सकते हैं। मूल्य २)

५. भूगर्भ विज्ञान

धरती के निर्माण, अंतर्भाग तथा पपड़ी की रचना और अन्य परिवर्तन कैसे हुए ? ज्वालामुखी और भूचाल क्या है ? हिमालय, विन्ध्य, आल्प्स आदि समुद्र-गर्भ से कैसे उत्पन्न हुए ? धरती की शिलाओं में जंतुओं के विचित्र कंकाल किस प्रकार सुरक्षित रह सकते हैं ? उनसे किस प्रकार धरती की आयु जानी जाती है ? धरातल में उथल-पुथल किस प्रकार हुआ करती है ? तलभजन तथा तलछट जमाने वाली क्रियाएँ क्या हैं ? इन सब बातों का मनोरञ्जक वर्णन इस पुतक में देखें।

निवेदन

सरल विज्ञान पुस्तकमाला की सातवीं पुस्तक रूप में हम ज्वालामुखी को हिन्दी जगत के सम्मुख रखने में हर्ष का अनुभव कर रहे हैं। प्राकृतिक शक्तियों के उद्गार रूप में ज्वालामुखी एक बड़ी प्रबल घटना है। इन उभाड़ों का वर्णन तथा उनके धरती के कोख में उत्पन्न होने के मर्म का उद्घाटन बड़ा ही कौतूहलपूर्ण विषय है। हमने इस दुर्दमनीय अद्भुत शक्ति की कुछ गुण-गाथा अपने ज्ञानातुर, विचारशील, उत्सुक पाठकों के सम्मुख रखने का उद्योग इस पुस्तक में किया है। हमें आशा है कि हिन्दी के पाठक इस पुस्तक द्वारा अपना मनोरंजन तथा ज्ञानवर्द्धन करने का अव-सर प्राप्त करेंगे।

लोकप्रिय विज्ञान की हमारी इस पुस्तकमाला को विज्ञान-प्रेमी पाठकों तथा विद्वानों ने जो प्रश्रय प्रदान करना प्रारम्भ किया है उसके लिए हम बहुत ही ऋणी हैं। उत्तर प्रदेश की सरकार द्वारा इस माला की प्रथम दो पुस्तकों—विलुप्त जन्तु तथा बिजली की लीला पर ५००) का पुरस्कार-प्रदान भी विशेष सराहनीय है। अपनी सीमित शक्ति तथा अनेक कठिनाइयाँ होने पर भी हम इस पुस्तक-माला में अन्यान्य वैज्ञानिक विषयों पर पुस्तकें प्रस्तुत करते जाकर हिन्दी-भण्डार की वृद्धि करते जायेंगे। आशा है कि उदार पाठक भविष्य में भी पुस्तकों को अपना कर हमारे इस कठिन अनुष्ठान में योगदान करते ही जाएँगे।

दारागंज
इलाहाबाद

जगपति चतुर्वेदी

विषय-सूची

लावा की करामात

आज से छः करोड़ वर्ष पूर्व की बात है। हमारे देश की काली मिट्टी की भूमि में आग बरसनी प्रारम्भ हुई थी। साक्षात् धरती ही फट पड़ी थी। धरती की उस फटी छाती से ही आग बरसनी प्रारम्भ हुई थी। धरती अपने कलेजे को चीर कर जिस दहकती आग को उगल रही थी, वही आज की काली मिट्टी है। दक्षिणी भारत का काली मिट्टी का यह देश आज कदली फल, ज्वार की बालियाँ, गेहूँ की फसल और कपास की डोंडियाँ उपजा-उपजाकर अपने सपूतों के भोजन और वस्त्र का सुभीता करता है। कौन कह सकता है कि किसी दिन धरती माता ने अपना कलेजा चीर कर इस उर्वर भूमि की नींव डाली, अन्न और वस्त्र के बीज-वपन का श्रीगणेश करने का क्षेत्र बनाया। प्रकृति की यह आंतरिक कृपा, कल्याण भावना उस समय उसके अत्यन्त रौद्र, रोषपूर्ण, लाल-लाल या श्वेत-श्वेत पदार्थों के दहकते रूप में बाहर निकलती दिखाई पड़ती थी।

आज की धरती विन्ध्यपर्वत के दक्षिण की बहुत दूर तक की लम्बी चौड़ी पट्टी को काली मिट्टी के रूप में धरातल पर दिखलाती है। यह धरती के भीतरी गर्भ से निकली हुई वस्तु है जो मर्यादा के अंतर्गत, धरती की ओढ़नी के भीतर छिपी होने पर क्या रंग रूप रखती होगी, इसका जानना कठिन ही है लेकिन धरती की कोख से बाहर निकलने की दशा में उसे दहकते रहने

पर लाल या श्वेत हुआ पाया जाता है। वही धरातल पर या उसके निकट कुछ भीतरी भागों में जम जाने पर गहरे काले या बादामी रंग की बन सकती है। गहरे हरे या भूरे रंग का भी इसे पाया जाता है। इनका रूप कठोर होता है बसाल्ट नाम से इन्हें प्रसिद्ध पाया जा सकता है। दक्षिणी भारत के पठार का उत्तरी पश्चिमी भाग इस रूप के पदार्थ से ही निर्मित है। अमेरिका देश का कोलम्बिया पठार भी इस तरह के पदार्थ का बना है। संसार के अन्य बहुत से भागों में हम बसाल्ट नाम के इस भूगर्भस्थ पदार्थ का धरातल पर आगमन देख सकते हैं। ऊपर के अन्य स्तरों के कटकट और घिस-घिस कर टूट जाने पर हम कुछ ऐसे बसाल्ट के बने खंडों को भी देख पाते हैं जो धरती की भीतरी तह से इस वस्तु के ऊपर की ओर आने के उद्योग में धरातल के पहले ही कहीं बीच में जम गए हों।

कोई दानी अपने दान की प्रशंसा चाह सकता है। उसके दान की मात्रा उसकी सामर्थ्य के बाहर की बात सी दिखाई पड़ सकती है किन्तु क्या मनुष्य कभी प्रकृति की अतुल शक्ति की समता कर सकता है। अगाध भंडार और औढर दानी होने के अनुपम उदाहरण रूप में हम दक्षिण भारत की काली कलूटी मिट्टी का ही हिसाब लगाएँ तो हमारी बुद्धि स्तंभित हो जाती है। हिमालय सरीखा पर्वत जितनी मात्रा अपने कलेवर की रखता है उससे भी अधिक राशि इन बसाल्टीय क्षेत्रों में केवल दक्षिण भारत में ही धरती के गर्भ से बाहर आकर भूतल पर फैली पाई जाती है। ऐसे विशालकाय पर्वत को गंगा, सिंधु, ब्रह्मपुत्र सरीखी नदियाँ, अपने भगीरथ प्रयत्न से १२ कोटि वर्ष तक काटती पड़ी रहें और प्रकृति किसी अन्य शक्ति से इस क्षय की पूर्ति न करे तब कहीं यह अंत में समुद्र तल के बराबर हो सकता है। उसी की

तुलना का भारी भंडार दक्षिण में जितने विस्तृत क्षेत्र में फैला, उसका क्षेत्रफल २ लाख वर्ग मील तक होगा। इसमें बसाल्ट की तहें एक के ऊपर एक भिन्न-भिन्न समयों में जमीं, जिससे उसकी कई तहें बनी दिखाई पड़ी। इन तहों की सम्पूर्ण मुटाई ६००० फीट तक पाई जा सकती है। इतने बड़े क्षेत्र में इतनी मोटाई तक की तहों बसाल्ट, का कुल फैलाव ४ लाख घन मील होगा। अमेरिका के संयुक्त राष्ट्र में उत्तर पश्चिम के प्रान्तों वाशिंगटन, ओरेगन, इडाहो और कुछ अन्य राज्यों के भाग में कोलंबिया नदी की घाटी में ढाई लाख वर्ग मील भूमि बसाल्ट से बिछी हुई है जिसकी गहराई ३००० फ़ीट तक होगी।

यह बसाल्ट उस पदार्थ का ही एक रूप है जिसे हम धरती पर ज्वालामुखियों के मुख से पिघले हुए पत्थर के रूप में निकलता देखते हैं। यह पिघला या द्रव पाषाण साधारणतया लावा नाम से विख्यात है। वास्तव में धरती के गर्भ में किन्हीं रूपों में जो पदार्थ दबे पड़े हैं, वे ही जब धरती के ऊपरी तल पर आ पहुँचते हैं तो उन्हें लावा (द्रव पाषाण) नाम दिया जाता है। इन्हीं वस्तुओं को धरती के भीतरी भाग में दबे पड़े रहने पर मगमा नाम दिया जाता है। इस तरह हम देख सकते हैं कि एक ही वस्तु स्थान और अपना वातावरण बदलने पर धरती के गर्भ में मगमा और ऊपरी तल पर लावा नाम प्रसिद्ध करती है।

जिस प्रकार दक्षिण भारत के उत्तर पश्चिमी भाग तथा अमेरिका के संयुक्त राज्य की कोलंबिया नदी की घाटी में लावा की भारी तहें धरातल पर जमने की बात हमने ऊपर कही है, उस प्रकार इन तहों के दहकते रूप में धरातल पर आ जमने के काल में ही (आज से ६ करोड़ वर्ष पूर्व) आयरलैण्ड से उत्तरापथ की ओर २००० मील की दूरी तक ध्रुव प्रदेश तक लावा या धरती

की कोख से निकले द्रव पाषाण से एक भारी पठार बना था। समुद्र की लहरों की चपेट, आँधी पानी की मार तथा अन्य संहारक शक्तियों ने इस विस्तृत पठार का आज नाम भी मिटा दिया है किन्तु उसके बचे हुये चिन्ह-रूप में आयरलैण्ड, स्काटलैण्ड, फैरो-द्वीप तथा आइसलैण्ड आज भी विद्यमान दिखाई पड़ते हैं। इनमें अग्नि की ज्वाला धरती द्वारा उगल कर धरातल पर पहुँचाने का दृश्य आज भी आइसलैण्ड में देखा जा सकता है। वह हमें स्मरण दिलाता है कि धरती की कोख में छिपी आग आज भी शान्त नहीं हुई है।

आज से दो सौ वर्षों से भी कम की ही घटना है। सन् १७८३ ई० आइसलैण्ड में एक धरती का फटान २० मील की लम्बाई में हुआ। दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व की दिशा में यह फटान उत्पन्न हुआ जिसे लाकी फटान नाम दिया गया है। इस फटान से अनेक स्थलों से लावा बाहर बह चला। उनसे दो मुख्य धाराएँ बह चलीं। एक तो पश्चिमी भाग से बहती हुई ४० मील तक चली गई और दूसरी लगभग ३० मील तक गई। इस फटान की पंक्ति में सैकड़ों टीले बिलों के ऊपर फेंकी मिट्टी के समान आकार के कुछ गज ऊँचे बन गये। लावा के ऊपर की ओर बहने पर बहाव के स्थान पर किनारों की ओर इनके जम जाने से टीलेनुमा रूप बन जाते हैं। इन सबसे लावा का बहाव होता रहा। बाद में फटान का मुख्य रूप इन लावा की जमी तहों से भरता गया और ये छेदनुमा मुख वाले टीले दिखाई पड़ते रहे। आइसलैण्ड का प्रसिद्ध ज्वालामुखी हेकला इसी प्रकार बना है जिसको ऊँचे किनारों या भींटों के लावा और उभाड़ के साथ बह निकली राख तथा पथरीले छोटे बड़े ढोकों की मिश्रित तहों ने बनाया है। आइसलैण्ड में दो लम्बी फटानें हैं जिनमें एक उपर्युक्त ही है और दूसरी उत्तर-दक्षिण

दिशा में है। ये फटान बड़े गहरे हैं और कुछ फीट की चौड़ाई में हैं जिनको भारी दरार कहा जा सकता है। एल्गाजा नाम की फटान १८ मील लम्बी और ६०० फीट गहरी है। एक अन्य बहुत ही पुराने फटान से लावा की ६० मील लम्बी धारा बहने का भी प्रमाण मिलता है। इस द्वीप की १७०० वर्ग मील भूमि लावा के ऐसे फैलाव से ही ढकी है। अफ्रीका में भी अबीसीनिया में बहुत बड़ा क्षेत्र लावा के फैलाव से बना पाया जाता है। इंगलैण्ड में किसी समय ४०००० वर्ग मील भूमि ३००० फीट गहरी लावा की तह से ढकी होने का अनुमान किया जाता है।

इतने विस्तृत रूप में धरती की भीतरी वस्तुओं का धरातल पर पहुँचना बड़ी ही अद्भुत घटनाएँ हैं। हम जानते है कि पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के प्रभाव से सारी वस्तुओं को ऊपर के तल या स्थल से नीचे के तल या स्थल को जाने के लिए विवश होना पड़ता है। परन्तु धरती की इस प्रबल शक्ति का विरोध कर निम्नतल से ऊपर के तल पर भारी मात्रा की वस्तुएँ पहुँचा सकने वाली शक्ति कोई साधारण नहीं हो सकती। हम इस शक्ति को मुख्यतया ताप या गर्मी के रूप में पाते हैं।

बच्चों की कहानी में हम सूर्य और हवा के विवाद की बात पढ़ते हैं। कौन बड़ा है, इसे तै करने के लिए वायु एक यात्री के शरीर पर से कम्बल उतरवा सकने में अपनी सब शक्तियाँ लगा कर आँधी और पानी का बल दिखा कर भी थक जाता है किन्तु सूर्य अपनी गर्मी से उस यात्री को व्याकुल कर देता है। वह तुरन्त ही कम्बल उठा फेंकता है। इस तरह हम गर्मी का बल अधिक होने की बात सोच सकते हैं, परन्तु प्राकृतिक शक्तियों को जब गर्मी के साथ हवा और पानी का भी गठबंधन कर पृथ्वी के गर्भ में मगमा अर्थात् पाषाण के ही भीतरी भाग में दबे रूप को जब तब और

कहीं-कहीं धरातल के ऊपर फेंकने का दृश्य आज देखते हैं या भूतकाल में भी देखते आए हैं तो इस में आश्चर्य की बात नही।

ताप का बल तो इतना अधिक है कि १६००° शतांश तापमान पर शिला या चट्टान ऐसी दृढ़ वस्तु का भी अंग-अंग पानी हो सकता है। यहाँ पर पानी होने से हमारा अभिप्राय चट्टान के अवयवों या खनिजों का पानी की तरह द्रव या तरल रूप धारण करना ही है। हम शून्य शतांश तापमान पर पानी का रूप बर्फ़ होते पाते हैं और १००° शतांश पर यही पानी भाप या हवा की भाँति (वायव्य) रूप धारण करता दिखाई पड़ता है। चट्टान के दृढ़ खनिज प्रायः ६००° शतांश पर तरल या द्रव रूप धारण करने लगते हैं। कुछ अधिक स्थिर रूप के खनिज १५००° तक पिघल जाते हैं किन्तु अधिक से अधिक कठोर या स्थिर रह सकने वाले खनिज १६००° का तापमान होने पर अपना कलेजा पिघला देने के लिए विवश हो जाते हैं। परन्तु ज्वालामुखी में इन खनिजों को संयुक्त रूप में लावा की धारा निकलने पर १०००° या १२००° तापमान पर ही पिघले रूप में बहता देखा जाता है। धरती के अंदर भारी दबाव के कारण इन वस्तुओं को पिघला सकने वाले तापमान की मात्रा और अधिक होगी।

धरती के अंदर दबाव में पड़ी दबी हुई वस्तुएँ किस अंश की गर्मी में होंगी, इसका जानने का हमारे पास कोई साधन नहीं है। हम किसी गेंद या संतरे पर नख के खुरेच की भाँति ही कुछ हजार फीट गहराई तक का किसी प्रकार ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं परन्तु धरती अपने धरातल पर से भीतरी केन्द्र तक लगभग ४००० मील मुटाई या अर्द्ध व्यास रखती है। इतनी भारी पृथ्वी की ऊपरी तह के कुछ भाग का पता लगा कर यह देखा जाता है कि ६० या ७० फुट पर गहराई में १ अंश फार्नहीट की गर्मी बढ़ती जाती है

किन्तु यह ताप भूतल पर सर्वत्र समान रूप से प्रति ६० या ७० फीट की गहराई में एक अंश फार्नहीट नहीं बढ़ता। इस क्रम में विभेद भी पाया जाता है। दूसरे कुछ सीमित गहराई तक यह गर्मी की मात्रा बराबर बढ़ती ही मान भी ली जाय तो और भी अधिक गहराई में किसी निश्चित मात्रा की गर्मी होने का ज्ञान प्राप्त करने का कोई भी साधन नहीं। यह भी नहीं कहा जा सकता कि स्वतः धरती ही स्वाभाविक रूप से क्रमबद्ध रूप से गहराई में बढ़ती हुई गर्मी रखती है जो उसके किसी समय दहकते हुए रूप में उत्पन्न होने का ही शेष रूप है, अथवा रेडियम, यूरेनियम आदि की भाँति के रश्मिशाक्तिक पदार्थों अथवा परमाणुओं के किसी प्रकार क्षय होते रहने से ही यह गर्मी किन्हीं स्थलों में उत्पन्न हो जाया करती है जिससे ज्वालामुखी, गीसर आदि प्राकृतिक दृश्य उत्पन्न होते रहते हैं।

जो भी हो, इतना तो निश्चित है कि धरती पूर्णतया ठोस रूप की है। उसकी भीतरी तहों में गर्मी की चाहे जो मात्रा हो, वह साधारणतया किसी गहराई की धरती के चारों ओर की कोई पट्टी सदा ही पिघलाए रूप में नहीं रहती बल्कि स्थान-स्थान पर, समय-समय पर गर्मी का उभाड़ होता रहता है। दबाव के कारण वस्तुओं को पिघला सकने वाले तापमान की मात्रा अधिक होने की बात इन सब कठिनाइयों में भी एक ध्रुव सत्य बनी ही रहती है। परन्तु कुछ दुर्बल तहों के मार्ग ये दबे भाग कहीं उभड़ने का अवसर पाते हैं तो उनकी पिघलन शक्ति बढ़ाने वाली कुछ अन्य शक्तियाँ भी सहायक हो पाती हैं। इनमें पानी की भाप या अन्य गैसों का नाम लिया जा सकता है।

वस्तुओं के पिघल कर द्रव बना सकने के तापमान या गर्मी को उनका द्रवांक कहा जाता है। शिला या चट्टान के खनिजों का

द्रवांक न्यून करने अर्थात् उचित या आवश्यक तापमान से कम तापमान पर ही पिघला सकने की शक्ति उत्पन्न करने वाला पदार्थ पानी या उसकी भाप है। यह भाप लावा या मगमा में सर्वत्र ही विद्यमान रहती है। यह एक बहुत ही आवश्यक अंग है जिसका बड़ा ही महत्व है। पानी या भाप की थोड़ी मात्रा चट्टान के खनिजों को धरती के भीतरी भाग में कम तापमान पर ही द्रवित कर देती है। यदि उसकी अधिक मात्रा हो तब तो मगमा इतना तरल बन जाता है कि धरती की गर्म तहों में पतले छेदों या दरारों में भी सहज ही प्रवेश पाया जा सकता है। मगमा का पतला या गाढ़ा रूप होना उसके फैलने में विशेष सहायक या बाधक होता है। गाढ़ा या बहुत ही चिपचिपा रूप होने से मगमा की गति बहुत ही मन्द हो सकती है। उसका फैलाव अधिक दूर तक न हो कर ज्वालामुखी के केवल किनारे पर ही होकर उसे ऊँचा बनाता रह सकता है किन्तु तरल या पतले रूप का मगमा धरातल पर पहुँच कर वेग से अपना फैलाव कर सकता है। हवाई द्वीप के एक ज्वालामुखी के मुख से निकला लावा दो घंटे में १५ मील तक फैल सका था। सब लावा ऐसे ही वेग से नहीं फैलते। किन्तु पतलापन उनके वेग को बढ़ाने में विशेष सहायक होता है।

बर्फ बनाते समय सुभीता पाने के लिए नमक की सहायता ली जाती है। नमक मिलाने से पानी जल्दी जम जाता है। कुल्फी मलाई बनाने वालों को अपनी कुल्फी जमाने के लिए बर्फ के साथ-साथ नमक के इस गुण से लाभ उठाते देखा जाता है। ये पदार्थ वस्तुओं के जमाने या पिघलाने के लिए आवश्यक तापमान को घटा या बढ़ा सकने वाले होने से अपना विशेष स्थान रखते हैं।

इसी प्रकार कुछ पदार्थ लावा में विद्यमान रह कर उसके द्रवांक को न्यून करने में विशेष सहायक होते हैं। इन पदार्थों को भाप की

तरह गैस या वायव्य रूप में रह कर मगमा को कुछ कम तापमान पर ही द्रव रूप में रक्खे हुए पाया जाता है। कभी-कभी ज्वालामुखी के लावा या मगमा की ऊपरी तह को निचले भाग से अधिक गर्म पाया जाता है। हवाई द्वीप के किलौई नामक ज्वालामुखी के कुंड के अंदर कुछ भाग में खौलते रहने वाले लावा का एक छोटा कुंड है जिसे हालेमौमों कुंड कहा जाता है। इसमें गैसों के संघर्ष से ऊपरी तल पर लावा का तापमान १२००° शतांश तक पाया जाता है, किन्तु २० फीट की गहराई में उसी लावा के कुंड में १००° तक तापमान में न्यूनता दिखाई पड़ती है। विस्यूवियस, एटना अथवा किलौई नाम के इस ज्वालामुखी में साधारणतया १०००° शतांश (अथवा १८३०° फार्नहीट) की गर्मी पाई जाती है किन्तु किलौई में जब गैसें संघर्ष का बल लगाती हैं तो लावा कुछ अधिक गर्म हो उठता है और ऊपर उछाल मारता है। फ़व्वारे की तरह उठने पर इसके तल पर तापमान बढ़ जाता है किन्तु फौवारा न उठने के समय तापमान कम ही रहता है। एक और विचित्र बात देखी जाती है। गैसें और रासायनिक पदार्थ लावा को अपने प्रभाव से उस समय तक भी बहाते रहते हैं जब उस का तापमान ६००° शतांश तक हो जाता है किन्तु एक बार ठंढे होकर जमे रूप में हो जाने पर लावा को फिर द्रव अर्थात् बह सकने योग्य बनाने के लिए १३००° शतांश तक तापमान करने की आवश्यकता होती है। इतने भारी अंतर का केवल एक कारण होता है। वह है ठंडे लावा में गैसों का अभाव। अधिक समय तक लावा के धरातल पर खुले रूप में रहने के कारण गर्म गैसें बाहर निकल जाती हैं। परन्तु थोड़े समय के बाहर निकले लावा में उनके विद्यमान रहने से इतने कम तापमान पर भी उसमें तरलता अर्थात् बह सकने की अवस्था रहती

पाई जाती है। एक स्थान पर तो चट्टानी तहों के बीच में चादर की तरह फैलने वाली लावा की तह को चट्टान की तह टूटने पर बिल्कुल पिघली ही अवस्था में पाया गया। उस में से गैसें बाहर नहीं निकल सकी थीं, अतएव लावा पिघले रूप में ही दबा पड़ा रह गया था।

जब ज्वालामुखी का उभाड़ होता है तो प्रायः अतुल मात्रा का धुआँ घनघोर बादल की तरह उठता दिखाई पड़ता है। ज्वालामुखी के अंदर कोई वस्तु जलने योग्य नहीं है। वहाँ तो भूगर्भ के निर्माण करने वाले सभी पदार्थ अदाह्य रूप के ही हैं। केवल गर्मी की मात्रा किन्हीं कारणों से बहुत अधिक होने और ऊपर की तहों के दरार, फटान और तोड़-फोड़ आदि कारणों से दबाव की कहीं पर कमी होने से वे पदार्थ दहकते हुए लाल या सफेद द्रव बन कर छेदों या फटानों से बाहर निकल पड़ते हैं। उनके साथ बहुत ही गर्म भाप और गैसें भी निकल सकती हैं। इनके बहुत भारी प्रभाव से चट्टानों के चूरे बन कर भाप या गैसों के साथ बादल-सा रूप बना लेते हैं। इन में भाप की मात्रा बहुत अधिक देखते हैं। ज्वालामुखी के विस्फोट में यही मुख्य वस्तु होती है। जब भाप ८०० या ६००° शतांश के तापमान पर पहुँच जाय तो उसमें विस्फोट की इतनी प्रबल शक्ति उत्पन्न होती है कि यह जिस किसी वस्तु को घेर लेता है उस पर भारी दबाव डाल सकता है। इतना भारी दबाव साधारण रूप का कोई भी कृत्रिम रूप का अन्य विस्फोटक पदार्थ नहीं डाल सकता। इस से न्यून विस्फोटक पदार्थ केवल पदार्थों को बाहर फेक ही सकते हैं, परन्तु जो विस्फोटक बहुत ही भयानक होते हैं, वे पदार्थों की चिन्दी-चिन्दी कर देते हैं, पदार्थ बिल्कुल धूल हो जाता है। ज्वालामुखी के विस्फोट से उत्पन्न हुई इस प्रकार की धूल अपना एक विशेष रूप ही रखती है

जो कहीं पर भी होने पर अपनी ज्वालामुखीय जन्म की बात बोल उठती है। उसे तुरन्त ही पहचान लिया जा सकता है। ऐसी धूल पहचानने के कारण उनके अत्यंत बेडौल और टेढ़े-मेढ़े रूप ही होते हैं। यही धूल ज्वालामुखी से निकली भारी मात्रा की भाप से मिल कर भयानक ज्वालामुखीय धूमराशि उत्पन्न करती हैं।

ज्वालामुखी के मुख से निकले पदार्थों में कोई अन्य पदार्थ इतना भयानक नहीं होता जितनी भाप, धूल और गर्मी की खिचड़ी रूप में बनी यह भयानक प्रलयंकारी आँधी होती है। इसका झोंका दहकती धूल, राख आदि को लेकर एक बहुत ही भारी आँधी की तरह जब धरातल पर ज्वालामुखी के शिखर से नीचे उतरता है तो उसके वेगपूर्ण तथा विकट नाशकारी चपेट में पड़ा कोई भी जीव जीवित नहीं रह सकता। जीव-जंतुओं के स्वाहा होने के साथ बस्ती का भी कुछ चिन्ह पूर्णतया नष्ट हो सकता है। जब इस प्रलय की आँधी में भाप पानी रूप में होकर दहकती धूल को सान कर अग्निमय कीचड़ की नदी बहा देती है तो उसके मार्ग में पूरे का पूरा नगर अकस्मात ही ढक कर एक भारी समाधि बन सकता है। विस्यूवियस के उभाड़ में एक ऐसी कीचड़ की दहकती नदी ने हरकुलेनियम नगर को उसकी मोटी तह में दबा कर सर्वथा लुप्त कर दिया था जिसका पता लगभग दो हजार वर्ष बाद लगने पर भी खुदाई कर उसकी रूपरेखा जानना भी एक कठिन कार्य ही रहा।

भाप और गैस आदि युक्त जो द्रव पदार्थ ज्वालामुखी के मुख से बाहर निकलता है उसे लावा नाम दिया जाता है, परन्तु इसके अतिरिक्त कुछ अन्य पदार्थ भी ज्वालामुखी के विस्फोट के वेग से टूट-फूट या उड़कर ऊपर या बाहर पहुँचते हैं। ये पदार्थ ज्वाला-

मुखीय रोड़े कहला सकते हैं। ये या तो किसी पहले उभाड़ में निकले लावा के ठंडे हुए रूप हो सकते हैं जो ज्वालामुखी के मुख के भीतर जमे पड़े हों या मुख के किनारे या भींटे के फट पड़े भाग हों। ज्वालामुखी के छेद के भीतरी भाग की दीवाल भी विस्फोट के समय टूट-फूट कर कुछ अंश में बाहर पहुँच सकती है। कभी-कभी तो ऊपरी सिरा या हमारे मुख के जबड़ों की भाँति ज्वालामुखी के मुख को घेरे हुए किनारे पूर्ण रूप से उड़कर लुप्त हो जाते हैं और इस भींटे की जगह नया लावा आकर एक नये ही रूप का भींटा बना लेता है अथवा पुराने भींटे का कुछ भाग तोड़ कर भीतर अपना नया रूप खड़ा करता है। कभी-कभी ज्वालामुखी के उभाड़ के समय उसके पिघले हुए लावा को ही उसके साथ की गैसें नीचे से वेग से आकर धड़ाके से आकाश में उठा फेंकती हैं। मुख के लावा का यह ऊपरी भाग वायु में फेंका जाकर द्रव रूप में ही ऊपर फेंका जाता है; फिर वह प्राय: वायु में ही ठंडा बन कर ठोस बन जाता है और धरातल पर कहीं ज्वालामुखी के भींटे के आस-पास ठोस रोड़ों के रूप में आ गिरता है। इस तरह के ठोस चट्टान के कटे-पिटे टुकड़े या पिघले हुए लावा के ऊपर फेंके गए भाग जो जमकर ठोस बन जाते हैं, भिन्न-भिन्न आकार के हो सकते हैं। धूलि के छोटे-छोटे कण से लेकर पचासों मन तक भारी उनका आकार हो सकता है। अमरूद के बराबर या उससे बड़े टुकड़े ढोंके (ब्लाक्स) कहला सकते हैं। पिछले रूप में ही वायु में फेंके जाने वाले टुकड़े को बम कहा जाता है। सुपारी के बराबर आकार वाले टुकड़े ठीकरे या लैपिली कहे जा सकते हैं। मटर के बराबर टुकड़े ज्वालामुखीय रोड़े (ऐशेज) तथा अत्यन्त सूक्ष्म कण ज्वालामुखीय धूल कहलाते हैं।

स्कोरी—मटर और सुपारी के बराबर आकार के ज्वालामुखीय

रोड़े प्रायः स्कोरी नाम से पुकारे जाते हैं। इन्हें ज्वालामुखीय सिंडर भी नाम दिया जाता है। किन्तु लावा की धारा में ऊपरी तथा निचली तह के भाग में भी हम कुछ मैल की तरह जमी वस्तु को भी स्कोरी नाम से पुकारा जाता देखते हैं। जिस तरह लोहा या धातु गलाने की भट्टी में ऊपर की ओर मैल की तह तैरती रहती है या ईख की चाशनी में महिया नाम की मैल की तह जमी मिलती है या चीनी की चाशनी में भी हम मैल की तह ऊपर उठ आती पाते हैं, उसी प्रकार लावा की दहकती, लाल धारा की ऊपरी तह में झाग या मैल के रूप में गैस से संयुक्त कुछ पदार्थ तैरते रहते हैं। यह स्कोरी की तह कहलाती है। इसी का रूप लावा की निचली तह में भी होता है। जब लावा ठंडा होकर जमने की ओर प्रवृत्त होता है तो उसमें से गैस निकल-निकल कर ऊपर की ओर बुलबुले बनाने लगती है, परन्तु उसमें से गैस के बाहर निकल जाने के पहले ही वह झागनुमा फूली तह सूख कर कड़ी हो जाती है। यह एक ताप-अवरोधक प्रबल तह रूप की वस्तु बन जाती है। इसके कारण भीतरी भाग की वस्तु द्रव ही बनी रहती है। और अधिक समय तक लावा को बहाने योग्य रखती है। यह एक विचित्र बात है कि स्कोरी की इस ताप-अवरोध करने वाली तह के कारण कितने ही ज्वालामुखियों के मुख से बह निकलने वाले लावा की तह जब भींटे के चारों ओर हिम-आच्छादित रहने से उसके ऊपर से ही बहने लगती है तो लावा की निचली तह की स्कोरी अर्थात् वही झाग या मैल वाली तह बर्फ के शीत तल के ऊपर एक ऐसी ढाल सी बिछाती जाती है जिसके ऊपर लावा अपनी गर्मी सुरक्षित रक्खें बहकर आगे बढ़ता जाता है। उधर नीचे की बर्फ की तह बिना पिघले ही पड़ी रहकर अपना स्वरूप सुरक्षित रखती है। प्रकृति की यह विकट जादूगरी, आश्चर्यजनक खिलवाड़, सहज

ही, संसार की दृष्टि पड़े बिना ही हिमाच्छादित ज्वालामुखीय शिखरों के चारों ओर होता रहता है।

प्यूमाइस (छिद्रमय ढोंके)—स्कोरी के अनुरूप प्यूमाइस नाम के ढोंके होते हैं। चीनी की ठोस मिठाई और बताशे में अंतर स्पष्ट ही दिखाई पड़ता है। पावरोटी में भी खमीर के कारण गैस-पूरित छिद्रों का जाल पाते हैं। हमारी सादी रोटियाँ बिना अधिक फैलाव किये ठोस रूप रखती हैं। उसी प्रकार गैसों के प्रभाव से

चित्र १—प्यूमाइस (छिद्रमय ढोंके)

तल पर बबूले बनने पर जब गैस के रहते ही तल ठोस बन जाता है तो वह बताशों का रूप धारण कर लेता है। उसी का जब इतना हल्का रूप हो कि वह छिद्रमय टुकड़ा पानी में तैर सके तो उसे प्यूमाइस नाम दिया जाता है। स्कोरी के टुकड़े कुछ अधिक भारी होने से पानी में तैर नहीं सकते किन्तु दोनों में कुछ दर्जे का ही भेद है, वास्तव में दोनों हैं एक ही प्रकार के पदार्थ। लावा या पथरीले ढोकों के साथ गैस के मिश्रण से वायु में जमकर छिद्रमय

बने रोड़े प्यूमाइस होते हैं। (प्यूमाइस स्पञ्जनुमा या छिद्रमय टुकड़े) पानी के तल पर कई मास तक तैरते पाये जाते हैं। उनको समुद्र की धाराओं द्वारा बहुत दूर तक भी पहुँचा देखा जाता है। जब वे पानी से भर जाते हैं तब महीनों पश्चात् कहीं समुद्र के पेटे में डूब जाते हैं।

द्रव लावा—ज्वालामुखी के मुख से लावा द्रव रूप में बाहर निकलता है तो वह दहकते हुये रूप में श्वेत या लाल रंग धारण किए रहता है। किन्तु जब उसकी भयंकर गर्मी कुछ शान्त होने लगती है तो उसका रंग बादामी और धीरे-धीरे गहरा हो जाता है। लावा के द्रव होने का यह कभी भी अर्थ नहीं कि वह बिल्कुल पानी की तरह पतला हुआ रहता है। बहुत पतला होने पर भी हम उसे चीनी की चाशनी या गोंद के घुले रूप की भाँति देख सकते हैं। सड़क पर पोता जाने वाला कोलतार या डामर धूप से स्वयं पिघलने या पिघलाये जाने पर जितना पतला हो जाता है, वह रूप लावा का माना जा सकता है। इसमें उसी प्रकार ही कुछ चिपचिपापन होता है। धीरे-धीरे यह जमकर माड़ की तरह बन जाता है। फिर धीरे-धीरे अधिक गाढ़ा और ठोस बनता जाता है, जिससे ऊपर एक कड़ी पपड़ी पड़ जाती है परन्तु अंत में सारा भाग जमकर ठोस बन जाता है और बहाव बन्द हो जाता है।

ज्वालामुखी के मुख के नीचे बाहर की ओर के भाग या भींटे बहुत ही अधिक ढालुवे हों और लावा पतला हो तो उसका फैलाव तो बहुत ही वेग पूर्वक हो सकता है किन्तु उसके बहाव की गति केवल ढालू तल पर ही निर्भर नहीं करती। गाढ़ेपन का प्रभाव बहुत अधिक पड़ता है। यदि लावा का द्रव कुछ ही समय में दृढ़ हो सकने योग्य गाढ़े रूप का ही है तो वह अधिक दूर तक फैल नहीं सकता। कुछ तरल रूप के लावा १० या ५ मील प्रति

घंटे की चाल से फैलते पाये जाते हैं। साधारण गति ५ मील प्रति घण्टे ही है। सन् १९४४ ई० में मेक्सिको में उभड़े हुए संसार के नवीनतम ज्वालामुखी पेरिकुटिन में लावा का वेग ७ मील प्रति घंटा पाया गया था। किन्तु १८०५ ई० में इटली के प्रसिद्ध ज्वालामुखी विस्यूवियस में लावा के उद्गम के समय ५० मील प्रति घण्टा वेग पाया गया था। इसके विपरीत उसके इटली के एक द्वीप में स्थित एटना ज्वालामुखी में चौथाई मील प्रति घण्टे से भी कम अर्थात् २० फीट प्रति मिनट लावा की गति देखी गई थी।

कोई लावा ऐसा होता है कि वह महीनों या वर्षों मन्द गति से बहते रहकर ठोस बनकर अपना बहाव बन्द करता है। कभी-कभी उसकी ऊपरी तह पर पपड़ी की तह ऐसी जम जाती है कि उस पर चला जा सके और उधर भीतर-भीतर लावा बहता ही रहता है। कभी उस ऊपरी पपड़ी के खंड-खंड होते जाते हैं और लावा अपने बहाव के साथ पपड़ी के टुकड़े को भी लिए जाता है। ऐसे रूप के लावा के जमने पर भूमि का बड़ा ही ऊभड़-खाभड़ तल बनता है। इस प्रकार के लावा को खंड लावा कहा जा सकता है। कभी-कभी ऐसा भी हो सकता है कि लावा की ऊपरी तह कड़ी पपड़ी के रूप में जमकर स्थिर हो जाय और उसके भीतर से लावा बहकर अन्यत्र चला जाय जिससे खोखली पपड़ी एक कंदरा या खोह का रूप धारण कर लें। ऐसी कंदराओं में गर्मी सर्दी के प्रभाव से कुछ भाग ऊपर की तह से चूकर लटका रह सकता है या नीचे की फर्श पर गिर कर बल्लियों की तरह जमा पाया जा सकता है। ऐसे दृश्य चूने की चट्टानों में बनी खोहों में देखने को मिलते हैं जो चूने के अंश को पानी के संयोग से गला-गलाकर छत से लटकाती

और नीचे की फर्श पर जमा देती हों। यही कार्य लावा की तह भी जमने के पूर्व कर सकती है। लावा की कंदराएँ आइसलैंड और हवाई द्वीप में पाई जाती है।

लावा की धारा बहती रहकर अपने अंदर इतने अधिक दिनों तक यथेष्ट गर्मी सुरक्षित रखती पाई जाती है कि उसे देखकर आश्चर्य होता है। स्कोरी अर्थात् झागनुमा मैल की तह जम जाने पर ठोस पपड़ी के नीचे लावा की गर्म तह पचास वर्ष तक सुरक्षित रहने का एक नमूना मेक्सिको के आधुनिक काल में नवीन उभड़े हुए जोरुलो नामक ज्वालामुखी के लावा में पाया जाता है। एक वैज्ञानिक ने उसको धरातल पर आने के ५० वर्ष पश्चात् भी इतना गर्म पाया था कि उसके दरार में डाली हुई कोई तीली आग पकड़ लेती थी। इस ज्वालामुखी का उभाड़ सन् १७५६ ई० में हुआ था। परन्तु इसके ८३ वर्ष बाद भी भाप की दो शिखाएँ उठ रही थीं। एटना ज्वालामुखी में लावा के उद्गम के ४३ वर्ष पश्चात् सन् १८३० ई० में लावा में से भाप उठती दिखाई पड़ती थी। ताप की सुरक्षा की इतनी अद्भुत शक्ति लावा के अंदर देखकर बड़ा ही आश्चर्य होता है। यही कारण है कि ऊपरी तल के जमकर कठोर होने पर जहाँ मनुष्य चल सकता हो वहाँ भीतरी भाग में वह लाल दहकती हुई पड़ी रह सकती है।

लावा के भेद—लावा की रचना में अनेक विभेद पाए जाते हैं। एक ही ज्वालामुखी से निकले लावा की रचना में भी सदा एक-रूपता नहीं पाई जाती। किसी छोटे-मोटे ज्वालामुखी के भीटों या समय-समय निकले हुए लावा में बराबर एकरूपता भले ही हो, किन्तु ध्यान से अध्ययन करने पर अंतर स्पष्ट जान पड़ता है। ज्वालामुखी जितना ही बड़ा हो और उसके जागृत रहने की अवधि

जितनी ही अधिक हो और उसके पुराने उभाड़े लावा को जितना ही अधिक प्रकाश में लाया जाय, उतनी ही अधिक भिन्नता का दृष्टिगोचर होना लावा के भिन्न-भिन्न रूपों का उदाहरण होगा। पुराने समय से उभड़ते रहने वाले बड़े ज्वालामुखियों के इस प्रकार के विभिन्नता मुखबंधों (मुख के चारों ओर की दीवालों या भीटों) या ढालुआ शंकाकार टीलों के अवशिष्ट या सुरक्षित भागों का अध्ययन करने से इस बात की सत्यता प्रकट होती है। अमेरिका के ज्वालामुखी क्षेत्रों की सरकार द्वारा सुरक्षित भूमि, येलोस्टोन पार्क (पीत पाषाणीय उद्यान) के ज्वालामुखियों के कटे-फटे भाग, कैलिफोर्निया तथा पैसिफिक तट के अन्य ज्वालामुखी तथा योरप के विस्यूवियस और एटना ज्वालामुखियों के अध्ययन से उपर्युक्त बात अत्यंत स्पष्ट हो जाती है।

इतना ही नहीं, समीपवर्ती ही दो ज्वालामुखियों के लावा की रचना में विशेष विभेद पाए जा सकते हैं। इटली के समीपवर्ती एटना, स्ट्राम्बोली, बल्केनो या अन्य ज्वालामुखियों अथवा हवाई द्वीप के ज्वालामुखियों अथवा अमेरिका के अरिज़ोना-क्षेत्र के सैन फ्रांसिस्को पर्वत या अन्य स्थानों के ज्वालामुखियों में ये विभेद पाए जा सकते हैं। एक ही ज्वालामुखी के मुख से समय-समय पर निकले लावा की विभिन्नता एक साधारण बात है।

इन विभिन्नताओं का कारण समझने के लिए कुछ तथ्यों की जानकारी आवश्यक है। हम आज के महाद्वीपों की पृष्ठभूमि जिन शिलाओं से बनी पाते हैं, उनको कुछ गहराई तक पाया जाता है। इस खंड को हम महादेशीय प्रस्तर कहेंगे। ऊपरी पपड़ी या भू स्तर आप इसे समझ सकते हैं। इस के नीचे कुछ दूसरे रूप की पपड़ी या शिला है। उसे निम्नतलीय प्रस्तर कहने में कोई हानि नहीं। यह निम्नतलीय स्तर ही हमारी काली मिट्टी के देश को उर्वर बना

सकने वाली शिला रूप में भूतल पर पहुँचा सकी थी जिसको हम बसाल्ट रूप में जानते हैं। आप इस को भूगर्भ में बसाल्ट का ही दबा या छिपा रूप समझ सकते हैं।

यह अनुमान किया जाता है कि निम्नतलीय या बसाल्टीय तह भूगर्भ में निचली गहराई में दबे पड़े रूप में धरती के चारों ओर अपनी तह फैलाए है। इसे विश्व-व्याप्त तह माना जाता है। यह भी विचार स्थिर किया गया है कि बसाल्ट की भीतरी तह अवश्य ही बहुत ऊँचे तापमान पर होगी और भारी दबाव में दबी रहने के कारण ऊपर की तहों के नीचे ठोस रूप में बनी पड़ी होगी।

किन्तु ऊपरी या महादेशीय रीढ़ या पृष्ठभूमि वाली तह ढिलमिल रूप की नहीं। वह एक कड़े शासक की तरह कठोरता-प्रिय है। किसी विशेष स्थिति में और बहुत ही अधिक प्रबल शक्ति लगने पर ही वह अपना कलेजा पिघला कर नर्म पड़ सकती है।

एक बात और भी है। जिसे हम बालू या सिकता कहते हैं, वह एक मानव-बुद्धि के लिए एक दुर्गम, अभेद्य दुर्ग है। माना कि वह नदी के पेटे, मरुभूमि के मैदान और चट्टानों की तहों में सर्वत्र ही मारी-मारी फिरती है। किन्तु उसे हम अपने हाथों बना नहीं सकते उसकी दृढ़ काया का स्वयं निर्माण कर सकने का गर्व विज्ञान की प्रयोगशाला आज नहीं कर सकती है। यह द्रव्य या तत्व सिलिकन या शैलम नाम से ज्ञात है। ओषजन से संयुक्त रूप बालू के कण के रूप में हमें मिलता है। साधारण मिट्टी में भी इस के छोटे रूप का दर्शन किया जा सकता है। यह तत्व एक प्रकार से अपना सार्वभौम प्रभाव सा रक्खे दिखाई पड़ता है। हमारी धरती का अधिकांश इससे निर्मित पाया जाता है। परन्तु इन सब बातों से हमारा यहाँ अधिक प्रयोजन नहीं। हमारा तो यहाँ पर यही बतलाने का प्रयोजन है कि यह पदार्थ तापमान की साधारण मात्रा

में नहीं पिघलता जिसमें शिलाओं के अवयव रूप के अधिकांश पदार्थ पानी-पानी हो जाते हैं। हमने पहले देखा है कि औसतन ६००° से १५००° शतांश के तापमान पर शिला की निर्मायक प्राय: सभी वस्तुएँ पिघल उठती हैं। किन्तु यह सिकता या सिलिकन का यौगिक १६००° तापमान पर पिघल पाता है। इसके योगिक अर्थात् इस तत्व के ओषजन के गठबंधन से बने रूप की बहुलता ही हमारे महादेशीय खंड की मुख्य तह में पाई जाती है। ऐसिड या अम्लीय शिला इस खंड की मुख्य चट्टानों का नाम दिया जाता है। यह ऊँचे तापमान पर पिघल सकने वाली ही होगी इसको हम स्मरण रख सकते हैं।

बसाल्टीय तह की रचना में अधिकांशत: वे पदार्थ होते हैं जो धातु वर्ग के तत्वों के ओषजन के साथ यौगिक होते हैं। ये पदार्थ बालू या सिकता से संबोधित तत्व की अपेक्षा कम तापमान पर पिघल जाने वाले होते हैं। इनको धातु नाम से पुकारने पर हमें अपने ध्यान में लोहे, ताँबे, जैसी धातुओं को ही नहीं लाना चाहिए, बल्कि यह समझना चाहिए कि मिट्टी में भी उसके किसी रूप के कण विद्यमान हो सकते हैं। अल्यूमीनियम धातु तो अपना स्वरूप मिट्टी रूप में ही छिपाए रहती है। कुछ धातु चाकू से सरलतया काटे जा सकते हैं। यथार्थ में सिलिकन को छोड़कर ठोस पदार्थों की रचना करने वाले अधिकांश पदार्थ धातु ही हैं। विश्व का निर्माण करने वाले तत्वों की संख्या में अधिकांश नाम धातु वर्ग के तत्वों का ही आता है। हाँ, वायु रूप में हमें ओषजन जैसे पदार्थ की अवश्य ही सर्वत्र बहुलता दिखाई पड़ेगी परन्तु हम यहाँ पर शिलाओं के विभेद की ही चर्चा कर रहे हैं। ठोसपन के इस विभेद की यह दूसरी प्रकार की शिला बेसिक या भस्मीय कही जाती है। धातु वर्ग के तत्व का ओषजन

से योगिक बनने पर बेस या भस्म नाम दिया जाता है अतएव बसाल्टीय शिलाओं को आप धातु-प्रधान द्रव्य या शिला कहें तो इस भाव को स्मरण रख बसाल्टीय शिला का रूप कुछ ठीक समझा जा सकता है।

हमने देखा कि पृथ्वी की अधिक गहरी तह में यह धातु-प्रधान या भस्मीय (बेसिक) शिला की पेटी है जिसे मगमा का नाम भी हम देते हैं, परन्तु इसकी ऊपरी तह की शिला ऐसिडिक या अम्लीय नाम धारण कर भी किसी कारण पिघल कर अपना नाम सात सवारों में लिखाने की भाँति "मगमा" बन सकती है। किन्तु यह बात ध्यान में रखने की है कि ताप का अतुल भंडार गहरी तह की शिला अर्थात् बसाल्टीय तह में ही है जो भारी दरारों या कटानों के मार्ग से धरातल पर पहुँचने का अवसर पाकर अपने अगाध भंडार की अतुल राशि जमा कर सकने में समर्थ पाई जाती है। एक केन्द्रीय मुख होने पर निरंतर अधिक समय तक समय-समय पर लावा का उद्गम करते रहने पर लावा की भारी मात्रा बाहर पहुँच पाती है। यह भस्मीय शिला या मगमा की धारा धरातल पर पतली रूप धारण किए बहुत दूर तक अपना फैलाव करती पाई जाती है। परन्तु अम्लीय या महादेशीय स्तर की शिला के भंडार में जो पदार्थ हैं वे उतने शीघ्र पिघलने वाले नहीं होते तथा भूतल पर पहुँचने पर भी बहुत शीघ्र ठंडे होकर जम जाते हैं। इसलिए उनका फैलाव केवल ज्वालामुखी के भीटों के आस-पास ही होकर रह जाता है।

जिन ज्वालामुखियों में बसाल्टीय या बेसिक मगमा धरातल पर लावा रूप में आता है वे शान्त ढंग से, चुपचाप लावा का उद्गम किए जाते है, किन्तु ऐसिडिक अर्थात् अम्लीय मगमा में पानी की भाप और अन्य गैसें भी पर्याप्त मात्रा में मिली होती हैं।

इससे जिन ज्वालामुखियों में लावा निकलते हैं उनमें दहकती भाप और गैसें बड़ा प्रबल विस्फोट उत्पन्न करती हैं। ज्वालामुखी की गर्दन में मगमा की तह पहुँचने पर या पहले की ही विद्यमान ठोस ठंडी तह के नीचे की गर्मी से पिघल उठने पर उसका मुख से बाहर निकास होने के पहले ही नीचे की ओर भाप और गैसों का बहुत भारी भंडार संचित रहता है जिनके ऊपर आने के प्रयत्न में सारी लावा की राशि ऊपर ही ऊपर बिखर कर भारी बवंडर रूप में हवा में उड़ जाती है साथ ही गर्दन की दीवालों या ऊपरी मुख के भोंटे अथवा किनारों पर का ऊँचा टीलानुमा भाग भी उड़कर धूल में मिल जाता है।

ज्वालामुखी में उभाड़ करने वाले कुछ कारणों से अम्लीय मगमा अथवा महादेशीय स्तर की शिलाओं में तापमान की वृद्धि होने से ज्वालामुखी का उभाड़ हो सकता है, अथवा इन तहों की चट्टानों के उथल-पुथल की शक्तियों से टेढ़े-मेढ़े, मुड़े, उलटे-

चित्र २—तलभ्रष्ट शिला-स्तर

पुलटे रूप होने और स्तरों में फटान होने पर दबाव में कमी होने से नीचे की तह का बसाल्टीय मगमा पिघल कर ऊपर की ओर आने का उद्योग करता है। उसके वेगपूर्वक उठने के प्रयत्न में

ऊपरी तह की अम्लीय शिलाएं या मगमा उस प्रलय की बाढ़ में स्वयं, भी भाग लेने के लिए टूट-फूट या पिघल कर ऊपर पहुँच सकती है या बसाल्टीय मगमा का केवल तापीय प्रभाव ही उन तक पहुँच कर उनमें उठने की शक्ति उत्पन्न कर सकता है। इन स्थितियों में हम समझ सकते हैं कि कभी-कभी कोई खंड अपने भागों को पिघलाकर धरातल पर लावा या विस्फोट की आँधी के रूप में पहुँच सकता है। ये ही कारण लावा तथा ज्वालामुखी के उभाड़ों की अनेकरूपता के हैं।

लावा के निर्माण की दृष्टि से जो भिन्न रूप की शिलाएँ हमें धरातल पर जमी मिलती हैं उनके अनेक नाम और भेद हैं। उनमें अम्लीय रूप का एक भेद रिओलाइट और भस्मीय रूप का बसाल्ट नाम से प्रसिद्ध है। एक मध्य प्रकार का रूप ऐंडीसाइट या ऐंडी पर्वतीय कहा जाता है जिसके रूप अमेरिका के ऐंडी पर्वत के ज्वालामुखी से निकले लावा में पाए जाते हैं। इसी कारण उसका नाम ही ऐंडी पर्वतीय पड़ गया है।

———

अंतर्गमनीय द्रव पाषाण

ज्वालामुखी के उद्गार में हम कितनी ही प्रकार की शिलाओं को लावा के जमने से भूतल पर या समुद्र के गर्भ में भी बना पाते हैं, इनको भूगर्भ से बाहर आकर धरातल पर स्थान पाने से हम बहिर्गामी शिलाएँ (एक्सट्रयूजिव) कह सकते हैं किन्तु ज्वालामुखी के गर्भ में पहुँचे या उत्पन्न हुये मगमा या द्रवित पाषाण का प्रसार धरातल से नीचे ही अन्य शिला-स्तरों के अंतराल या सीधे ही खड़े या आड़े नाले में बहने के स्थान को फोड़ कर हो जाता है। ज्वालामुखी की ग्रीवा रूप नली या सीधे आधारस्थल से भी इनका उभाड़ किसी ओर को हो सकता है। हम अनेक रूप में इनके भीतर ही भीतर फैलाव होकर जमने से बनी ज्वालामुखीय शिलाएँ पा सकते हैं। इन सब का अन्तस्तल में ही प्रसार और निर्माण होने के कारण हम इनको अन्तर्गामी (इन्ट्रयूजिव) शिलाएँ कह सकते हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि जब ज्वालामुखी की उग्रता कुछ शान्त होने पर उसके मुख का छिद्र लावा से ठन्डे होने से बन्द हो जाता है तो फिर ऊपर तक पहुँच सकने का बल न होने से ज्वालामुखी के छिद्र में नीचे की ओर पहुँचने वाला या विद्यमान मगमा या द्रवित पाषाण अपने चारों ओर दृष्टि दौड़ाता है और भीतर ही भीतर जहाँ कहीं अन्य शिलाओं में दुर्बल स्थान, स्तरों की तह, जोड़ या भग्न भाग या दरार ढूँढ़ पाता है, उन्हीं में बलपूर्वक पहुँच जाने का उद्योग

करता है। यही उनके शिलाओं के अंतर्भाग में घुस कर पेड़ों पर बंझा की भाँति आश्रय-स्थान पाने और पैर जमा कर बैठ या जम जाने का कारण हो सकता है।

धरातल के नीचे जो अन्तर्गामी शिलाएँ किसी समय अपना कोई स्थान निकाल कर जमी, उनके रूप को आज हम कितने ही स्थानों पर उनके आवरण रूप की अन्य शिलाओं के भूतल-भंजन की क्रियाओं से भंजन होकर नष्ट हो जाने से खुले रूप में देख सकते हैं, अतएव उनके निर्माण का रहस्य खुल जाता है। इन अंतर्गामी शिलाओं का निर्माण अन्य शिलाओं के मध्य हुआ था। इसलिए धीरे-धीरे ठंडी होकर ही ये जम पाई होंगी, इस कारण इनके रवे बड़े-बड़े बने पाये जा सकते हैं जो यह प्रमाणित कर सकते हैं कि वे कभी अन्य शिलाओं से घिरी होकर निम्न ढँके भाग में ही जमकर बनीं। उनका आकार भी इस बात की कुछ पुष्टि कर सकता है।

भित्ति-शिला (डाइक)

पृथ्वी में भीतर की ओर दरार फटने से उसमें अधिक नीचे के भाग से मगमा पहुँच कर सारे दरार को भर सकता है। इसमें जम जाने पर वह दरार की लम्बान में ही दूर तक फैला होकर ऊँची दीवार या भित्ति के रूप में हो जाता है। इसको भित्ति-शिला (डाइक) कह सकते हैं। हम इसे कुछ इंच या फीट मोटी दीवार के रूप में प्राय: पाते हैं, परन्तु सबसे मोटी भित्ति-शिला (डाइक) हजारों फीट मोटी पाई जाती है। आप यह समझ सकते हैं कि यदि वे शिलास्तर, जिनके सीधे खड़े रूप में फटने से बने स्थान या दरार में यह भित्ति-शिला बनी हैं, इससे अधिक दृढ़ और भूतल-भंजन की क्रियाओं का सामना कर सकने वाले

हैं तो भित्ति-शिला कालान्तर में छिन्न-भिन्न या खंडित होकर पूर्व शिलास्तरों के मध्य खड्ड सा बना सकती है लेकिन यदि
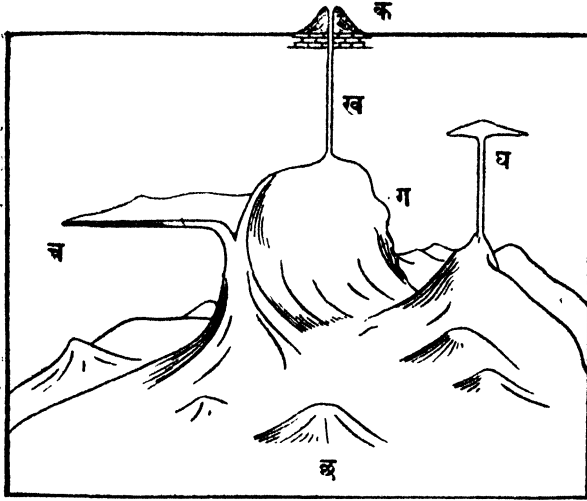
चित्र ३—आग्नेय शिला की आकृतियाँ।

क—ज्वालामुखी। ख—ज्वालामुखी-नली (पाइप)। ग—भित्तिशिला (डाइक)। घ—छत्रशिला (लेकोलिथ)। च—पत्रशिला (सिल)। छ—आधारशिला (बैथोलिथ)।

स्थिति उलटी हुई और पूर्व शिला अधिक दुर्बल या कोमल हुई और उसमें स्थान पाई हुई भित्ति-शिला अपेक्षाकृत अधिक दृढ़ हुई तो भूतल-भंजन क्रियाओं का प्रकोप उन पूर्व शिलाओं पर होगा जिससे वे धीरे-धीरे खंडित और छिन्न-भिन्न होकर विनष्ट हो जायेंगी परन्तु भित्ति-शिला अकेले ही खण्डहर की पुरानी दीवार की तरह खड़ी ही रह जायगी। भित्ति-शिला के बनने के समय यदि पूर्व शिलाओं की दरार धरातल तक पहुँची हो और मगमा या द्रवित शिला भित्ति-शिला भी बना रही हो तो वह धरातल पर जाकर लम्बे ज्वालामुखी की भाँति

लावा उगलने लगेगी। ऐसे रूप में धरातल पर भी उसकी तह जम जायगी। इस तरह निम्न तल या दरार में तो वह भित्ति-शिला बनी रहेगी और ऊपर साधारण ज्वालामुखी के बहिर्गत लावा की भाँति ज्वालामुखीय शिला बनायेगी। ऐसे कार्य के लिए भस्मीय या बसाल्ट या मध्य श्रेणी की भस्मीय या ऐंडीसाइट शिला वाले मगमा ही समर्थ हो सकते हैं क्योंकि अधिक तरल मगमा ही दरार का लम्बा मार्ग तय कर सकता है। इस तरह तल पर पहुँचने वाले या धरातल के अन्दर ही क्रिया समाप्त करने वाली भित्ति-शिला के नमूने मिलते हैं।

आधार-शिला (बैथोलिथ)

पर्वतों और ज्वालामुखियों की नींव या आधारशिला के रूप में हम ऐसे विशाल आकार की अंतर्गामी शिलाओं को पाते हैं जो हजारों मील लम्बी और सैकड़ों मील चौड़ी फैली पाई जाती हैं परन्तु वे नीचे की ओर कहाँ तक गई हैं, इसके जानने का कोई आधार नहीं है। इनके ऊपर के अन्य शिलाओं के स्तर विनष्ट हो जाने से हम नग्न रूप में इनका ऊपरी तल देख सकते हैं। ये शिलाएँ ग्रेनाइट की बनी मिलती हैं। ग्रेनाइट की तरह ही भूगर्भ में जमकर बनी हुई भस्मीय शिलाओं में हम ऊपरी तल के बसाल्ट के समान अधिक भस्मीय रूप की गब्रो नाम की शिला और ऐंडीसाइट या ऐंडीवर्तीय के समान मध्यम भस्मीय वर्ग की डियोराइट शिला के अंश भी बैथोलिथ या आधारशिला में कुछ मिला पाते हैं। बसाल्ट के ही समान खनिजों का मेल गब्रो में होने पर हम उसकी रचना भूगर्भ में होने से बड़े रवों की पायेंगे। इसी तरह ऐंडीवर्ती शिला जहाँ भूतल पर बनी होने से सूक्ष्म रवों की होगी वहाँ डियोराइट के रवे मोटे होंगे। इन

मोटे रवों के द्वारा डियोराइट और गब्रो की रचना होने पर ग्रेनाइट के साथ इनका मेल बैथोलिथ या आधारशिला में देखकर हम निश्चय रूप से जान सकते हैं कि आधारशिला की रचना अन्य शिलाओं के मध्य में कहीं पृथ्वी के गर्भ में हुई। इस आधारशिला का प्रसार हम अन्य शिलाओं को फोड़कर हुआ देखते हैं। उनके नसों या बाहुओं रूप में फैले भाग आस-पास की शिलाओं में दूर तक घुसे पाए जाते हैं। कहीं-कहीं कोई पूर्व शिला पूर्ण रूप से ग्रेनाइट द्वारा चारों ओर से आवेष्ठित भी पाई जाती है। यह एक बड़ी विचित्र घटना है कि इन प्रमाणों के होते हुए ये मगमा द्वारा अन्य शिलाओं के मध्य घुस कर भारी बंभा रूप में बाद में आकर स्थान बनाए और जमे हुए विस्तृत शिलाखंड हैं किन्तु हजारों मील की लंबाई में सैकड़ों मील चौड़े शिलाखंड का प्रवेश नवागंतुक रूप में हो और पुरानी या पूर्व शिला का कुछ पता न चले। यह एक बड़ा भारी रहस्य है जिसके लिए भूगर्भ-वेत्ताओं में बड़ा विवाद चल रहा है। एक विद्वान् का इन परिस्थितियों में यह कहना है कि मुख्यतया ग्रेनाइट से बने ये शिला-खंड या क्षेत्र कहीं नीचे से नहीं आए, बल्कि निम्न स्तरों से भारी उत्तप्त द्रव ही इस स्तर तक पहुँचा और अपनी भारी गर्मी में उथल-पुथल मचाकर तथा अपने साथ लाए कुछ रासायनिक पदार्थों या खनिज़ों का मेल कर और पुराने खनिजों में से कुछ को रासायनिक रूप में परिवर्तित और कुछ को बहिष्कृत कर इस वर्तमान रूप की आधार-शिला का विस्तृत क्षेत्र में निर्माण कर सका। बैथोलिथ के नीचे के तल का ज्ञान न होने से यह भी नहीं कहा जा सकता है कि तलछटीय शिलाओं के विस्तृत क्षेत्र को अपने तल के नीचे दबाकर ऊपर अपनी मोटी तह जमा सका है या किसी

प्रकार स्वयं ही अपने उत्ताप के प्रभाव से पूर्णतया आज के रूप को पा सका है। गर्म वस्तु का प्रभाव स्पर्श करने वाली वस्तु पर भी प्रभाव पड़ता है, गर्म लाल लोहा छूने पर दूसरे पदार्थ को जला देता है, इसी तरह उत्तप्त पिघले पाषाण या भयानक गर्मी सहित वायव्य (गैस) से ही झुलस या पिघल कर बने बैथोलिथ या अन्य ज्वालामुखीय ,अंतर्मुखी शिलाओं का प्रभाव समीप के अन्य स्तरों पर भी देखा जा सकता है। ऐसे उष्ण स्पर्श से प्रभावित शिला के निकट के भाग में जो परिवर्तन होते हैं उन्हें पार्श्ववर्ती परिवर्तन कह सकते हैं। बैथोलिथ ऐसे विशालकाय शिलाखंड का पार्श्ववर्ती प्रभाव भी कम नहीं हो सकता। इसके भारी उत्ताप से चूने का पत्थर संगमरमर और बालू का पत्थर अधिक कठोर रूप का क्वार्ट्जाइट शिला बन जाता है। चिकनी मिट्टी की शिला अधिक कठोर रूप की होकर हार्नफेल्स नाम की शिला बन जाती है।

बैथोलिथ या अन्य अन्तर्गामी या बहिर्गामी शिलाओं के बनाने वाले मगमा अनेक वायव्यों का पिघलाया रूप संयुक्त किए होते हैं। जब मगमा धीरे-धीरे जमकर शिला रूप में हो जाता है तो ये वायव्य भारी दबाव में दबे रहकर कुछ तो ठोस भागों में प्रविष्ट कर जाते हैं और कुछ तरल बनकर पतले छिद्रों में रह जाते हैं। वहाँ भारी दबाव पड़ने पर पानी तो इधर-उधर दरारों में फेंका जाता है। परन्तु उसमें का मिला हुआ खनिज ठोस बनकर पतली नस के रूप रह जाता है। ऐसी नसों के रूप में सोना, चाँदी ताँबा सरीखे मूल्यवान धातु सुरक्षित पाए जाते हैं।

छत्रशिला (लैकोलिथ)

अंतर्गामी शिलाओं में हम कभी छत्र रूप का आकार भी पाते हैं जिसमें मोटे खंभों के रूप में द्रवित पाषाण कहीं भूगर्भ में उठा

होता है और सिरे पर पतली तह के रूप में थोड़ी दूर फैल गया होता है। यह वैसे स्तरों के मध्य ही बन पाता है जहाँ स्तर इसके वेग से ऊपर उठकर मेहराब सा बनाकर इसको फैलने का थोड़ा स्थान दे देता है। ऐसे छत्रशिला का स्तंभ तो सैकड़ों फीट मोटा हो सकता है। परन्तु ऊपरी सिरा छाता या कुकुरमुत्ता रूप में पतली तह ही बना पाता है।/

पत्रशिला (सिल)

मगमा के फैलने के लिए अन्य शिलाओं के चौरस स्तरों के अंतराल में चादर की भाँति फैलकर जमने का अवसर जब मिलता है तो उसे पत्र-शिला (सिल) कह सकते हैं। इसकी चौड़ाई लगभग एक-सी होने से इसका नाम पत्र-शिला रक्खा जा सकता है। इसकी मुटाई कम या अधिक सैकड़ों फीट तक भी हो सकती है। किसी समय भूगर्भ में इसकी रचना होने पर इसके रवे मोटे और नीचे ऊपर दोनों तल की ओर के पूर्व शिला स्तरों में इसकी गर्मी से उत्पन्न हुआ पार्श्विक परिवर्तन इसके भूगर्भ में रचना का प्रमाण दे सकता है। धरातल पर जमा लावा अपने नीचे ही पार्श्ववर्ती प्रभाव दिखा पा सकता है परन्तु पत्र-शिला तो ऊपर नीचे दोनों तलों पर ही अन्य शिलाओं से स्पर्श करती है इसलिए दोनों ओर या तलों पर उसका तापजनित या पार्श्ववर्ती प्रभाव देखा जा सकता है। ऊपर की पूर्वशिला घिस जाने पर हम यह पत्रशिला खुले रूप में देख सकते हैं।

ज्वालामुखी के भेद

अनेक ज्वालामुखियों को किसी-किसी समय भयंकर उभाड़ करते देखा जाता है किन्तु एक विस्फोट के बाद वे थोड़ी या लम्बी अवधि तक शान्त से बने रहते हैं। ऐसे समय में उनके ज्वालामुखी होने का अनुभव लोगों को भूलने सा लगता है। ऊपरी भाग पर ज्वाला का कोई चिह्न नहीं रह जाता। मुखबंध या भीटे और ज्वाला कुंड तक शान्त हो जाते हैं। उनकी ऊपरी तहों या भीटों के किनारे पेड़ पौधे उग आते हैं, हरियाली छा जाती है, लोग पास-पड़ोस में बाग बगीचे और बस्तियाँ भी बना लेते हैं। सैकड़ों वर्ष तक शान्त रहने वाले ज्वालामुखी के किसी समय उभड़े रूप को स्मरण रखने वाली पीढ़ी समाप्त हो चुकी रहती है और नई पीढ़ी के लोग प्रकृति की उद्धतता का कुछ भान न कर बाहरी लुभावनेपन में भूल जाते हैं। यह शान्त रूप की रहने वाली अवस्था यदि सहस्रों वर्ष तक रह सकी हो तब तो लोगों के धोखा खाने में कोई बाधा ही नहीं होती, किन्तु किसी समय प्रकृति सोकर उठती है। कुछ भाप और भूकम्प का आगमन दिखाई पड़ने लगता है। ज्वालामुखी की अधिक समय से शान्त रहती आई अवस्था को ध्यान में रखने के कारण इन छोटी-मोटी सूचनाओं को भी लोग भुला देना चाहते हैं। किन्तु किसी दिन, किसी घड़ी भयानक विस्फोट होता है। आस पास की भूमि, बस्ती, हरियाली काँप उठती है। उभाड़ में निकली ज्वाला की तीव्रता अपने प्रकोप से भयंकर धन-जन हानि कर देती है।

इस प्रकार के ज्वालामुखी सुप्त या सुषुप्त अवस्था वाले कहलाते हैं जिनके उभाड़ों के मध्य में पचासों सैकड़ों या सहस्र वर्षों तक का अंतर पड़ जाता है। लंबी अवधि तक सोये रहकर जाग उठने वाले ज्वालामुखी को गहरी निद्रा में रहने वाला या सुषुप्त ज्वालामुखी कह सकते हैं। साधारण अवधि तक सोये रहकर जाग उठने वाले को सुप्त अवस्था का ज्वालामुखी कहते हैं। परन्तु बहुत से ज्वालामुखी अधिक लम्बी अवधि तक सुषुप्त अवस्था में पड़े हैं या वे सर्वथा विलुप्त हो गए हैं उनकी शक्ति विस्फोट कर सकने की बिल्कुल ही मिट गई है, इसे कह सकना कुछ कठिन ही होता है। जिनको मनुष्य बिल्कुल विलुप्त ही समझ बैठे होता है, वे किसी दिन गहरी निद्रा छोड़ कर जागृत हो उठते हैं। किन्तु हमें ऐसे ज्वालामुखियों की भी संख्या कम नहीं ज्ञात है जो यथार्थ में विलुप्त हो चुके हैं। उनके वाह्य रूप का भी लोप हो चला है अथवा इतनी अधिक अवधि पहले उभड़ कर वे विलुप्त हुए रहते हैं कि हम उनका कुछ भी चिह्न नहीं पाते।

इन सब ज्वालामुखियों के अतिरिक्त बहुत से ज्वालामुखी आधुनिक युग में विद्यमान हैं जिनमें से कुछ में तो सतत रूप से लावा या विस्फोटक पदार्थों अथवा भाप आदि का उभाड़ हुआ ही करता है और कुछ को ज्ञात काल में ही उभड़े होने का प्रमाण रहता है जिनके फिर उभड़ने की आशा की जा सकती हैं। ऐसे ज्वालामुखियों को जागृत ज्वालामुखी कहा जाता है। सतत उभाड़ करते रहने वाले ज्वालामुखियों में 'विस्फोटक रूप का ज्वालामुखी इटली का स्ट्राम्बोली ज्वालामुखी बहुत ही प्रसिद्ध है तथा लावा उभाड़ने वाले ज्वालामुखी में हवाई द्वीप के मौना-लोआ तथा किलोई बहुत ही प्रसिद्ध हैं। जब-तब उभाड़ करने वालों में इटली का विस्यूवियस ज्वालामुखी-इतिहास प्रसिद्ध है जिसके

उभाड़ों की आखों देखी कहानी दो सहस्र वर्षों तक की लिखित रूप में उपलब्ध है। आधुनिक काल में वर्तमान पीढ़ी के समय में ही जन्म लेने वाले मेक्सिको के पेरिकुटिन नामक ज्वालामुखी की कहानी चिरस्मरणीय है।

इस प्रकार हम ज्वालामुखी के उभाड़ के काल या अवधि की दृष्टि से तीन भेद पाते हैं जिनको (१) जागृत (२) सुप्त और (३) विलुप्त कह सकते हैं।

ज्वालामुखी का उभाड़ जिन प्रभावों से होता हैं वे पृथ्वी के गर्भ में उत्पन्न होते हैं। शक्ति-संग्रह कर लेने पर उस प्रभाव का फल उभाड़ रूप में प्रकट होता है परन्तु उसके उभड़ने प्रारम्भ होने के बाद ऊपर की तहों में स्थल है या जल है, इसकी कोई चिन्ता किए बिना ही वह ज्वालामुखी का रूप धारण कर सकता है। अतएव हम स्थल पर जहाँ अपने नेत्रों के सम्मुख ज्वालामुखी का उभाड़ देख सकते हैं वहाँ समुद्र में पानी के तल के नीचे समुद्री पेटे में भी ज्वालामुखी का उभाड़ हो सकता है। इन ज्वालामुखियों को समुद्रगर्भी ज्वालामुखी कहा जा सकता है। इनके प्रभाव से समुद्र की जल-राशि में भारी उथल-पुथल हो सकती है। लहरों का प्रभाव भीषण हो सकता है जिसे मार्ग में आने पर जहाज अनुभव कर सकते हैं। ऐसे ज्वालामुखियों से समुद्र के गर्भ में लावा के जमने से टीले या पठार भी बने हो सकते हैं, परन्तु हम इनका बहुत अधिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए समुद्र के गर्भ में प्रवेश नहीं पा सकते। अतएव इनका ज्ञान अधूरा ही है।

समुद्र के पेटे के नीचे की भूगर्भीय निचली तह से ज्वालामुखी उभड़ने वाली शक्ति को ऊपर की तह के ज्ञान रक्खे बिना ही उभाड़ने में समर्थ देखा जाता है तो समुद्र की गहराई पार कर जल के ऊपरी तल तक भी किसी समय लावा की राशि अपनी

पहुँच कर सकती है। वास्तव में समुद्र के पेटे में लावा की भारी राशि से टीला या पर्वत बनते-बनते उसका धीरे-धीरे पतला होता हुआ रूप ऊपर पहुँच कर ज्वालामुखी के मुखबंध अर्थात् कुंड के किनारों को या भीटों को चौरस या उठे रूप में रख कर द्वीप का निर्माण कर सकता है। इन्हें ज्वालामुखीय द्वीप नाम दिया जाता है। पैसिफिक महासागर में ऐसे द्वीपों की कमी नहीं है। हवाई द्वीप इस प्रकार के ही द्वीप हैं। एशिया महाद्वीप के पूर्वी तट पर स्थित द्वीपों की भी रचना ऐसे रूप की ही हो सकती है। हिन्द महासागर में ऐंडमन द्वीप-समूह ज्वालामुखीय लावा की ही देन कहे जा सकते हैं। हवाई द्वीपों में मौना लोआ ज्वालामुखी समुद्र तल से लगभग १५००० फीट ऊँचा है। समुद्रतल पर इसका फैलाव ४० मील के व्यास की गोलाई में होगा किन्तु समुद्र के पेटे में यह १०० मील के व्यास की गोलाई में होगा। यदि समुद्र के पेटे से इसके ऊपरी शिखर या मुख तक कुल ऊँचाई नापी जाय तो वह लगभग ३०००० फीट होगी। इस प्रकार लगभग ३ मील गहरे सागर में पेटे से ज्वालामुखी ने लावा का असीम भंडार उभाड़ कर धीरे-धीरे इसे समुद्रतल से भी ऊपर इतनी ऊँचाई तक पहुँचा दिया कि वह एक सुरक्षित स्थल खंड बना हुआ है। दो सहस्र मील चारों ओर तक विस्तृत महासागर का प्रसार होते हुए बीच भाग में यह प्रकृति की रचना अद्भुत है। आज भी मौना-लोआ के मुख का आखात या कुंड ८००० फीट के व्यास की गोलाई में फैला देखा जा सकता है जिसके किनारों पर ८०० फीट ऊँची चहारदीवारी सी प्रकृति ने उठा रक्खा है। इसका उग्र रूप अब भी कम नहीं हुआ है और यह लावा का भंडार पृथ्वी की कोख से ऊपर बह कर स्थल का खंड बढ़ाता जाता है। इस क्रिया को अब भी देख कर इसके ज्वालागर्मी होने या

ज्वालामुखी की शक्ति से उत्पन्न होने में कुछ भी संदेह नहीं रह जाता। जो दृश्य इतने विशाल रूप में देखने को मिलता है उसी के छोटे-छोटे अन्य नमूनों रूप में हम महासागरों के मध्य अनेक ज्वालामुखीय द्वीप विद्यमान पाते हैं।

लावा या विस्फोटक गैसों, भाप, धूल या ज्वालामुखीय ढोकों के उभाड़ की दृष्टि से भी ज्वालामुखियों के विभेद किये जाते हैं। कुछ ज्वालामुखियों में धड़ाका बिल्कुल ही नहीं होता। उनमें चुपचाप लावा ही निकलता है मानो धरती की निचली तह के मगमा के भण्डार से धरती के ऊपरी तल तक आ जाने का द्वार बिल्कुल खुला हो और पिछली तह को लावा रूप में ऊपर आ जाने तक कोई भी बाधा न पड़ रही हो। प्रायः इस रूप का उभाड़ भारी-भारी दरारों या कटानों में होने की बात देखी जाती है जिससे पूर्वकाल में विस्तृत क्षेत्रों में तथा आधुनिक काल में कुछ छोटे रूपों में आइसलैंड के दरार उद्गमीय लावा का उभाड़ देखा जा सकता है। इनसे भारी लावा-राशि दरार की दोनों दिशाओं में फैल-फैल कर सारी भूमि को एक ऊँचे पठार के रूप में बदल देती पाई जाती हैं। कुछ काल पश्चात् इस दरार या फटान में भी लावा के भर कर सूख जाने या अन्य रूप से भठ जाने से हम किसी समय धरती के फटने से लावा उभड़ने की बात भूल ही जाते हैं। परन्तु दरार या फटान को छोड़कर एक केन्द्रीय मुख से भी लावा की राशि उभड़-उभड़ कर भारी रूप धारण करती देखी जाती है। हवाई द्वीपों का नमूना इस क्रिया का ही है। किन्तु अन्य स्थलों पर भी हम लावा का शान्त रूप से उभाड़ होते भी देखते हैं। आजकल साधारण ज्वालामुखी ही हमें लावा का शांत रूप में उभाड़ करते दिखाई पड़ सकते हैं। दरार द्वारा भारी लावा-राशि के उद्गम का दृश्य भूत काल में ही हो सका था, जिनसे

बसाल्ट के पठार बन सकें। उन पठारों का कुछ रूप ही सुरक्षित रह कर हमें दिखाई पड़ता है। मूलत: जितने लावा की राशि उभड़ सकी होगी उसका कितना ही अंश प्रकृति की संहारक वायु, पानी, आदि शक्तियों से क्षीण हो चुका होगा।

भारी धड़ाका करने वाले ज्वालीमुखी का भयंकर नमूना हमें पूर्वी द्वीप-समूह के क्राकाटाऊ द्वीप के ज्वालामुखी के उभाड़ में देख सकते हैं जब लगभग सारे द्वीप का भाग उड़ कर आकाश में चला गया था। द्वीप के अधिकांश स्थल पर समुद्र ने स्थान ले लिया। समुद्र के अंदर लहर की भारी उठान से जावा में ३६०० मनुष्य मृत हो गये। पश्चिमी द्वीप-समूह के मार्टिनीक द्वीप के पेली ज्वालामुखी ने भी अपनी भयङ्करता इस वर्ग की ही उत्पन्न की जिसमें अमेरिका की सबसे बड़ी नदी मिसिसिपी द्वारा प्रति वर्ष समुद्र में ढो ले जाने वाली तलछट से भी ५०० गुनी अधिक चट्टानी धूल आकाश में उड़ गई और भाप धूल आदि की आँधी में संट पियरे नगर अपने २५००० नगरवासियों सहित स्वाहा हो गया।

इटली के नेपल्स नगर के निकट स्थित प्रसिद्ध ज्वालामुखी विस्यूवियस का उभाड़ भी सन् ७६ ई० में भारी धड़ाके के साथ ही हुआ था जिसकी भाप के पानी रूप में बनकर दहकती धूलों का कीचड़ बनाने से हरकुलेनियम नगर ही पूर्ण रूप से उसी में जमकर लुप्त हो गया था। विस्यूवियस के उभाड़ का आँखों देखा वर्णन प्लिनी नाम के एक व्यक्ति ने दो पत्रों में किया है जो किसी विद्वान् के पास लिखकर उस समय भेजे गए थे।

किन्तु इन दोनों रूपों के उभाड़ों का मिश्रित रूप भी देखा जाता है जिसमें पहले कुछ भाप, चट्टानी धूल, ढोके आदि उड़कर भारी विस्फोट करते हैं। किन्तु बाद में उसी में से लावा का भी

किसी समय उभाड़ होता दिखाई पड़ता है। विस्यूवियस ज्वाला-मुखी में ही सन् ७६ ई० का उभाड़ जहाँ इतना विस्फोटमय था, वहाँ बाद के उभाड़ों में लावा का ही उभाड़ पाया गया।

इन प्रकारों के ज्वालामुखियों का अध्ययन कर तीनों प्रकार के ज्वालामुखियों के अनेक रूपों को ध्यान में रखकर ज्वालामुखियों के कई भेद किए गए हैं, जिनका कुछ वर्णन नीचे दिया जाता है। कुछ विद्वान सात प्रकार के ज्वालामुखी बताते हैं। उनको इस प्रकार समझा जा सकता है :—

१. हवाईनुमा ज्वालामुखी—इनके मुख्य उदाहरण हवाई द्वीपों के मौना-लोआ और किलौई हैं। इनमें शान्त रूप का लावा का उद्गम होता है। किन्तु कभी-कभी विस्फोट भी।

२. स्ट्राम्बोलीनुमा ज्वालामुखी—इटली के समीप भूमध्यसागर के लिपरी द्वीप में स्ट्राम्बोली ज्वालामुखी के नाम पर इस भेद का नाम है। यह प्रायः २००० वर्ष से निरन्तर जागृत रहता आया है। इसके उभाड़ की क्रिया नियमबद्ध सी है। प्रति १० या १२ मिनट के पश्चात् वही लावा-राशि पिछले रूप में कुंड के ऊपरी किनारे तक उठ आती है। ऊपरी तल पर बुलबुले उठते हैं। वे कुछ कुछ धड़ाके के साथ फट पड़ते हैं। लावा की बूँदें, चूरे, पपड़ी के खंड (स्कोरी) आदि ऊपर फेंक दिए जाते हैं। इसके बाद लावा नीचे गिर कर दृष्टि से ओझल हो जाता है। कभी-कभी भारी धड़ाका होकर इस क्रमबद्धता में कुछ बाधा भी उपस्थित होती दिखाई पड़ती है।

३. मिश्रित उभाड़—अधिकांश ज्वालामुखी इस नमूने के हैं। इनमें टूटे-फूटे चट्टानी ढोंके, चूरे, धूल आदि का धड़ाके से उभाड़ होता है और कभी लावा भी निकलता है।
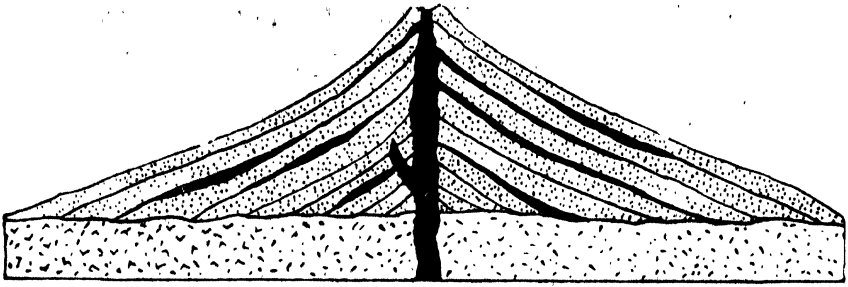
चित्र ४—मिश्रित उभाड़ के ज्वालामुखी का शंकु।

४. वल्कनतुमा ज्वालामुखी—लिपरी द्वीप-समूहों में ही एक द्वीप वल्कन नाम का है जिस पर उसी नाम का ज्वालामुखी है। उसके नाम पर इस वर्ग के ज्वालामुखियों का नाम पड़ा है। लावा बहुत ही चिपचिपा होता है। धड़ाके के बाद तुरन्त ही मुख पर पपड़ी पड़ जाती है। धड़ाके में निकलने वाली वस्तुएँ ही बाहर फेंकी जाती हैं। लावा निकलने का नाम भी नहीं पाया जाता।

५. पेलीनुमा ज्वालामुखी—पेली ज्वालामुखी के नाम पर इस वर्ग का नाम पड़ा है। ज्वालामुखी के कुंड का द्वार या गह्वर एक लावा की ठेपी से भर जाता है। नीचे की गैस के दबाव से वह ठेपी ऊपर उठ जाती है। ठेपी के अगल-बगल से गर्म भाप निकलती है। वह भाप ज्वालामुखी के ढाल के नीचे प्रलय की दहकती आँधी रूप में फैलती चलती है।

६. प्लिनीनुमा ज्वालामुखी—विस्यूवियस के प्रथम ऐतिहासिक उभाड़ का वर्णन हमें प्लिनी के पत्र से ज्ञात होता है अतएव इस वर्ग के नाम का कारण प्लिनी है। इस में लावा का नाम नहीं। एक बहुत ही प्रबल विस्फोट होता है। उसके पूर्व या पश्चात् छोटे-मोटे अन्य उभाड़ भी हो सकते हैं। बहुत ही भारी मात्रा में पदार्थों का विस्फोट होता है। पूर्वी द्वीप-समूह का क्राकाटाऊ, टंबोरो,

दक्षिणी अमेरिका के ग्वाटेमाला देश का संटा मेरिया तथा काटमाई नाम के ज्वालामुखियों का उभाड़ इस नमूने का था। लंबी अवधि के बाद उभाड़ होने से भारी धनजन-हानि होती है।'

७. अर्द्ध ज्वालामुखीय विस्फोट—इसमें ज्वालामुखीय प्रभाव के केन्द्र तक भूगर्भ में किसी प्रकार जल का प्रवेश होने पर उभाड़ होने का विश्वास किया जाता है। जापान के कुछ ज्वालामुखी इस प्रकार उभड़ते माने जाते हैं।

यदि अंतिम रूप को भी ज्वालामुखीय उभाड़ में गिनती की जाय तो उपर्युक्त सात प्रकार के ज्वालामुखियों का संसार में फैलाव देखा जाता है। ये विभेद अन्य ज्वालामुखियों का रूप परिचित कराने या उभाड़ के होने पर संक्षेप में ही उसका रूप समझा सकने के लिए किए गए हैं। इन विभेदों का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। केवल वर्णन के सुभीते से ही इनका वर्गीकरण पाया जाता है।

किसी ऊँची जगह से आटा या चीनी को बोरे के किसी छेद से गिरने दिया जाय तो नीचे गिरे पदार्थ का रूप जैसा हमें दिखाई पड़ सकता है, उसे हम ऊपर की ओर पतला और नीचे चौड़ा पाते हैं। चींटे की बिल के चारों ओर उसको नीचे से खोद-खोद कर कणों रूप में लाकर फेंकी मिट्टी भी ऐसा ही रूप धारण करती दिखाई पड़ेगी जिसमें बीच में ऊपर की ओर एक छिद्र बिल का द्वार होगा। यह आकार शङ्कु कहलाते हैं। ज्वालामुखी के विस्फोट में ढोकों, चूर्ण, धूल आदि रूप में जो वस्तुएँ ऊपर जाकर फिर नीचे गिर सकती हैं वे ऐसे ही खड़े रूप के ढाल का शङ्कु बनाएँगी। अतएव शुद्ध रूप के विस्फोटक या सूखे पदार्थ मुँह से बाहर फेंकने वाले ज्वालामुखी को अपना मुखबन्ध या भींटा बहुत ढालू खड़ी दीवार की तरह शङ्कु नुमा बनाते देख सकते हैं। इस तरह की सूखी ज्वालामुखीय वस्तुओं को 'टफ' नाम दिया जाता है।

छोटे या बड़े अथवा मिश्रित आकार के ढोंको, चूरों, धूल आदि के पृथक-पृथक या मिश्रित नाम भी हैं। इनमें भारी ढोंके मुख के किनारे के बिल्कुल ही निकट गिर कर स्थान पाते हैं। बाद में कुछ पतले ढोंके, चूरे आदि गिर कर फैलते जाते हैं। यह बालू
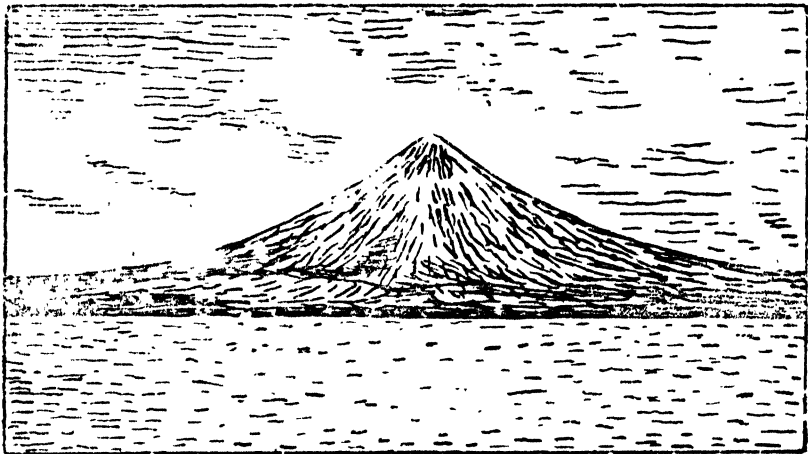
चित्र ५ –ज्वालामुखी चूर्णीय शंकु।

की दीवाल की तरह ही रचना कही जा सकती है जो बहुत दृढ़ नहीं हो सकती। आँधी पानी आदि का प्रकोप इनका क्षय करता रहता है। इस कारण अन्य उभाड़ न होने पर इनकी क्षति पूर्ति का द्वार बन्द होने से काया का लोप होना प्रारम्भ होने लग सकता है।

जो ज्वालामुखी मिश्रित उभाड़ के हैं उनमें इन तहों के बाद लावा की तह उभड़ कर उनपर अपनी दृढ़ तह जमाकर सुरक्षा का साधन उपस्थित करती है। इसी तरह दोनों प्रकार की तहें बारी-बारी जमती रह कर ज्वालामुखी के ढाल शङ्कु का दीर्घ और दृढ़ रूप बनाती हैं। ऐसे शङ्कुओं को स्तरीय शङ्कु कहा जा सकता है।

इन दोनों रूपों के अतिरिक्त शुद्ध लावा के उद्गम वाले ज्वालामुखी में हम शङ्कुओं का कुछ अन्य रूप ही पाते हैं। इसमें पतला लावा निकलने पर चारों ओर अपनी तह दूर तक फैलता जाकर एक सपाट पठार का ही रूप धारण कर सकता है। ऐसे भींटों को ढाल की भाँति चपटा होने से ढालनुमा भींटे या शङ्कु कहा जाता है। इनमें मध्य भाग में कुंड का रूप खड्ड रूप में पड़ा रह सकता है।

इस प्रकार ज्वालामुखी के भीटों या शंकुओं के आकार और रूप के ध्यान से तीन भेद देखे जाते हैं जो उनके उभाड़ के रूपों के अनुसार ही होते हैं। ज्वालामुखी के वर्णन में हमें इनकी चर्चा मिल सकती है।

ज्वालामुखी के मुख को कुछ चौड़े गड्ढे रूप में पाया जाता है जिसे हम तेल डालने वाली कीप के ऊपरी मुख की तरह समझ सकते हैं। निचली नली ग्रीवा या गर्दन होती है। ज्वालामुखी के मुख (कुंड) की चौड़ाई उसके वृहद या क्षुद्र आकार या ऊँचाई पर निर्भर नहीं होती। भारी आकार के ज्वालामुखी के कुंड को छोटा और छोटे आकार के ज्वालामुखी का कुंड बड़ा भी देखा जा

चित्र ६—ज्वालामुखी मुखसंबंधीय झील़ (बन्दरगाह रूप में परिणत)।

सकता है। हवाई द्वीप-समूह में एक द्वीप का हेली काला नाम का ज्यालामुखी लगभग १०,०० फीट ऊँचा है किन्तु उसका मुख

(कुंड) २० मील की परिधि में है। इसके विपरीत मैक्सिको का माउंट ओरिजाबा ज्वालामुखी १८००० फीट से भी ऊँचा है किन्तु मुख केवल १००० फीट व्यास की गोलाई में ही है। ये कुंड ज्वाला मुखी के विलुप्त या सुप्त हो जाने पर ग्रीवा के भठ जाने पर प्रायः एक भारी जलाशय का रूप धारण कर लेते हैं। एक ऊँचे पर्वत के शिखर पर ऐसा प्राकृतिक जलाशय बड़ा ही कौतूहलपूर्ण दृश्य होता होगा। ऐसे अनेक जलाशय आज विलुप्त या सुषुप्त ज्वाला-मुखियों के कुंड में विद्यमान पाए जा सकते हैं।

कुंड का रूप विस्तृत और कढ़ाहीनुमा होने से उसका नाम कढ़ाईनुमा पड़ जाता है। इनमें गहराई की अपेक्षा फैलाव अधिक होता है। कनारी द्वीप में एक कढ़ाईनुमा कुंड या मुख तीन-चार मील चोड़ा और दो-ढाई हजार फीट ऊँची चहार दीवारी समान ऊँची दीवाल से घिरा है। एक ओर ही इसे टूटे रूप में पाया जाता है। यह कुंड ला काल्डेरा नाम या कढ़ाहीनुमा नाम से प्रसिद्ध है। इस लिए अन्य कुंड भी समान रूप होने से यह नाम पाते हैं। कभी तो ज्वालामुखी का धड़ाका ही उसके शंकु का बहुत सा भाग काट फेंक कर विस्तृत कुंड का रूप देता है और कभी निचले भाग में से लावा बाहर निकल जाने से रिक्त स्थान होने पर ऊपर का अंश भर सा जाता है जो कढ़ाई का रूप कुंड को दे देता है। पुराने कच्चे कुएँ के भसने पर ऊपरी भाग ऐसा ही चौड़ा बना देखा जाता है। यही दशा ज्वालामुखीय कुंड का होता है। संसार में ऐसे कढ़ाईनुमा ज्वालामुखीय कुंड अनेक मिलते हैं।

ज्वालामुखियों का भौगोलिक वितरण

ज्वालामुखियों का फैलाव उन क्षेत्रों में ही होगा जहाँ धरती की निचली तहें तोड़ मरोड़ की क्रिया में पड़ी हों। पर्वत-मालाओं या उसी तरह के धरती पर स्थलीय या समुद्र-गर्भी उभड़े भागों की रचना ऐसे भूगर्भीय स्तरों के तोड़मरोड़ के स्थान पर होती है। धरती की पपड़ी में निचली तहों के तोड़-मरोड़, उलट-फेर, उथल-पथल के जो क्षेत्र होंगे उन्हीं में ज्वालामुखी और भूकम्प की क्रियाओं का प्रादुर्भाव हो सकेगा। बिल्कुल ठीक-ठीक कारण का पता न होने पर भी प्रायः इन्हें समुद्र-तटों, पर्वत-मालाओं या इसी तरह के अन्य स्थलों में होना पाया जाता है। यह समझना भूल ही हो सकती है कि भूकंप और ज्वालामुखी दोनों के एक ही कारण हैं, और बिल्कुल समान स्थल पर ही इनके उभाड़ होते हैं। हम जापान में ज्वालामुखी को जहाँ स्थल की ऊँची रीढ़ या पठारीय भाग से बने खंड में उभाड़ देखते हैं, वहाँ भूकम्प उठने के केन्द्र उसके पूर्ववर्ती समुद्री महागर्त्त में समुद्र के भीतरी पेटे में पाते हैं। इसी प्रकार अपने देश में ही हम हिमालय की तराई, आसाम आदि में भूकम्प तो उत्पन्न होते देखते हैं, परन्तु ज्वालामुखी का उभाड़ नहीं देखा जाता।

अतएव ज्वालामुखियों के कारण जो भी हों, हम उनके संसार में फैलाव का विवरण देते समय यह कह दे सकते हैं कि उनमें से अधिकांश स्थल भूकम्प के भी क्षेत्र हैं। एक बात और भी है।

आज ज्वालामुखी के जो क्षेत्र है, वे पहले भी ऐसे ही क्षेत्र थे या नहीं, यह कहना तो बड़ा ही कठिन है, क्योंकि किसी नए ज्वालामुखी को समुद्र-तल से ऊपर उठते या धरातल पर बनते देखकर तो उसकी आयु बताई जा सकती है, परन्तु किसी अनदेखे रूप में ही किसी काल में उत्पन्न हुए ज्वालामुखी का मुख, मुखबन्ध, ग्रीवा आदि देख कर उसकी आयु का कुछ भी ज्ञान नहीं हो सकता। किन्तु इसके विपरीत हमें यह बात निश्चित रूप से ज्ञात है कि धरती पर आज से अत्यन्त पूर्व के कालों में अनेक ऐसे स्थलों पर ज्वालामुखी के छोटे या बड़े ऐसे उभाड़ अवश्य हुए जिनके चिन्ह आज भी विद्यमान हैं। ज्वालामुखी के मुख से निकले लावा के धरातल के ऊपर जमने पर जो रूप होता है, वह धरती की कोख में उन्हीं पदार्थों के जमने पर नहीं होता। खुले रूप में होने पर दहकता लावा शीघ्र ठंडा हो जाता है किन्तु भीतर की तहों में ढका रहने पर अधिक दिनों में ठंडा हो सकता है। शिला के खौलते हुए द्रव पदार्थ के शीघ्र जम जाने से या तो रवे बिल्कुल ही नहीं बनते या बहुत ही छोटे रूप के बन पाते हैं। रवा या मणिभ एक प्राकृतिक रचना है जो अपनी उत्पत्ति की एक विचित्र ही कहानी रखती है। किसी निर्धारित तापमान पर निर्धारित समय तक पड़े रहने पर ही इनकी उत्पत्ति होती है। उसमें व्यतिक्रम होने पर रवा हीन या मणिभ हीन रूप ही बनता है। शिला के पिघले पदार्थों को अपनी ऊपरी तहों पर झागनुमा तह के दृढ़ बन जाने से कुछ सुरक्षा का साधन आंशिक रूप में मिला होता है तो वह छोटे रवे बना लेने का अवसर पाती होगी। इस तरह की कितनी ही मोटी तहें एक के ऊपर एक जमते जाकर एक मोटी तह बना लेती होंगी। किन्तु जब धरती के तल-निर्माण की शक्तियों ने क्षय या निर्माण के कार्यों में हाथ लगाना प्रारम्भ

किया तो ज्वालामुखी के उग्ररूपों का काम समाप्त होने पर उन तहों पर समुद्र का जल कभी पहुँचने का अवसर होने से तलछटीय तहें बननी प्रारम्भ हुई। इन तहों के निर्माण के काल ज्ञात हो सकते हैं। अतएव युग-युग की बनी ऐसी तहों के बीच में कहीं पतली या मोटी ज्वालामुखीय लावा की तहें विद्यमान ज्ञात होती हैं तो ऊपर और नीचे की तलछटीय तहों के निर्माण युग को जानकर उस युग में उस क्षेत्र में ज्वालामुखी के प्रभाव दिखाने का प्रमाण प्राप्त हो जाता है।

इस तरह के प्रमाणों से भिन्न-भिन्न युगों की करोड़ों वर्ष पुरानी ज्वालामुखी तहों का ज्ञान प्राप्त होता है। इनको देख कर ज्ञात होता है कि आज से करोड़ो ही वर्ष पूर्व धरातल पर ऐसे क्षेत्रों का स्थान बदलता रहा। पचासों कोटि वर्ष पूर्व कदाचित् ज्वालामुखी या धरती की फटान द्वारा लावा निकलने की क्रिया अधिक होती रही होगी। बाद में कुछ कम होने लगी होगी और स्थान भी बदल गए होंगे। अटलांटिक महासागर के तटीय स्थानों में भी कभी ज्वालामुखी के ऐसे उभाड़ों का अनुमान किया जाता है। आज से ६ करोड़ वर्ष पूर्व मध्य योरप, दक्षिण भारत तथा उत्तरी महासागर आदि में ज्वालामुखियों के भयंकर प्रकोप की बात देखी जाती है। किन्तु इस बातों की अब कहानी ही रह गई है। अटकल से ही उनका प्रादुर्भाव होना कहा जा सकता है।

प्राचीन काल के ज्वालामुखियों का नाम भी मिट कर उनके प्रभाव का जो चिन्ह धरती पर रह गया है उसके अतिरिक्त अपना कुछ रूप सुरक्षित रखने वाले विलुप्त ज्वालामुखियों की संख्या भी कई सहस्र होगीं जिनमें सुप्त ज्वालामुखियों को भी गिन सकते हैं। परन्तु जागृत ज्वालामुखियों को भी पाँच या छः सौ की संख्या

में पाया जा सकता है। इन ज्वालामुखियों के फैलाव का क्षेत्र हम प्रशान्त (पैसिफिक) महासागर के पूर्वी और पश्चिमी दोनों छोर की ओर अधिक पाते हैं जो एक भारी चक्कर सा बनाए ज्ञात होते हैं। उत्तर के बेरिंग सागर से इनको प्रारंभ माना जाय तो इनकी पंक्तियाँ दो ओर फैल कर अमेरिका और एशिया के तटीय भागों की ओर दक्षिण की ओर तक पहुँचती दिखाई पड़ती हैं। दक्षिणी ध्रुव के शीत महादेश का कुछ ज्ञान प्राप्त नहीं हो सका है अतएव यह कहना कठिन है कि ये दोनों पंक्तियाँ फिर बेरिंग की तरह के ही किसी स्थान पर संयुक्त होती हैं या नहीं। एक विचित्रता और भी है कि जहाँ दोनों अमेरिकाओं के तटवर्ती पर्वतों के अंचल में ज्वालमुखियों का उद्गम देखा जाता है, वहाँ एशिया महादेश में पूर्वी तट पर इस प्रकार की कोई पर्वत-शृंखला तटवर्ती नहीं पाई जाती और ज्वालामुखी उन तटों से कुछ दूर पूर्व समुद्र में स्थित द्वीपों की शृंखला में ही फैले दिखाई पड़ते हैं। उत्तर के कमचटका प्रायद्वीप से ज्वालामुखी का क्रम प्रारंभ देख कर हम फिर एशिया के पूर्वी तट के समानान्तर स्थित द्वीपों में जापान, फारमोसा, फिलीपाइन, मलक्का, बोर्नियो आदि पूर्वी द्वीप-समूह से होकर न्यूजीलैंड और दक्षिणी विक्टरीलैंड आदि तक फैला देखते हैं। अमेरिका की ओर जाने वाली पंक्ति में अल्यूशियन द्वीप-समूह से लेकर दक्षिण-पश्चिमी अलास्का प्रान्त तक ज्वालामुखी का क्षेत्र है किन्तु इसके दक्षिण कोलंबिया प्रान्त में ज्वालामुखी का नाम भी नहीं। फिर दक्षिण की ओर आगे बढ़ने पर तटवर्ती स्थानों में दक्षिण अमेरिका तक ज्वालामुखी के क्षेत्र मिलते हैं। इस प्रकार बीच के कुछ स्थानों को छोड़ कर अलास्का में उत्तर से प्रारम्भ होकर दक्षिण में हार्न अन्तरीप तक यह द्वितीय ज्वालामुखीय पंक्ति फैली है। उत्तरी अमेरिका के तटीय क्षेत्रों के पश्चात् मेक्सिको

मध्य अमेरिका होकर दक्षिणी अमेरिका की प्रसिद्ध एंडी पर्वत-श्रेणी के ज्वालामुखी इसी पंक्ति में हैं।

इन दोनों पंक्तियों के मध्य पैसिफिक महासागर के बीच में भी ज्वालामुखियों की पर्याप्त संख्या है जो अपने ऊपरी शिखर या कुंड को समुद्र-तल से ऊपर उठाए द्वीप का रूप धारण किये हुए हैं। इनके भीटों या शंकुओं के ऊपरी तलों पर मनुष्य, पशु-पक्षियों आदि का निवास होता है। वास्तव में मूँगे के द्वीपों को छोड़ कर शेष सभी द्वीप ज्वालामुखीय ही हैं।

एक तीसरी पंक्ति पूर्व-पश्चिम की दिशा में मध्य अमेरिका से प्रारम्भ होती है। उसके पूर्वी तट के अटलांटिक महासागर में द्वीपों की माला सी फैली हुई ज्वालामुखियों को आश्रय देती है। उनसे आगे पश्चिमी द्वीप-समूह से होती हुई यह पंक्ति एजोर द्वीप, कनारी द्वीप, केपवर्डी द्वीप-समूह, आदि होकर भूमध्य सागर में होती हुई इटली, सिसली आदि में पहुँचती है। वहाँ से भी आगे पूर्व की ओर एशिया माइनर, लाल सागर हो कर हिन्द महासागर के तटवर्ती द्वीपों से होकर पूर्वी द्वीप-समूहों में सुमात्रा, जावा आदि होकर पैसिफिक महासागर की एशियाई पंक्ति को काट कर पैसिफिक महासागर में घुस जाती है।

पैसिफिक महासागर में संसार के सम्पूर्ण जागृत ज्वालामुखियों में से तीन पंचमांश पाए जाते हैं। अटलांटिक महासागर में तटवर्ती भाग में केवल मध्य अमेरिका के ज्वालामुखी को छोड़ कर किनारों पर कहीं भी ज्वालामुखियों का अस्तित्व नहीं पाया जाता। उत्तर में केवल आइसलैंड में कुछ अंतिम रूप के ज्वालामुखी के बचु-खुचे रूप पाए जाते हैं अन्यथा अन्यत्र इनको नहीं देखा जाता। थोड़े से द्वीपों की माला जहाँ-तहाँ इसका उभाड़ कर मध्य अमेरिका से भूमध्यसागर तक एक टूटी-फूटी पंक्ति-सी

बतानी दिखलाती है। इनके अतिरिक्त हम कुछ स्फुट रूप में या छोटी पंक्तियों रूप में भी ज्वालामुखी पाते हैं। पूर्वी अफ्रिका में उत्तर-दक्षिण दिशा में एक ऐसी पंक्ति मिलती है किन्तु इसके ज्वालामुखी विलुप्त होते जान पड़ते हैं। इसी तरह एक पंक्ति पूर्वी द्वीप-समूह से हिन्द महासागर में ऐंडमन द्वीप समूह होकर बर्मा तक फैली ज्ञात होती है।

इन वर्णनों को देख कर हमें यह शंका हो सकती है कि शायद समुद्र-तटीय स्थानों में ही ज्वालामुखियों का प्रादुर्भाव हुआ करता है परन्तु पूर्वी अफ्रिका के ५ ज्वालामुखी तट से २०० से लेकर ५०० मील तक दूर हैं तथा एक ज्वालामुखी हिन्द महासागर के तट से ८०० मील दूर स्थित है। अठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में मंचूरिया में समुद्र-तट से ५०० मील दूर एक ज्वालामुखी उभड़ने की बात देखी गई थी। पुराने ज्वालामुखियों में हम अमेरिका के उटाएरिज़ोना, और न्यू मेक्सिको के ज्वालामुखी क्षेत्रों को पैसिफिक महासागर के तट से १००० मील दूर होने का प्रमाण पाते है। दक्षिण भारत के प्राचीन ज्वालामुखी का उभाड़ भी दरार रूप में समुद्र तट से दूर तक के क्षेत्रों में भी अवश्य ही हुआ होगा।

———

दक्षिण भारत का भूबंध

दक्षिणी भारत के जिस भू-भाग पर ज्वालामुखीय प्रभाव की विस्तृत तहें फैलकर धरातल का निर्माण करती हैं उसे दक्षिणी भारत का भूबंध (डेकेन ट्रैप) नाम दिया गया है। दक्षिणी भारत के पठार का उत्तर-पश्चिमी भाग इस रूप का पाया जाता है। इसके तल या ज्वालामुखीय उभाड़ों की तह का निर्माण काल भूगर्भ विज्ञान के इतिहास में तृतीयक युग (टर्टियरी) का प्रारम्भ है जो आज से ६ या ७ करोड़ वर्ष पूर्व प्रारम्भ हुआ होगा। इसी युग का प्रथम खंड इओसीन काल कहलाता है। इस युग के प्रारंभ में संसार में कैसी उथल-पुथल रही होगी, क्या अवस्था रही होगी, इसका चित्रण डा० बीरबल साहनी ने अपने १९४० ई० के विज्ञान कॉंग्रेस, मद्रास के भाषण में निम्न रूप से किया था :—

"प्रामाणिक विद्वान तृतीयक युग का प्रारंभ ६ या ७ करोड़ वर्ष पूर्व बतलाते हैं। यह बहुत ही यथार्थ अर्थ में एक नए युग का जन्म है। महाविकराल शक्तियाँ, धरती की कोख में विलोड़ित होकर धरती की पपड़ी में विशाल भू-विदीर्णता उत्पन्न कर चुकी थीं। और ये विदीर्णताएँ समुद्र तल में मुख विस्फारित कर रही थीं। पपड़ी के अन्य छोटे भूविस्फारणों (फिशर) से लावा की पुनर्वार बाढ़ रूप में पिघला पत्थर उभड़ रहा था जो लाखों वर्ग मील भूमि और समुद्र को घेर सका होगा। ज्वालामुखीय चूर्ण की वर्षा से विस्तृत भूमि अनुर्वर हो रही थी। उच्च ज्वालामुखीय

पठार की मुख्य विशेषता रखकर एक नया भूतल निर्मित हो रहा था। भूतल का रूप वेग से परिवर्तित हो रहा था, वह वनस्पतियों का एक विशेष आधुनिक परिधान धारण करने लगा। सरिताएँ, तड़ाग तथा स्थल हम लोगों से अधिक परिचित रूप के जन्तुओं से आकीर्ण होने लगे। फिर भी उस समय मनुष्य का कहीं पता नहीं था। इस हलचल पूर्ण काल से समुद्र के मध्य से महानतम पर्वतश्रेणियों के जन्म होने का आभास मिलता था और भारत के उत्तर में कहीं धरती की विक्षुब्ध कोख मनुष्य का आदि जन्म-स्थल होने वाली थी।

"इस प्रकार का इओसीन काल था—यह यथार्थतः नवयुग का उषाकाल था।"

दक्षिण भारत का उत्तर-पश्चिमी भाग जहाँ ज्वालामुखीय प्रभाव से इस युग की रचना बनकर दक्षिण-भारतीय भूबंध नाम से ज्ञात है, वहाँ पठार के पूर्वी और दक्षिणी भाग उस पुरातन युग की रचना हैं जिसे धरातल का आदि निर्माण-काल कहा जा सकता है और उसकी आयु एक अरब वर्ष से भी पूर्व की होगी। इन वातावरणों का स्मरण कर डा० साहनी ने दक्षिणी भूबंध की विशद चर्चा करने का जो प्रयत्न किया है, वह विशेष उल्लेखनीय है। उन्होंने अपने भाषण में कहा था :—

"दक्षिण-भारतीय प्रायद्वीप के पूर्वी और दक्षिणी भाग अधिकांशतः बहुत ही अधिक प्राचीन काल की शिलाओं से निर्मित हैं। यथार्थतः ऐसी शिलाएँ ही महाद्वीपों के भूखंड की आधार-भूमि निर्मित करती हैं।

"दक्षिणी पठार के मध्य और पश्चिमी भाग का दृश्य बिल्कुल दूसरा ही है।......अनेक स्थलों पर नवीनतर चट्टानें पुरातन आधार के तलभंजित तल पर आधारित मिलती हैं......बहुत दिनों

की निस्तब्धता के पश्चात् धरती के अंतर्भाग से फट पड़ी हुई ज्वालामुखीय शक्ति लावा की बाढ़ रूप में इतने विकराल रूप में उभड़ी जितनी न तो कभी भूतकाल में ही दिखाई पड़ी थी और न उसके पश्चात् ही दिखाई पड़ी।

"इस काँग्रेस के जिन प्रतिनिधियों ने उत्तर से बम्बई या नागपुर होकर यात्रा की होगी उन्होंने अवश्य ही लंबी नीची चपटे शिखर की पहाड़ियाँ देखी होंगी जो देश के उस भाग के अधिकांश खंड के दृश्य का मुख्य भाग बनाती हैं जो नर्मदा और ताप्ती नदियों तथा
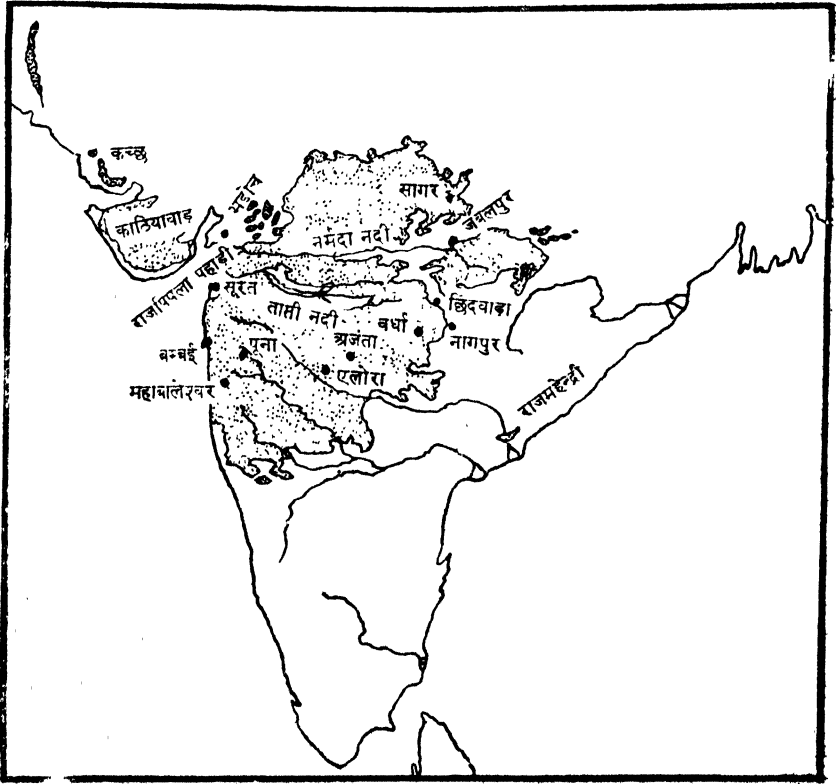
चित्र ७—दक्षिण भारतीय भूबंध।

गोदावरी और कृष्णा के ऊपरी स्रोतों द्वारा प्रस्रवित होती है। इस रूप का ही दृश्य काठियावाड़ तथा कच्छ तक प्रसारित है। और कम से कम नर्मदा के उत्तर २०० मील तक विस्तृत है। बम्बई से पूना जाने वाली रेलवे लाइन पश्चिमी घाट को पार करते हुए भिन्न-भिन्न ऊँचाइयों पर अवस्थित टीलों की एक शृंखला में कटी हुई घाटियों के मध्य से होकर जाती है, जो एक विशाल सीढ़ी के अवशिष्ट भाग समान हैं। ये टीले उस लावा की क्रमागत तहों के खुले तल हैं जो कुछ अवधियों के अंतर से रह-रहकर उभड़ी थी जो कई सहस्रों वर्ष तक फैली घटना होगी तथा जो पश्चिमी तट पर ६ से १० हजार फीट तक मोटी बन सकी थी।

"यहाँ विस्यूवियस की भाँति के ज्वालामुखी नहीं थे। साधारणतया धरती के विदीर्ण तल से चुपचाप ही लावा उभड़ रहा था। किन्तु ये विदीर्ण तल सैकड़ों गज चौड़े और देश में मीलों तक फैले थे, उनके दाएँ-बाएँ ओर टेढ़े-मेढ़े दरार भी शाखा रूप फटे पड़े थे। जिन सब में लावा के दहकते रूप उमड़ रहे थे। भड़ोंच के निकट राजपिपला पहाड़ी, कच्छ तथा काठियावाड़ तथा पश्चिमी भारत के कुछ अन्य भागों में इन पुराने विदीर्ण तलों में से कुछ अब भी पहचाने जा सकते हैं, जिनके भीतर लावा जमी हुई भित्ति रूप में पाया जाता है।

लौह की प्रचुरता से दक्षिणी भारत के लावा में ऐसी तरलता होती थी कि वह विलम्ब से जमता था। वह लगभग पानी की ही भाँति प्रवाहित होता था तथा स्थल खंड के खड्डों को भर देता और शीघ्रतापूर्वक धरातल पर चादर की भाँति मीलों तक फैल जाता, तब कहीं जम पाता जिसे हम बसाल्ट या भूबंधीय शिला नाम देते हैं। अपनी प्रलयंकारी यात्रा में यह दहकती बाढ़ भूमि को झुलसा

देती और धरातल की सब हरियाली उदरस्थ कर लेती। स्वयं धरती ही अग्निमय बन गई थी।

सरोवर तथा बापियाँ जल-तल के ऊपर लावा प्रवहमान होने से उबल उठती थीं। जहाँ-तहाँ किसी जल-धारा का वेग अवरुद्ध हो जाता और उसका जल एक अस्थायी जलाशय में परिवर्तित हो जाता। फिर यह कोई नया मार्ग पाकर या बनाकर किसी नई दिशा में प्रवाहित हो जाता अथवा दूसरे उभाड़ में अग्नि के प्रकोप से इसका भी अन्त हो जाता। बड़ी-बड़ी नदियाँ इतना शीघ्र अपना मार्ग अवरुद्ध न पाकर अपने पुराने मार्ग पर प्रवाहित होती रहतीं। कोई लावा की तह मार्ग में जम गई होती तो उसे काट कर वे अपना मार्ग बना लेतीं। किन्तु उभाड़ होने जारी रहे, स्थान-स्थान पर समय-समय पर होते ही रह कर बड़े विस्तृत क्षेत्र में फैल सके। मूल रूप में कदाचित् १० लाख वर्ग मील तक राजमहेन्द्री से कच्छ तक तथा धारवार के निकट से झाँसी तक फैले थे। पिछले लावा की तह के ऊपर तह जमती, तथा पठार की पुरानी नींव सहस्रों फीट नीचे पड़ गई। करोड़ों वर्ष के तल-भंजन के पश्चात् भी दक्षिण भारत के भूबन्ध का विस्तार आज दो लाख वर्गमील में है।

आप नागपुर से बम्बई की ५०० मील दूर की यात्रा ज्वालामुखी शिला पर से अपना पग हटाये बिना ही कर सकते हैं।.........

यह कहना कठिन है कि दक्षिण भारतीय भूबंध के विस्तृत क्षेत्र में पहले आग्नेय प्रक्रिया का कहाँ प्रारंभ हुआ। नागपुर छिंदवाड़ा क्षेत्र के लावा अवश्य ही सबसे प्रथम उभाड़ के परिणाम होंगे और जहाँ तक हमारा आधुनिक ज्ञान है, इस शृङ्खला की सबसे अधिक ऊँचाई का उभाड़ मलाबार पहाड़ी और बोर्ली में बंबई नगर में पाया जाता है। ऐसा ज्ञात होता है कि उभाड़ दक्षिणी

भारत के पूर्वी भाग से प्रारंभ होकर पश्चिम की ओर बढ़ा किन्तु इसे हम निश्चित रूप से नहीं कह सकते। यह प्रकट करने वाली कोई वस्तु नहीं है कि उभाड़ का प्रारंभ अनेक स्थानों पर दूर-दूर एक ही समय प्रारंभ नहीं हुआ।

लावा की धारा मुटाई में कुछ फीटों से लेकर सौ फीट तक की विभिन्न रूप की पाई जाती है। एक धारा के ऊपर जब दूसरी धारा जम जाती थी तो वह पुराने विदीर्ण तल को भर देती थी। बाद में होने वाले उभाड़ को इस नई पूरी तह को तोड़-फोड़ कर ऊपर आना पड़ता था। बड़ा ही भीषण उभाड़ होता था। एक नया विदीर्ण तल उत्पन्न होता अथवा पुराना विदीर्ण तल ही अधिक विस्फारित हो जाता। इस मृत्यु-मुख में बिजली की भयानक कौंध उठ पड़ती। आग बरस पड़ती, धुएँ, और ज्वालामुखीय चूर्ण का उभाड़ मीलों ऊपर आकाश में हो जाता मानो आकाश पर ही आक्रमण हो।

चूर्ण फिर नीचे आता, विदीर्ण तल के चारों ओर प्रज्वलित लावा की तह पर बरस पड़ता। कदाचित् उससे कहीं इधर कहीं उधर कोई टीला बन जाता अथवा भूतल की हरियाली के ऊपर ही इसकी तह उसे झुलसा कर बिछ जाती। पश्चिमी भारत में ज्वालामुखीय चूर्ण की अनेक तहें भरी पड़ी हैं उदाहरणार्थ पूना तथा महाबलेश्वर में ऐसी तहें विद्यमान हैं। यहाँ पर अवश्य ही उभाड़ केन्द्र होंगे।"

———

नवीन ज्वालामुखी

जागृत ज्वालामुखियों के उभाड़ का दृश्य तो हम जब-तब अनेक स्थानों में और अनवरत रूप से कुछ निश्चित ज्वालामुखियों में देखते रहते हैं। किन्तु हमें यह जानने की भी उत्सुकता रह सकती है कि क्या वर्तमान काल में नए ज्वालामुखियों का उदय नहीं होता है। क्या ऐसी शक्ति का अब लोप हो गया है और पहिले के उत्पन्न ज्वालामुखियों में ही उभाड़ हो सकता है। इन बातों का उत्तर आँखों देखे नवीन ज्वालामुखियों के जन्म के वर्णन से ज्ञात हो सकता है। स्थल पर तो हम ज्वालामुखी को उसी समय जन्म लेकर उभड़ा समझ सकते हैं जब समतल चौरस भूमि में ही आग, धुआँ आदि का अचानक उभाड़ होना प्रारम्भ हो जाय, परन्तु उसका प्रारम्भ भीतरी तहों में पहले से ऐसा रहता होगा। इसी प्रकार समुद्र में भी हम पहले से कहीं ऐसी शक्ति के काम करते रहने का ज्ञान न प्राप्त कर उसका जन्म उसी समय समझ सकते हैं जब उसका प्रभाव लहरों के साथ आग धुआँ आदि उभड़ पड़ते या इन दृश्यों के साथ नया द्वीप बनते दिखाई पड़े। ऐसा नए द्वीपों का जन्म वर्तमान युग में भी देखने को मिल सका है।

सन् १८१६ ई० में बंगाल की खाड़ी में बैरेन द्वीप का जन्म समुद्री ज्वालामुखी के प्रसाद से हुआ था। इसी तरह अलास्का के निकट अल्यूशियन द्वीप-समूहों के उत्तर में बोगोस्लोफ नाम का द्वीप सन् १७९६ ई० में उत्पन्न हुआ। इसमें सन् १८२३ ई० तक जब-तब उभाड़ होता रहा। सन् १८८३ ई० में फिर एक दूसरा नया द्वीप उत्पन्न हुआ जिसका नाम नवीन बोगोस्लोफ रक्खा गया।

२८ मई सन् १६०६ ई० को इन दोनों ही के मध्य एक तीसरे वृहद् द्वीप का जन्म हुआ उसमें अनेक ज्वालामुखीय कुंडों से भाप धुआँ आदि निकलते रहने का प्रत्यक्ष दर्शन किया जा सका।

इन सबसे अधिक स्पष्ट उदाहरण भूमध्य सागर में एक द्वीप उत्पन्न होने का है। सिसली द्वीप के दक्षिण-पश्चिम की दिशा में सन् १८३१ ई० में एक नया द्वीप समुद्र-तल के ऊपर दिखाई पड़ा। उस स्थान पर के समुद्र की गहराई की नाप कुछ समय पहले ही ली गई थी जिसे १०० फैदम (६०० फीट गहरा) पाया गया था। सिसली की नौसेना के एक जहाजी कप्तान ने उस स्थान पर इस उभाड़ का दृश्य अपनी आँखों देखा। कुछ सप्ताहों ही में वहाँ समुद्र तल पर १ मील व्यास के घेरे का शंकु या भींटा बना जो २०० फीट ऊँचा हो सका।

आँधी में गिरे आमों को छीन-झपट ले जाने वाले व्यक्तियों की कमी नहीं रहती। इसी तरह इस नवजात द्वीप के नाम-धाम
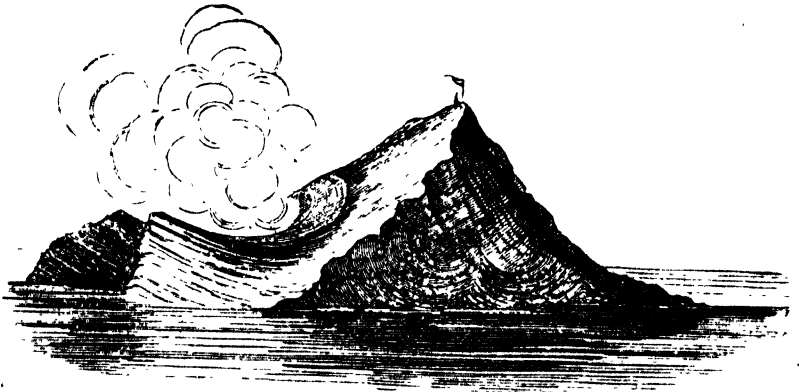
चित्र ८—जुलाई, अगस्त १८३१ में भूमध्य सागर में उभड़ा द्वीप (ग्राहम द्वीप)।

और स्वामित्व के विषय में भी अनेक राष्ट्र अपना-अपना अधिकार

बताकर घोर विवाद करने लगे। कोई निर्णय होने की आशा नहीं दिखाई दे रही थी कि एक दिन उसकी स्वामिनी समुद्री लहरों ने अपने चपेट में उसका स्थल-खंड विनष्ट कर उसे अपनी कोख में छिपा लिया। इस तरह इस नए द्वीप का अस्तित्व तो मिट गया किन्तु कहानी रह गयी। उसी को हम भी कह कर संतोष कर लेते हैं। संसार अब इस अज्ञात ग्राम अस्तित्वहीन द्वीप को ग्राहम द्वीप नाम से पुकारता है।

यूनान के द्वीप-समूहों में एक द्वीप-समूह सैंटोरिन नाम से प्रसिद्ध है। इसमें चौहद्दी की भाँति किनारे-किनारे के द्वीप कदाचित किसी पुराने द्वीप के बचे खुचे भाग हैं, परन्तु इनके मध्य में अनेक द्वीप हैं जो ज्वालामुखीय प्रभाव से दूसरी शताब्दी से लेकर उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य उभाड़ों के होने से जब-तब उत्पन्न होते गए। इनमें अंतिम उभड़े द्वीपों में एक सन् १५७३ ई० में दूसरा १७०७ ई० में तथा सब से बाद में तीसरा सन् १८६६ ई० में उत्पन्न हुआ।

द्वीपों की कथा छोड़ कर नए ज्वालामुखियों के स्थल पर उत्पन्न होने का वर्णन बड़ा कौतूहलपूर्ण है। मेक्सिको में जहाँ कोई किसान किसी समय अपने खेत जोत कर फसल खड़ी करता था वहीं ज्वालामुखी ने अपने उत्पन्न होने का स्थल बनाया। ऐसा एक दृश्य सन् १७५६ ई० में देखने को मिला। इस नवीन ज्वालामुखी के उत्पन्न होने का दृश्य उस भाग के सरकारी अमीन ने स्वयं अपनी आँखों देखा और उसका उल्लेख मेक्सिको के वाइसराय के पास लिख भेजा।

मेक्सिको के पठार के दक्षिणी ढाल पर एक उर्वर मैदान था जो टोलुका और कोलिया नाम के ज्वालामुखियों के मध्य में स्थित था। यहाँ की भूमि इतनी उपजाऊ थी कि उसे स्थानीय किसान

स्वर्ग भूमि कहते। जोरूलो शब्द इसी अर्थ का द्योतक है। इसी मैदान में जहाँ से ३५ मील दूर तक ज्वालामुखी का कोई कुंड नहीं था, २६ सितम्बर, १७५६ ई० को एक नये ज्वालामुखी की दरार रूप की पंक्ति उठ खड़ी हुई जिसमें अनेक छोटे-छोटे मुख या कुंड उत्पन्न दिखाई पड़े। पूर्व सूचना के रूप में जून मास में ही धरती के नीचे कुछ ध्वनियाँ जब-तब उठनी प्रारम्भ हुई जो किसानों को चौंका देती। कुछ दिन इसी प्रकार का क्रम चलता रहा। अन्त में २७ सितम्बर को ध्वनियों की कर्कशता बहुत बढ़ गई। साथ ही धरती ने काँपना भी प्रारम्भ किया। दस दिन तक यह भूकम्प जारी रहा। इसी बीच २६ सितम्बर को प्रातःकाल ३ बजे ही एक खाईं के पेंदे से घना धुआँ उठा, बाद में गड़गड़ाती लपट निकली। धुएँ रूप की भाप जमकर पानी बरसाने लगी, धरती के ऊपर फटी दरार से निकली धूल रेत आदि उस पानी में सनकर कीचड़ की दहकती नदी बहा ले चली। दिन के समय सारी भूमि उजाड़ हो गई, मकान धस गए, खेतों में कीचड़ की वर्षा ने बर्बादी खड़ी कर दी। दो तीन दिनों के पश्चात् इतनी भयंकर दहकती राख की वर्षा हुई कि ५ मील दूर के एक गाँव के लोग भी घर-बार छोड़ भाग खड़े हुए, आँधी ने ५० मील दूर तक इस राख को पहुँचा दिया। लावा के दहकते बमगोले और राख की वर्षा निरन्तर होने लगी। १४ अक्तूबर को भाप और कीचड़ का उभाड़ तो बन्द हो गया किन्तु सूखी राख उभड़ती रही। भूकम्प वेग से होने लगा। घोर अँधेरा छा गया। वर्षा का वेग बहुत बढ़ गया। इन दैवी विपत्तियों को देखकर कोई दर्शक साहस रखकर उन क्षेत्रों में नहीं रह सकता था। अतएव सरकारी अमीन ने भी उस स्थल को छोड़ दिया। इस कारण आगे के दृश्यों का आँखों देखा वर्णन १३ नवम्बर के पश्चात् सुलभ नहीं है। किन्तु

उस समय तक एक ज्वालामुखीय शंकु ८२० फीट ऊँचा बन गया था।

यह ज्वालामुखी जोरुलो नाम से ज्ञात है। इसमें सन् १७७५ ई० तक जब-तब उभाड़ होते रहे। आज इसमें ५ या ६ शंकु एक पंक्ति-सी बनाकर खड़े दिखाई पड़ते हैं। धरती का यह फटान लगभग ढाई मील लम्बा होगा जिसमें ये शंकु खड़े हैं। जोरुलो का मुख्य शंकु लगभग १३०० फीट ऊँचा है। इसके उत्तर में एक छोटा शंकु तथा दक्षिण में तीन छोटे शंकु इसकी पंक्ति में खड़े हैं। ये सभी शंकु दक्षिण-पश्चिम दिशा में लावा के कारण खुले हैं जिसकी संयुक्त धारा फैलकर लगभग ३५० फीट मोटी तह ५ वर्ग मील के घेरे में फैल कर जमी है।

इसी तरह मध्य अमेरिका में पश्चिमी तट पर सन् १७६३ ई० में एक नया ज्वालामुखी उत्पन्न हुआ परन्तु यह आज तक अनवरत रूप से उग्र बना हुआ है और इसका शंकु २००० फीट ऊँचा बन गया है। यह ज्वालामुखी इजालको नाम से प्रसिद्ध है जो सैन सैलवेडर नगर के उत्तर में अवस्थित है। इसमें पहले आरम्भिक उभाड़ सन् १७६६ ई० में ही प्रारम्भ हुआ था किन्तु भारी उभाड़ १७६३ ई० में हो सका। उस समय आज का उसका मुख बन सका। पहले धड़ाके से ढोंके राख आदि निकले। फिर ५ मास तक लावा निकलता रहा।

संसार के नवीनतम ज्वालामुखियों में मेक्सिको के एक दूसरे ज्वालामुखी का नाम है जो सन् १६४३ ई० में पेरिकुटीन नाम के स्थान के निकट उभड़कर उत्पन्न हुआ अतएव उसका नाम इस नाम से ही प्रसिद्ध है। हम उसका विशद वर्णन अन्य ज्वालामुखियों के साथ देंगे। अन्य नए उत्पन्न ज्वालामुखियों में कई देशों के ज्वालामुखियों के नाम दिये जा सकते हैं जो

पेरिकुटिन के पूर्व उत्पन्न हुए थे। पेरिकुटिन के जन्म के पूर्व संसार के नवीनतम ज्वालामुखी इनको ही माना जाता था।

अलास्का की एक घाटी में सन् १९१२ ई० में नोवारुप्ता नामक ज्वालामुखी उत्पन्न हुआ था। अफ्रीका में बेलजियम कांगो में भी दो ज्वालामुखी उत्पन्न हुए थे। सन् १९०९ ई० में अटलांटिक महासागर में कनारी द्वीप-समूहों के टेनेरिफ नाम के द्वीप पर चिन्येरा नाम का ज्वालामुखी उत्पन्न हुआ था। टिनेरिफ द्वीप पर उत्पन्न हुए इस ज्वालामुखी के उत्पन्न होने का आँखों देखा वर्णन भी उसी प्रकार प्राप्त है जिस प्रकार मेक्सिको के जोरुलो और पेरिकुटिन ज्वालामुखियों की उत्पत्ति का आँखों देखा वर्णन पाया जाता है।

ये जितने भी नए उत्पन्न हुए ज्वालामुखी हैं, वे उन्हीं क्षेत्रों में उत्पन्न हुए थे, जहाँ ज्वालामुखी उत्पन्न होने का क्षेत्र संसार को ज्ञात है। इनमें से कोई भी ज्वालामुखी ऐसे स्थान में उत्पन्न हुआ नहीं पाया गया जिसका ज्वालामुखी का क्षेत्र होना ज्ञात नहीं था। इस प्रकार हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि हमारे देश की मुख्य भूमि में ज्वालामुखी के वर्तमान काल में उदय होने की कोई सम्भावना नहीं हो सकती। समुद्री द्वीपों में इसका प्रभाव क्षेत्र जहाँ है, वहाँ सम्भव है हम ज्वालामुखी के कभी उभड़ उठने या द्वीपों की रचना करने की बात सुन सकें। ज्वालामुखी का विज्ञान हमें इतनी थोड़ी जानकारी ही करा सकता है।

———

ज्वालामुखी क्यों उठते हैं ?

ज्वाला का अर्थ आग होता है। जिस पर्वत या टीले अथवा भूमि से स्वतः ज्वाला उठ पड़ती दिखाई पड़े उसे ज्वालामुखी नाम दिया जाता है। धरती के अंतर्भाग से कुछ वस्तु पिघल कर वायव्य (गैस) अथवा चूरे के रूप में बाहर पहुँचती है तो मुख के पास ऊँचा रूप भी बनने लगता है, इसलिए ज्वालामुखी को पर्वत नाम भी दिया जाता है। वास्तव में संसार के बहुत से पर्वत ज्वालामुखी के मुख या लम्बी दरारों द्वारा निकले पदार्थों से ही निर्मित होकर ऊँचे रूप धारण किए हैं। उनके शिखर पर कभी मुख का चिह्न मौजूद रह सकता है, और कभी बेडौल बन गया या नष्ट हो गया होता है।

ज्वालामुखी या आगमुखी पर्वतों का नाम सार्थक करने वाली कौन सी शक्ति है, उसके उभड़ने के क्या कारण हो सकते हैं, इन बातों के समझने की हमारे हृदय में बड़ी उत्सुकता हो सकती है। इस जटिल प्रश्न पर विचार करने के पूर्व हम पहले गर्म पानी के फौवारों या गीसरों की चर्चा करना उचित समझते हैं जिनकी क्रिया ज्वालामुखी के कार्यों के समान ही मानी जा सकती है परन्तु उनकी शक्ति दुर्बल होती है और वे छोटे-मोटे व्यवसाय करने वाले व्यापारी की तरह केवल पानी, भाप या कीचड़ आदि ही उछाल कर संतोष कर लेते हैं। ज्वालामुखी के भारी धड़ाकों, धधकती धूलों, दहकती गैसों या लावा के उभाड़ का वे प्रयत्न

नहीं करते। यथार्थ में जब धरती की निचली तह में ज्वालामुखी उभाड़ करने वाली शक्ति दुर्बल पड़ने लगती है तब उस क्षीण शक्ति से ही विलुप्त होते जाने वाले ज्वालामुखी के क्षेत्रों में गीसरों का उदय होते पाया जाता है।

जब ज्वालामुखी का लोप होने लगता है तो धरती के कुछ भीतरी भाग में उस समय भी तीव्र गर्मी विद्यमान रहती है। इसलिए चट्टान की दरारों से चू-चू कर नीचे पहुँचा पानी बहुत गर्म हो उठता है। अंत में वह खौल उठता है और भाप रूप में परिणत होने लगता है। अधिक गहराई में यह पानी खौलने के तापमान से बहुत ही अधिक गर्म हो उठा रहता है क्योंकि ऊपर से पानी की भारी मात्रा का दबाव उस पर पड़ता है। धीरे-धीरे उसमें कुछ बुलबुले उठने प्रारम्भ होते हैं, वे ऊपर वाले पानी की नली में प्रवेश करने लगते हैं।

इससे कुछ दबाव की कमी होते देख नीचे वाला असीम रूप का गर्म पानी भाप बनने लगता है जिसमें भयानक विस्फोट की शक्ति उत्पन्न हो गई होती है। दबाव में पड़े हुये भाप की शक्ति बड़ी प्रबल होती है। यह अपने विस्फोट से ऊपर की सम्पूर्ण जलराशि को ऊपर उछाल फेंकती है। वही धरातल के ऊपर फौवारे या गीसर रूप में दिखाई पड़ता है। प्रायः गीसर के मुख का भाग कुछ चौड़ा तसलानुमा बन गया होता है। गीसर का ऊपर उछला पानी बहुत कुछ अंश में उस तसलानुमा मुख में ही फिर गिर पड़ता है। उस समय निचले तल तक सारा पानी फिर पूर्व अवस्था में पहुँच कर ठंडा हो गया होता है। दुबारा गर्मी पहुँचने पर निचले तल में फिर वही क्रिया प्रारम्भ होकर पानी को दुबारा उछाल फेंकती है। यह क्रम कुछ निर्धारित अवधि के पश्चात् बार-बार होता दिखाई पड़ता है। घड़ी की तरह निश्चित रूप से यह क्रम

उस समय तक एक रूप ही रख सकता है जब तक कि निचली तह में गर्मी उत्पन्न होने की मात्रा या पानी की मात्रा और ऊपर

चित्र ६—गीसर क्षेत्र ।

के छेद और तसलानुमा मुख का आकार-प्रकार एक रूप का ही बना रहे। परन्तु आकार में उलट-पलट या परिवर्तन होने या निचली तह की गर्मी न्यून होने पर ही गीसर के पानी उछालने की अवधि में व्यतिक्रम उपस्थित हो सकता है। ऐसे ही रूप में पानी के साथ कच्ची चट्टान की धूल, मिट्टी आदि घुल कर कीचड़ के उछाल का दृश्य उपस्थित करने वाले गीसर भी होते हैं।

गीसर उठने के कारण समझ में आ सकते हैं। धरती की गहरी और लम्बी दरार में नीचे की चट्टान गर्म होने पर पानी घुसने पर छेद की अगल-बगल वाली दीवालों के सम्पर्क के कारण उनकी गर्मी द्वारा गर्म हो उठता है। ऊपरी तह की अपेक्षा निचली तह का पानी अधिक गर्म हो जाता है। २१२° फार्नहीट के ताप-

मान पर पानी खौल उठता है, किन्तु इतनी गर्मी उत्पन्न होने पर भी दबाव के कारण यह नहीं खौल पाता। ऊपर का दबाव खौलने का तापमान हो जाने पर भी निचले खंड का पानी तरल बना रहने के लिए विवश करता रहता है। जब निचले खंड का तापमान और भी अधिक होने लगता है तो तापमान और दबाव की शक्तियों में संघर्ष होता है। दबाव के बढ़ने का तो कोई सुभीता होता ही नहीं। अतएव तापमान ही अपनी शक्ति बढ़ा सकने में समर्थ हो कर दबाव की शक्ति को धराशायी कर देता है।

गीसरों की अपनी नियमित उभाड़-शक्ति स्थिर रखने का अनुपम उदाहरण अमेरिका के पीत पाषाण उद्यान (येलोस्टोन पार्क) नामक सुरक्षित क्षेत्र के ओल्ड फेथफुल नामक सततगामी गीसर में देखा जाता है जिसमें प्रति ६५ मिनट पर २५० फीट की ऊँचाई तक पानी का उछाल होता है। उछाल की भारी शक्ति का नमूना न्यूजीलैंड के वैमेंगर नामक गीसर में देखा गया था। इसमें २५०० फीट की ऊँचाई तक पानी का स्तम्भ उठता था। किन्तु १९०४ में यह बंद हो गया। न्यूजीलैंड में एक गीसर का उभाड़ प्रति ३० मिनट पर होता था किन्तु बाद में वह अवधि बढ़ाते २० दिन पर उछाल फेंकने का क्रम रखने लगा। इसी काल में सन् १८८६ ई० में एक ज्वालामुखी का भयंकर उभाड़ होने से गीसरों का कार्य बंद हो गया किन्तु सात वर्षों पश्चात् वैमेंगर गीसर ने अपना उभाड़ फिर प्रारम्भ किया था। वह कुछ समय बाद १९०३ ई० में बन्द हो गया।

अमेरिका के पीत पाषाण उद्यान के गीसरों की परीक्षा कर यह ज्ञात किया गया कि पानी की मात्रा में चार पंचमांश तो धरातलीय आधार की पाई जाती है किन्तु पंचमांश पानी धरती की भीतरी तह से निःसृत होकर उनमें सम्मिलित होता है। वह पंच-

मांश जल मगमा के स्थान से ऊपर उठ कर भाप रूप में ऊपर तक आता होगा किन्तु धरातल पर उनका कभी पहले आगमन नहीं हुआ रहता। वह गीसर के मार्ग से पहले पहल खुले वातावरण में पहुँच पाता है। दूसरी बात यह भी देखी गई कि पानी का तापमान बढ़ाकर खौलाने या भाप बनाने वाला आधार केवल चट्टानों की दरार वाली तहें अर्थात उनमें जमा पड़ा हुआ लावा या मगमा की गर्म तहें ही नहीं हैं बल्कि और अधिक नीचे के अधिक गर्म मगमा से छूटी हुई उत्तप्त गैसें और भाप भी गीसर के पानी को गर्म कर ऊपर उछाल फेंकने में सहायक होते हैं।

जर्मनी के बुंसन नाम के एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक ने आज से बहुत पहले आइसलैंड के गीसरों का अध्ययन कर पता लगाया था कि ८० फीट तक की गहराई में नीचे जितना तापमान का पानी होता है, उसकी अपेक्षा क्रमशः कम तापमान का पानी ऊपर पाया जाता है किन्तु जब पानी के उछाल मारने का समय आता है तो नीचे की ओर से ऊपर की ओर पानी में तापमान बढ़ना प्रारम्भ होता है। जब हम किसी बन्द बर्तन में पानी गर्म करने लगते हैं तो नीचे की आँच से बर्तन का पेंदा गर्म होकर निचले तल के पानी को पहले गर्म करता है। वह अधिक गर्म होने पर हल्का होकर ऊपर उठ आने लगता है और उसकी जगह ऊपर का पानी नीचे जाने लगता है। इस तरह पानी में उलट-फेर की लहरें उत्पन्न होकर सारे पानी को उत्तप्त कर खौला देती हैं, उससे भाप उठने लगती है। इसी तरह किसी लम्बी नली को खड़े रूप में रख उसमें पानी गर्म किया जाय तो नीचे का पानी गर्म होकर हल्का बनेगा और उसमें उलट-फेर वाली लहरें उत्पन्न होकर धीरे-धीरे ऊपरी तल तक के पानी को उबाल के तापमान पर पहुँचा देंगी।

हम यह भी जानते हैं कि पानी के उबाल बिंदु (क्वथनांक)

अर्थात् खौलकर भाप बन सकने के तापमान पर दबाव का प्रभाव पड़ता है। पर्वत के शिखर पर वायु का दबाव कम होने से यह उबाल बिन्दु घटेगा अर्थात् कुछ कम तापमान पर पानी खौल सकेगा, परन्तु गहरी खदान में वायु का दबाव अधिक होने पर धरातल के उबाल बिन्दु से ऊँचा तापमान पानी खौला सकेगा। इसी प्रकार किसी लम्बी नली में निचली तह के पानी पर भी उबाल बिन्दु या क्वथनांक के ऊँचा उठने का अनुभव किया जायगा। अर्थात् वहाँ २१२° फार्नहीट (अथवा १००° शतांश) का साधारण तापमान पानी को उबाल कर भाप बनाने में समर्थ नहीं होगा। इसी प्रकार गीसर की गहरी नली में भी निचले भाग में हम अति उत्तप्त जल होने पर भी पानी खौलाने की स्थिति न पहुँचती देखेंगे। किसी प्रकार लम्बी नली का अति-उत्ताप अपनी पहुँच ऊपरी तल तक न कर सके तो बीच में कहीं अवरोध होने पर वह उस औसत से अधिक हो सकता है जितना अतिरिक्त ताप दबाव के हिसाब उबाल बिन्दु तक पहुँचने के योग्य होता है। अतएव वहाँ पानी में भाप बनने लगने से उसके बढ़ते दबाव से ऊपर की सारी जल-राशि के ऊपर उछाल फेंकने का अवसर आ सकता है। ऐसी कृत्रिम लम्बी नली बनाकर बीच में उसका भाग कुछ अवरुद्ध कर कृत्रिम गीसर प्रयोगशालाओं में बनाकर देखे जा सके हैं। गीसर में भी ऐसा होता होगा। बीच के भाग में कहीं अत्यधिक ताप होकर भाप बनने का अवसर पाकर शक्ति संग्रह करने का अवसर पा जाता होगा जिससे पानी की भारी मात्रा ऊपरी अंश से उछाल फेंकी जाती होगी जिसके साथ कुछ भाप भी बाहर निकल कर दृश्य की विचित्रता बढ़ा देती होगी। कुछ गीसरों में सारे दरार का पानी भाप आदि उछाल के साथ बाहर फेंके जाने का भी अवसर आता होगा। इन सरल निरीह रूप के अग्निचालित

प्राकृतिक यंत्रों का अवलोकन कर हम ज्वालामुखी ऐसे विकट प्राकृतिक घटना का रहस्य समझने का कुछ प्रयत्न कर सकते हैं।

ज्वालामुखी और गीसर एक प्रकार की ही क्रियाएँ हैं। ये दोनों समानधर्मी ही प्राकृतिक घटनाएँ हैं। हम इसी कारण गीसर को जल-प्रक्षेपक ज्वालामुखी कहें या ज्वालामुखी को लावा या अन्य उत्तप्त गैस, भाप, मगमा आदि प्रक्षेपक गीसर कह लें तो कोई अनुचित नहीं। किन्तु इतने से ही न तो हमें गीसर का यथार्थ मर्म ज्ञात होता है और न ज्वालामुखी का। किसी भी यात्रा के लिए उचित मार्ग और साथ ही मार्ग-व्यय या यात्रा-सामग्री की आवश्यकता होती है। यातायात का साधन बढ़ाने के लिए हमें सड़कें भी चाहिए और साथ ही वाहनों को चलाने वाले तेल, पेट्रोल आदि साधन भी प्रस्तुत होने चाहिए। उसी प्रकार हमें पानी के फौवारे या लावा, मगमा आदि की भारी निकासी का मर्म समझने के लिए इन की यात्रा का मार्ग भी ढूँढना होगा और इनके धरातल पर फेंक सकने वाली शक्ति का भी ज्ञान प्राप्त करना होगा। गीसर के लिए हम सहज ही कह सकते हैं कि ज्वालामुखी के द्वारा बनी दरारों या छिद्रों से ही इनका काम चल जाता है, परन्तु मूल प्रश्न तो रह ही जाता है कि ज्वालामुखियों को भी ये मार्ग किस प्रकार मिले होते हैं। उसी प्रकार ज्वालामुखी की बची खुची गर्मी का प्रभाव ही गीसर का कारण बताना भी मुख्य प्रश्न से दृष्टि हटा लेना ही होगा। यह गर्मी ज्वालामुखी को भी कहाँ से प्राप्त हो सकती है, इसकी उधेड़बुन आवश्यक ही होगी।

इन प्रश्नों पर ध्यान जाने से हम संसार की नदियों तथा उन से ही सम्बन्धित कतिपय लम्बी-लम्बी झीलों की ओर दृष्टि डालते हैं। स्वतः ही यह बात ध्यान में आ जाती है कि प्रायः बड़ी-बड़ी सभी नदियाँ सभी देशों में पूर्व-पश्चिम या उत्तर-दक्षिण की दिशा

में बहती दिखाई पड़ती हैं। क्या यह कोई जुलाहे की बुनी डोरिया की लकीरों के समान ही सीधी लम्बाई या सीधी चौड़ाई में बनी लकीरें हमें धरती रूपी लम्बी चादर में जहाँ-तहाँ बनी दिखाई पड़ती हैं ? यही नहीं, कुछ स्थानों में हम द्वीप-समूहों के ज्वालामुखियों की स्थिति किसी मानचित्र में बिन्दु रूप में बनाते हैं तो वे किसी चारखाने की लकीरों के कटान बिन्दु का स्थान ग्रहण किए ज्ञात होते हैं। ये विचित्र घटनाएँ क्यों हैं; इनका क्या मर्म हो सकता है। इसका निराकरण कुछ न कुछ होना ही चाहिए।

धरती के स्तर-विज्ञान का अध्ययन करने वाले विद्वानों ने अफ्रीका में प्रस्तरों की खुदाई होने पर स्पष्टतया देखा है कि चट्टानों में पूर्व-पश्चिम या उत्तर-दक्षिण की दिशा में कुछ निश्चित दूरियों
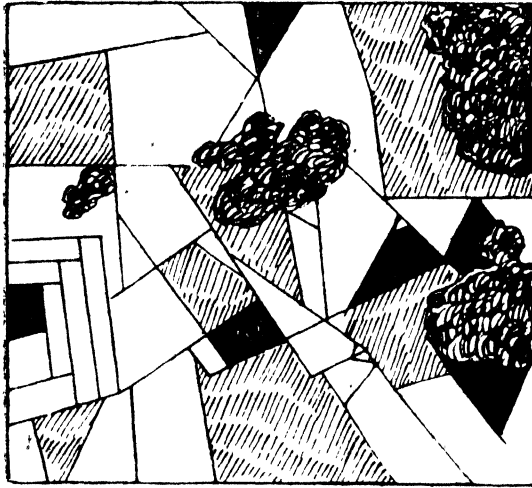
चित्र १०—अफ्रीका में शिला की कटान की रेखाएँ।

पर कटान की रेखाएँ-सी बनी दिखाई पड़ती हैं। कहीं डोरिया, कहीं चारखाने की रेखाओं की तरह निश्चित दूरियों पर ये कटान की समानान्तर रेखाएँ कभी-कभी तिरछी काट की रेखाएँ रूप भी

समानान्तर रूप में फैली पाई जाती हैं। इन छोटे रूपों का ही दूसरा रूप हमें इन कटान की रेखाओं में बड़े खड्ड बड़ी लम्बाई तक बने होने पर नील या अन्य नदियों की उसमें अपना बहाव का मार्ग बनने का अनुमान करना कठिन बात नहीं है। कहीं दो कटानों की रेखाओं का मध्य भाग पूर्ण रूप से कोई झील ही दूर तक घेरे हुए हो सकती है। ऐसी कटान की लम्बी-चौड़ी रेखाएँ हमारे संसार भर के भारी-भारी नदों को आश्रय देती हैं। हम यह नहीं कह सकते कि ठीक किन कारणों से धरती की चट्टान में ये कटान बने। कुछ विद्वान धरती के सिकुड़ने का सिद्धांत मान कर उस सिकुड़ने से ऐसी कटान या दरार की रेखाएँ बनने का अटकल लगाते थे, परन्तु धरती के सिकुड़ने का सिद्धान्त विद्वानों को मान्य नहीं। अतएव इसके कुछ अन्य कारण हो सकते हैं जिसकी जानकारी भविष्य की खोजें शायद करा सकें।

चित्र ११–मिस्र में नदियों और झीलों को स्थान देने वाली कटान-रेखाएँ।

धरती की तहों में उथल-पुथल करने वाली शक्तियों, समुद्र और स्थल के तल उठने या बैठने, पर्वत के ऊँचे पृष्ठ तनने, धरती की तहों में विकट तोड़-मोड़, झुकाव या स्तरों में तोड़-फोड़ होने की समस्या

भी स्पष्ट नहीं ज्ञात होती। किसी निश्चित गहराई के ऊपर की भूमि की सभी तहें भार में बराबर ही हैं, किन्तु हमें देखने में वे कहीं पर्वतमाला रूप में ऊँची और कहीं समुद्र के पेटे रूप में बहुत नीची भले ही दिखाई पड़ें परन्तु जहाँ नीची दिखाई पड़ती हैं, वहाँ और अधिक नीचे का तल अधिक कठोर, अधिक दृढ़ हो सकता है, किन्तु जहाँ पठार, पर्वतमाला रूप में ऊँचा है, वहाँ कुछ निचली तहें अधिक हल्के रूप की हो सकती हैं। यह निचली और ऊपर की तहों के भार का योग बराबर रहने का सिद्धान्त "सम स्थिति स्थापन" (आइसोस्टेसटी) नाम से प्रसिद्ध है। एक ओर का भार कम या अधिक होने पर निचली तह किसी प्रकार खिसक कर योग रूप का भार पूरा करती है किन्तु इस प्रयत्न में बीच के भाग में स्तरों में तोड़-फोड़ का दृश्य उपस्थित हो जाता है।

पर्वतों का क्षय, नदियों का बहाव, समुद्र में तलछट का जमाव ये क्रियाएँ हैं जो ऊपर की तहों को हल्का और भारी करती रहती हैं। इनकी अव्यवस्था मिटाने के लिए निचली तहें पलड़ा बराबर करने की युक्ति करती हैं। उसी में बीच के स्थल की शिलाओं की तहें अपनी कटान रेखाओं से कदाचित् कभी कट या धस कर एक दूसरे की अपेक्षा ऊँची-नीची, टेढ़ी-मेढ़ी बनती या कहीं बड़े क्षेत्र में नीचे धस कर अगल-बगल के भाग को ऊँचा ही बनी रहने देती हैं। इन्हें धसान की घाटी नाम दिया जाता है। अफ्रिका के पूर्वी भाग, लाल सागर, मृत सागर आदि के निकट का सारा नीचा मैदान इस धसान घाटी का पेटा माना जाता है। इसकी पार्श्ववर्ती भूमि में स्तरों के तोड़-मरोड़ के क्षेत्र होंगे जो कटान, फटान की दरारों से ऊपरी खंड को दुर्बल बनाते होंगे। इन कटानों के चार-खाने रूप की रेखाओं के मेल के स्थान पर और भी अधिक दुर्बल

चित्र १२—धरती की टेढ़ी-मेढ़ी तहें।

स्थान होंगे। ये ही ज्वालामुखी के द्रव पाषाण या मगमा के उभड़ने के सुगम मार्ग समझे जाते हैं।

दबाव कम होने पर वस्तुओं का उबाल बिन्दु या पिघलन बिन्दु नीचा हो सकता है। गैसें, भाप आदि जो पहले भारी दबाव के कारण मगमा के अंतराल में द्रव बने फँसे पड़े थे, वे अपने वायव्य रूप धारण करने का तापमान कम मात्रा का ही अपेक्षित रखने लग सकते हैं। उनके फैलने के साथ मगमा भी अपने द्रवांक या पिघलने के तापक्रम को न्यून ही अपेक्षित रख पिघल कर द्रव बनने लग सकता है। दुर्बल शासन में कौन सिर नहीं उठाता। उसी प्रकार ऊपर का अंकुश दरारों और उनके संधि-स्थानों पर न्यून होने से बेबस बना हुआ मगमा का संसार जागृत हो उठता, फैल

उठता है। गैसें भारी दबाव डाल कर रहा-सहा अवरोध दूर कर मार्ग को स्वच्छ कर देती हैं, उनके पीछे मगमा की राशि भी बाहर निकलने का मार्ग पाती है। यही ज्वालामुखी के उभड़ने का सुअवसर होता है जो हमें धरती की कोख में प्राकृतिक घटनाओं के कारण की इतनी ही झाँकी दिखा सका है।

यह भी संभव हो सकता है कि किसी प्रकार दरारों के मार्ग धीरे-धीरे पानी की कुछ मात्रा धरती के उस भाग में प्रवेश पा जाती हो जहाँ शीत का नाम नहीं, भारी उत्ताप को भी पचा कर ऊँचे दबाव में दबकी पड़ी रहने वाली मगमा राशि का ही सब ओर बोलबाला है। उस क्षेत्र में एक विजातीय, अवांछनीय रूप में जल की राशि पहुँचने पर प्रकृति अति ही कुपित हो उठती हो। उस आगंतुक पदार्थों को ही अपने भीषण ताप में झुलसा कर भाप बना कर ऊपर तक भगाकर ही दम लेने के प्रयत्न में मगमा का भंडार भी धीरे-धीरे पीछे खदेड़ता आता है और इसी भाग-दौड़ में धरातल पर पहुँच कर वह स्वयं ही अपने शासन-क्षेत्र से सदा के लिए निष्कासित बन जाता हो। मगमा के बहि:करण की एक यह भी कहानी है जो कुछ वैज्ञानिकों द्वारा कुछ विशेष परिस्थितियों में घटित होती बतलाई जाती है।

जो कुछ भी हो, एक बार धरातल पर आकर मगमा हमें पृथ्वी के पचीसों मील गहरे भाग का कुछ मर्म तो खोलकर बता ही देता है। जहाँ तक भीषण गर्मी तथा दबाव के प्रभावों के कारण मानव शक्ति की प्रत्यक्ष रूप में कभी भी पहुँच नहीं हो सकती थी, लावा की तह हमें उस भूगर्भीय जगत की रचना का उत्तम नमूना दिखा देती है। हमारे रासायनिक विश्लेषण, भौतिक प्रयोग उसकी भाँति भाँति से परीक्षा कर इस विशाल विश्व का कुछ ज्ञान प्राप्त करने में हमें समर्थ बना सकते है। यह सुविधा ज्वालामुखी हमसे कुछ पूछे

जाँचे बिना ही, कुछ बदला प्राप्त करने की आशा के बिना ही अपनी सहन क्रिया से हमारे सम्मुख रख देता है। हम सूक्ष्म बुद्धि रखने
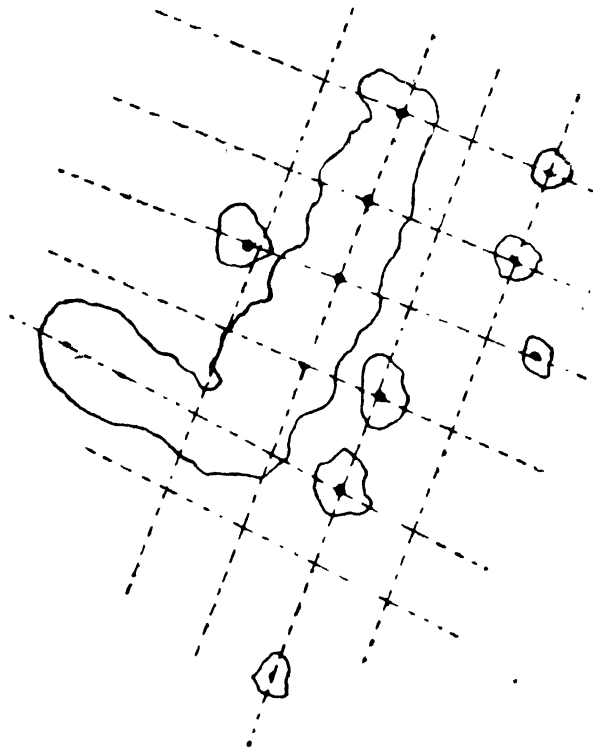
चित्र १३—धरती की चट्टानों के संधिस्थल पैसिफिक महासागर के गलापगोज द्वीपों में समानान्तर रेखाओं की सीध में ज्वालामुखी प्रकट करते हैं।

पर इस कार्य के लिए ज्वालामुखी के अवश्य ही ऋणी रह सकते हैं। और यदि चाहें तो घर का भेद फोड़ने वाले विभीषण की भाँति इसको कलंक का भी भागी बनाने का साहस कर सकते हैं। किन्तु ज्वालामुखी हमारी इन निन्दा या स्तुतियों का चिंताशील कभी नहीं होने का !

———

पेरिकुटिन

मेक्सिको के दक्षिणी पश्चिमी भाग में एक मनोरम घाटी अवस्थित थी। इस पर प्रकृति की अपार कृपा थी। भूमि अनाज के दाने बालियों रूप में अपनी कोख से उपजा-उपजा कर किसानों के बखार अन्नपूरित कर देती थी। कोई कष्ट नहीं था, कोई असुविधा नहीं थी। कोई आशंका नहीं थी। ऐसे सुख के दिनों में डियोनिसियो पोलिडो नाम का एक किसान रहता था। उसके खेत इस उर्वर घाटी में ही थे। किन्तु इसके भाग्य में अन्य किसानों की अपेक्षा कुछ अधिक सुख मिलता दिखाई पड़ता था। उसके खेत अन्य किसानों की अपेक्षा कुछ गर्म मालूम पड़ते थे। रात को वह खेत में ही सोने में अधिक आनन्द अनुभव करता जहाँ बिना कुछ ओढ़े बिछाए ही भूमि पर सोने में उसे सर्दी नहीं लगती थी। इस आनंद से किसान अपने सुख की सीमा न समझता होगा। किन्तु क्या यह सुख अंत होने को नहीं आ सकता था?

डियोनिसियो जिस खेत की जुताई करते कुछ गर्मी का अनुभव करता, हल की कुंडों में गर्मी उभड़ते देखता, पैर तले की भूमि कुछ तपती सी देखता, वहाँ क्या हो रहा है, उनमें क्या होने वाला है। इसकी कल्पना कभी बेचारे निरीह, सरल स्वभाव के किसान के सुखी जीवन में कैसे स्थान पा सकती थी! ऐसे वातावरण में एक दिन खेतकी किसी कुंड या कूंडनुमा ही पतली दरार से डियोनिसियो ने कुछ धुआँ उठते देखा, फिर भी उसका सरल अबोध हृदय शंकाकुल नहीं हुआ। उसने सोचा कि कहीं घास पात सूखी हुई कूड़े या

दरार में दबी पड़ी रही होगी। उसी में कहीं से चिनगारी पड़ जाने से आग सुलग उठी होगी। इसी कारण धुआँ उठ रहा है। अतएव उसने बड़े ही निश्चिन्त रूप से कुछ धूल-मिट्टी उस पर छोड़ कर उसे दबा देने का प्रयत्न किया। समझा कि अब सूखी पत्ती, घास-पात आदि की आग ही भीतर ही भीतर बुझ कर रह जायगी। फिर आग या धुआँ का नाम नहीं रहेगा। इसमें चिंता ही की क्या बात हो सकती थी! किन्तु जिस स्थल पर अपने हाथ से धूल मिट्टी दबा कर धुएँ का लोप होने की आशा उसने की, वहाँ से फिर भी धुआँ उठना जारी रहा। यह उसकी कुछ हैरानी, विस्मय का कारण हुआ, वह कुछ ठीक कारण का अनुमान न कर सका। यहीं उस क्रिया का अत्यंत साधारण रूप का प्रारंभ था। जहाँ किसी दिन एक विकराल ज्वालामुखी उठकर बेचारे डियोनिसियो की जीविका का आधार उपजाऊ भूमि के साथ उस घाटी की उर्वरता पलट कर एक पर्वतीय प्रान्त बना देने वाला था। यह आज से दस वर्ष से भी कम की ही घटना है।

डियोनिसियो ने देखा कि कई दिनों के बीच उसके खेत में कितनी ही अन्य धूम-शिखाएँ उठनी प्रारम्भ हुईं। उसके पग तले की भूमि अधिक तपने लगी। इस व्यग्रता में वह समीप के स्थान में अपने पादरी की शरण में गया। उससे इन कौतूहलवर्द्धक दृश्यों का वर्णन काँपते-काँपते कह सुनाया। पादरी ने समझा कि किसान मद्य के नशे में बकवास कर रहा था। ऐसी बात पर वह सहज ही कैसे विश्वास कर लेता। उसने किसान की बात अनसुनी कर सीधे वापस भगा दिया। बेचारा डियोनिसियो हतबुद्धि होकर अनिच्छापूर्वक पैर घसीटते फिर अपने खेतों की झोपड़ी में पहुँचा। वह धैर्यपूर्वक परिणामों की प्रतीक्षा करने लगा। सोचने लगा, मालूम नहीं क्या होने वाला है। रात-दिन त्राहि-

त्राहि कर ही समय बिताने लगा। किन्तु कुछ दिनों के पश्चात् डियोनिसियो ने फिर पादरी के पास जाकर अपना सिर नत किया। भयातुर होकर उसने पादरी से निवेदन किया कि धूम-शिखाएँ अन्यान्य दरारों से उठ रही हैं और वे दिन पर दिन ऊँची उठती जाती हैं। निदान इस बार पादरी ने उसे बैरंग वापस न कर साथ हो लेने का विचार किया। उसे इन बातों में कुछ सच्चाई की झलक दिखाई पड़ी। यदि ऐसा विचित्र दृश्य है तो उसे अपनी आँखों ही चलकर क्यों न देख लिया जाय। यह सोच कर ही वह किसान के साथ चलने को तत्पर हुआ। जब डियोनिसियो के खेत पर पहुँच कर पादरी ने स्वयं अपने चर्म-चक्षुओं से साक्षात् धूम-राशि का अतुल उभाड़ अनेक स्थलों पर उठते देखा तो उसके भी विस्मय, कौतूहल का ठिकाना न रहा। उसे भी बड़ी व्यग्रता हुई। भय से कातर बन कर किसान के साथ उसने भी अपने प्रभु को स्मरण करने का प्रयत्न किया। विज्ञान के ज्ञान से शून्य, ऐसी अघटित घटना के अपने जीवन में कभी देखने के अवसर से हीन उस पादरी ही को क्या, बड़े विवेकी पुरुष का साहस भी छूट सकता था। निदान पादरी प्रकृति का भयानक प्रकोप, कोई अनहोनी बात समझ कर, कारण का कुछ निराकरण न कर सकने, प्रश्न का कुछ समाधान न ढूँढ सकने के कारण चुपचाप अपने गिरजाघर में लौट आया।

कुछ दिन के पश्चात् २० फरवरी १९४३ ई० के सांयकाल, जब डियोनिसियो अपने बैलों को विश्राम देते हुए, हल की मूठ पर झुका अँगड़ाइयाँ ले रहा था कि उसे एक ऊँची भयंकर गड़-गड़ाहट सुनाई पड़ी। सारी धरती ही काँप उठती जान पड़ने लगी। धरती के नीचे से एक रोषपूर्ण ध्वनि उठती और तीव्र से तीव्र होती जाती सुन पड़ने लगी। भारी धूम-राशि उभड़ कर

आकाश के मार्ग ऊपर मँडरा कर बवंडर उठाने लगी। यह अकल्पनीय दृश्य देखकर वह तुरन्त ही अपने झोपड़े की ओर दौड़ा और अपनी स्त्री को पुकार-पुकार उसे भी यह दृश्य दिखाकर विश्वास कर लेना चाहा कि वास्तव में उसके नेत्र और कान धोखा नहीं दे रहे हैं। वह कोई काल्पनिक दृश्य नहीं देख रहा है। यह कोई उसके ही लिये दिवा-स्वप्न नहीं है, बल्कि अन्य नेत्रों और कानों को भी अनुभवगम्य ठोस, भीषण सत्य है। निदान उसकी स्त्री भी इस चौंक की पुकार को सुनकर बाहर निकली। उसने भी इस वीभत्स कांड को देखा। उसके भी भय, आश्चर्य और कौतूहल का ठिकाना न रहा। किन्तु इस दृश्य को देखते ही देखते डियोनिसियो और उसकी पत्नी के नेत्रों के पलक गिरने भी न पाये थे कि एक भयानक भूकम्प हुआ जिसने धरती का कलेजा चीर डाला। उस चीरे में से भाप, रेत तथा कुछ ढोंके भी बाहर आकाश में वेगपूर्वक फेंके जाने लगे।

इस अत्यन्त ही भयानक घटना से बिल्कुल ही उन्मत्त से होकर डियोनिसियो दम्पति अपने घर बार, खेत की ओर दृष्टि डाले बिना ही भाग खड़े हुये और निकट के पेरिकुटिन ग्राम में जब पहुँच गये तब कहीं उनके साँस में साँस आई। बड़ी ही घबड़ाहट में उन्होंने अपने पड़ोसी गाँव के किसानों को उसका वर्णन कह सुनाया जो उनकी आँखों ने देखा था, किन्तु इस समय तक पेरिकुटिनवासी भी इस दृश्य से दूर से ही कुछ अवगत हो गये थे। धुएँ रूप में भाप, रेत, ढोकों आदि का बवंडर आकाश में उठते उनकी दृष्टि से कैसे छिप सकता था। धरती का कम्पन भी उन लोगों ने स्वयं अनुभव किया था। लोगों में भगदड़ मच गई थी। अपने-अपने सामान समेट कर वे लोग भी जहाँ-तहाँ सुरक्षित स्थानों में भाग जाने की तैयारी में लग पड़े थे। इन्हीं स्थितियों में
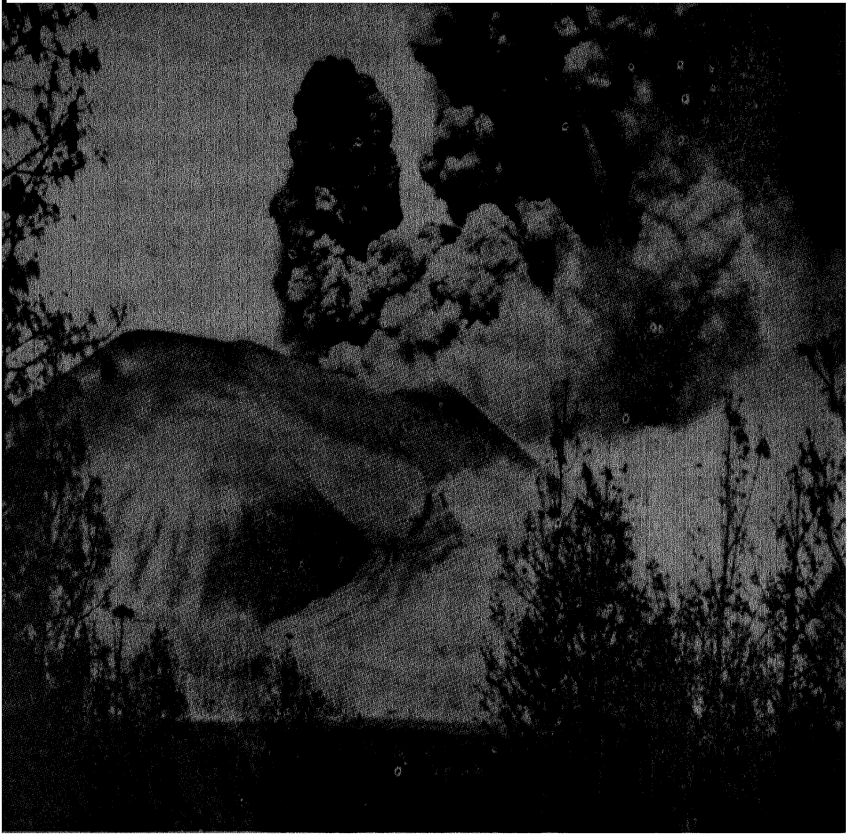
चित्र १४---पेरिकुटिन चार मास की आयु।

पहुँच कर डियोनिसियों दम्पत्ति ने उनकी घबड़ाहट और भी अधिक कर दी। इस विपत्ति काल में जहाँ घरबारी घबड़ाहट में पड़े ही थे, वहाँ देवलोक का पाप-पुण्य का लेखा इस मृत्यु-लोक के वासियों को जता देने का संकल्प रखने वाले धर्म-याजक, वहाँ के ईसाई पादरी ने देव-मूर्ति को किसी अन्य सुरक्षित स्थान में पहुँचा देने के लिये बलिष्ठ और धर्मभीरु भुजाओं के व्यक्तियों की खोज प्रारंभ

कर दी थी। धरती की कंपन और फटान ने इस रूप में सबको ही व्यग्रता, घबड़ाहट, आतुरता की समान रंगस्थली में ला पटका था।

सन्ध्याकाल को जिस अघट घटना का सूत्रपात होता देखा गया, उसने रात्रिकाल में अपना और भी भयानक रूप दिखाया। सारा मैदान चारों ओर एक अजीव प्रकाश से चमक उठा था जो धरती में फटी 'दरार से उद्भूत होकर ऊपर फेंके जाते रहने वाले दहकते पाषाण खंडों तथा अंगारों से प्रस्फुटित होता था। प्रति पल इनका उभाड़ रह-रह कर होता ही रहता था। इस विस्फोट की ध्वनि इतनी भयावह थी मानो शत-शत अग्निमुखी तोपें घोर गर्जन कर उठती हों। दहकते हुये लाल-लाल पथरीले शोले आकाश में १८०० फीट ऊँचे तक वेगपूर्वक फेंक दिये जाते। उनके उभाड़ों के साथ वज्रघोष युक्त विस्फोट से धरती सिहर और काँप उठती। जो उत्तप्त पाषाणीय खण्ड ऊपर फेंके जाते, वे फिर नीचे गिरते और विवर के परकोटे की काया-वृद्धि करने में संलग्न होते।

मेक्सिको नगर से पश्चिम दिशा में काक की उड़ान की २०० मील की दूरी पर एक उर्वर घाटी समुद्र तल से ७५०० फीट की ऊँचाई पर स्थित है, जहाँ का वातावरण शीत होने का अनुभव किया जा सकता है। इसमें ७५ मील के अर्द्धव्यास की गोलाई के क्षेत्र में शतशः क्षुद्र ज्वालामुखीय शङ्कु २०० फीट से ८०० फीट तक ऊँचे दिखाई पड़ सकते हैं। युग-युग के किसी खंड में जन्म धारण किये उनकी स्मृति मात्र ही इन छोटे-मोटे रूपों में बचा रक्खे शङ्कुओं को देखकर हम इसे ज्वालामुखीय क्षेत्र होने का आज अनुमान कर सकते हैं, परन्तु सर्वसाधारण केवल इन चिन्हों से ही पूर्वकाल की घटनाओं का अनुमान पहले नहीं कर सकते थे। इस क्षेत्र में ही १९४३ ई० में हमने उपर्युक्त ज्वालामुखी के प्रारंभ

होने की कहानी उल्लिखित की है। इस ज्वालामुखी को भले ही आज एक प्राकृतिक दृश्य कहा जाय, परन्तु अपने खेत में खड़ा होने का अधिकार बताकर डियोनिसियो इसे अपने अधिकार क्षेत्र की वस्तु कह सकता है। इस छोटे किसान के छोटे झोपड़े, खेत आदि का कोई ज्ञात नाम न होने से समीप के गाँव पेरिकुटिन के नाम पर इस ज्वालामुखी का भी नाम पड़ गया है।

इस घाटी में जहाँ पहले पशु-पक्षी आनन्द-विभोर होकर काल-यापन करते, हरे-भरे पेड़-पौधों का आश्रय ग्रहण कर जीते, किसान खेत की उपज से निहाल हो उठते, वहीं एक दिन हरियाली की न्यूनता देखते, सूखी हवा में सब पत्तियों पर गर्म राख लदने से धीरे-धीरे उनका लोप ही होते पाते, वहीं सूखे ठूँठ अब हरे पेड़ों का स्थान ग्रहण करते पाते। अब पशुओं को भूखे रह कर रँभाते, बिलबिलाते पाया जाता। उनका संसार सूखा पड़ रहा था, रस का स्रोत मिट रहा था।

पेरिकुटिन ज्वालामुखी के उभाड़ की सूचना भूकम्प के रूप में दूर-दूर के स्थानों में भूकम्पमापक यंत्रों में मिल सकती थी। न्यूयार्क नगर तथा दक्षिणी अमेरिका तक यन्त्रों में कम्पन प्रकट हुए। इनकी सूचनाएँ पा पाकर लोगों में उत्सुकता बढ़ रही थी कि कैसी घटना घटित हुई। लोगों का ताँता पेरिकुटिन की ओर आने में लग गया था। किन्तु उस समय तक बहुत कुछ स्वाहा हो चुका था। इस कांड में पेरिकुटिन गाँव को कौन कहे, सैन वान नगर तक विपत्ति के बादल फैल चुके थे। वहाँ के शासक ने अपने प्रान्त के गवर्नर को इस कांड की सूचना दे रक्खी थी। गवर्नर ने स्पेन के राष्ट्रपति को अविलम्ब सूचना भेज दी थी। सरकारी आज्ञा निकल चुकी थी। सहायता पहुँच रही थी। विपत्ति-ग्रस्त लोग बचाए जा रहे थे, सुरक्षित स्थानों में पहुँचाए जा रहे थे।
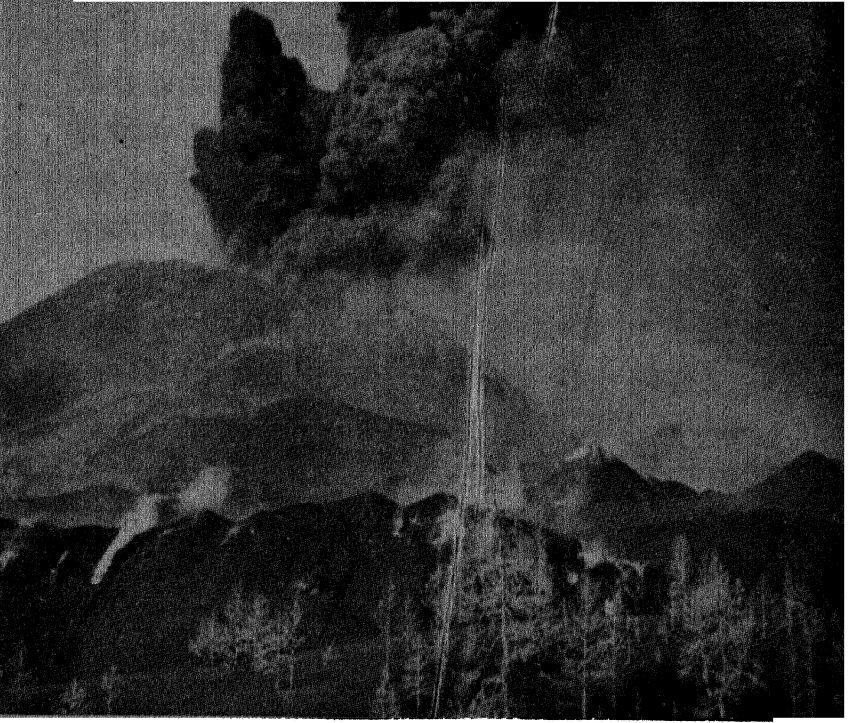
चित्र १५—पेरिकुटिन

यह सब भाग-दौड़ किसी दिन डियोनिसियो के खेत में निकले छोटे से छेद के धुएँ से ही प्रारम्भ हुई क्षुद्र घटना के बृहद् रूप धारण कर लेने का ही परिणाम थी। पेरिकुटिन अब एक जगत-प्रसिद्ध ज्वालामुखी की श्रेणी में पहुँच जाने वाला था। बेचारे डियोनिसियो की दुख-कहानी की ओर ध्यान देने की चिन्ता इस विकट रूप की प्राकृतिक रचना के सम्मुख किसे हो सकती थी।

पेरिकुटिन की काया-वृद्धि जितनी शीघ्रता से हुई, उसका उल्लेख पठनीय है। एक सप्ताह होने पर इसका शंकु ५५० फीट ऊँचा बन

गया था। दस सप्ताह पश्चात् इसी शंकु की ऊँचाई इस से दूनी, ११०० फीट हो गई थी। इस समय तक यह रेत, ढोंके आदि का ही बना शंकु था। किन्तु इसके बाद जून में इसमें लावा का भी निकास होने लगा। मुख्य शंकु से इस चार मास की अवधि में लावा न निकलने पर भी उस क्षेत्र में लावा अज्ञात वस्तु नहीं थी। जिस दिन पहला विस्फोट हुआ था उसके दो दिन पश्चात् ही इस धड़ाके के छिद्र या ज्वालामुखीय मुख के उत्तर एक हजार फीट की दूरी पर एक खेत में एक दरार से लावा निकलनी प्रारम्भ हुई थी। यह प्रथम लावा का उभाड़ पाँच ही दिनों में २००० फीट लम्बी, ६०० फीट चौड़ी और २० फीट मोटी तह फैला सका। छः सप्ताह तक यह निकलना जारी रहा और कुल ६००० फीट लम्बी, ३००० फीट चौड़ी तथा १०० फीट ऊँची तह जमा सकी। इस लावा की तह फैलने के मार्ग में पड़ी सभी वस्तु स्वाहा हो जाती, भूमि बंजर बन जाती। इसके स्पर्श मात्र से ही पेड़, पशु आदि कुछ भी जीवित न रहते। घर बार नष्ट-भ्रष्ट हो जाते।

पेरिकुटिन के जन्म लेकर उग्र रूप में अपना रूप प्रकट कर चुकने पर जहाँ उस क्षेत्र के निवासियों के लिए खंड-प्रलय का दृश्य सा उपस्थित दिखाई पड़ रहा था, वहाँ दर्शकों का ताँता लगने लगा था। परन्तु सर्वसाधारण के अतिरिक्त वैज्ञानिक दर्शक और खोजी भी अविलम्ब ही अपने यंत्रादि लेकर इसको ज्वालामुखी विज्ञान के अध्ययन का अपूर्व अवसर समझ कर अपना आसन वहाँ जमा बैठे। उनके उद्योग से इस ज्वालामुखी के जन्म से लेकर बढ़ने तक की प्रत्येक गतिविधि का अध्ययन किया जाने का अवसर मिला। इन वैज्ञानिकों ने इसमें से मुख्य शंकु के भाग में ही पार्श्व भाग में दरार फटने से लावा के उभाड़ होने का प्रारम्भ होते देखा। ६ जून को मध्याह्न काल में भयंकर विस्फोटों ने धरती कँपाना प्रारम्भ

किया। रेत निकलनी बन्द हो गई। लावा के खंड बमगोले रूप में छूटते दिखाई पड़ने लगे। रात भर विस्फोट और भूकम्प का दृश्य जारी रहा। लावा के बमगोले छूटते रहते जो वायु में जाकर जम कर ठोस बन जाते। १० जून को प्रातःकाल कुछ पल के लिए यह क्षुब्धता शान्त हुई जान पड़ी। भयंकर तूफान प्रारम्भ होने के पूर्व शान्ति दिखाने के ही सदृश यह शान्ति थी। भेड़े के भारी टक्कर मारने की तैयारी में पिछाड़ी दिशा में हटने की भाँति यह निस्तब्धता थी। एक धूल की बादल मात्र उसे दृष्टि से ओझल किए रही किन्तु बादल हटते ही एक वैज्ञानिक ने देखा कि ज्वाला-मुखी के शंकु का भींटा कहीं से धसकर नीचे गिर गया है। इसके बाद ही लावा की धारा उठने का उपक्रम प्रारंभ हुआ।

पेरिकुटिन के मुख्य शंकु के पार्श्व भाग में लावा की धारा फूटने के पूर्व डा० पौ नाम के वैज्ञानिक ने अपनी आखों से देखा जो वर्णन प्रकाशित किया था वह पठनीय है। उन्होंने लिखा है:—

"पेरिकुटिन के वर्तमान इतिहास में सबसे दर्शनीय घटना एक नवीन लावा की धारा फूटना था जो १० जून की संध्या को लगभग ७½ बजे घटित हुई।......लेखक ने उसका दर्शन कर लेने का निश्चय किया।.........इसका केवल एक मात्र ही उपाय था कि ढाल पर किसी तरह चढ़ा जाय जो छूने पर ठंडा और चढ़ सकने योग्य प्रतीत होता था। शिखर पर पहुँचने पर भींटे के ऊपरी किनारे से लगभग १० फीट नीचे दहकते कोयलों के अङ्गारे के समान, संसार की दृश्यमान होने वाला १०० फीट चौड़ी किसी भयानक भट्टी का दृश्य था। कुछ छाया-चित्र लेने के लिए केमरा साधा ही जा रहा था कि नीचे का तल कुछ हिलता जान पड़ा, इसलिए तनिक भी समय नष्ट किए बिना, चित्र लेकर तुरन्त विदा होना पड़ा। कुछ मिनटों में ही दहकता तल ऊपर उठा और बढ़ा,

भींटे के सिरे से बाहर गिर पड़ा और पहली तरल धारा बह चली। उसके ऊपरी तल पर ठोस ढोंके, चूर आदि भी साथ ही बहते चले। लावा तीव्र गति से बढ़ा क्योंकि वह एक मध्यम प्रकार की ढाल से गिर रहा था और एक घन्टे में ही कई सौ गज तक फैल पड़ा।"

बाद में लावा की यही धारा पेरिकुटिन गाँव तक भी पहुँची जो उस समय तक उजाड़ हो चुका था। उसके बचे-खुचे रूप को इस ने अपनी तह में दबा कर नष्ट कर दिया जिससे कुछ भी चिह्न न रह सके। पेरिकुटिन ज्वालामुखी ने अपने पार्श्व भाग में एक दूसरा छोटा ज्वालामुखी उत्पन्न करने का दृश्य आठ मास पश्चात् दिखाया था। इस क्षुद्र ज्वालामुखी ने भी उग्र रूप धारण कर उभाड़ प्रारम्भ किया। टूटे-फूटे ढोंके, लावा के बमगोले छूट कर इसका भी शंकु बना सके जो शाखा रूप में बंझा की तरह मुख्य शंकु के भाग से ही उठ कर २१० फीट ऊँचा हो सका। इसके बाद धीरे-धीरे मुख्य शंकु का उभाड़ तो बन्द हो गया और इस शाखा शंकु का ही उभाड़ होता रहा। मुख्य शंकु के मुख से केवल भाप और गैस भर निकल कर रह जाती।

जनवरी १९४४ में कुछ साहसी युवकों ने मौत के मुख में प्रवेश करने की भाँति मुख्य शंकु के कुंड में उतर कर अपने छाया चित्र (फोटो) उतार सकने में सफलता प्राप्त की। धुएँ से भरे इस कुंड में अपना प्रवेश इस चित्र द्वारा वे पत्रों में प्रकाशित करा सके। इसी मास में शाखा-शंकु का भी उभाड़ समाप्त हो चला और दूसरी दिशा में एक दूसरे शाखा शंकु का जन्म हुआ। उसमें एक विचित्र बात देखी गई। पहली दिशा के शाखाशंकु से स्नेह सा दिखाता हुआ यह द्वितीय शाखा शंकु अपने मुख से लावा फेंक कर मुख्य शंकु के चारों ओर परिक्रमा करा कर दूसरी दिशा की ओर बहाता। इधर प्रथम शाखा-शंकु की यह दशा हुई कि उसके मख

पर मनुष्य अपने पग रख कर चल सकता था। उसके भर कर ठंडे हो जाने से ऊपर चलना सम्भव हो सका था।

दूसरे शाखा-शंकु से निकले लावा की धारा ने चार मील दूर पहुँच कर सैन वान नगर को अपने संहार क्षेत्र में करने का साहस कर बड़ी हलचल पैदा कर दी। किसी प्रकार सहायता पहुँचा कर वहाँ के मनुष्यों को अन्यत्र पहुँचाया गया। इस प्रकार यह सारा घाटी का क्षेत्र ही मृत रूप धारण कर एक वृहद् श्मशान भूमि का उदाहरण बन सका। उर्वर घाटी को इस प्रकार सुनसान बनाने वाला संसार का नवीनतम ज्वालामुखी पेरिकुटिन एक वर्तमान काल की ऐतिहासिक घटना है जिसका वैज्ञानिकों को भली-भाँति अध्ययन करने तथा ज्वालामुखी के मर्म को समझने में सहायता पाने का अवसर मिला है। किन्तु बस्तियाँ ज्वाला और भस्म की कोख में समा गई हैं, मनुष्य की मृत्यु का नाम भले ही न हो परन्तु आकाश से मृत होकर पक्षी के भूमि पर गिरने का दृश्य दिखाई पड़ा है। सारे क्षेत्र में एक भी वृक्ष, लता, पौधा या घास का तिनका भी हरियाली नहीं दिखा सकता। मीलों तक काले, झुलसे, ठूंठ वृक्ष, पानी से सूखे हुए चश्मे, सर्वत्र राख, रेत, पथरीले चूर आदि का ही डरावना दृश्य रह गया है। वर्षा अब भी होती है किन्तु वह हरियाली खड़ी करने के स्थान पर राख और रेत की मोटी गीली तह बना कर कीचड़ के दलदल से केवल मार्ग दुर्गम बनाने में ही सहायक होती है।

यदि किसान डियोनिसियो के इस स्मृति-स्थल पेरिकुटिन तथा सैन वान आदि गाँवों की समाधि देखने जाना हो तो मेक्सिको नगर से रेलगाड़ी या मोटर द्वारा आप इस घटना स्थल से कहीं २० मील दूर उसआपन नगर में जाकर डेरा डाल सकते हैं। वहाँ से स्थानीय सवारियों का प्रबंध कर मोटर, बस आदि से आप कुछ

ओर निकट तक पहुँचने के लिए सड़क द्वारा मार्ग पा सकते हैं परन्तु यात्रा के अंतिम कई मील दूरी के भाग मोटर के चल सकने की शक्ति से बाहर है। आप राख, दूहे, रेत आदि पार कर या तो पैदल ही चलें या घोड़े वा टट्टुओं की सवारी की सहायता लें, तब कहीं पेरिकुटिन के दर्शन हो सकते हैं। सड़क वाले भाग में भी रेत, राख आदि की राशि इतनी अधिक संचित मिलेगी कि यदि पानी बरस गया तो कीचड़ की तह में मोटर के पहियों को अल्पकालिक समाधि ही लेनी पड़ेगी, आप की यात्रा स्थगित हो जायगी। यह पेरिकुटिन के दर्शन का आनंद होगा।

पेरिकुटिन-दर्शन की यात्रा में कुछ दूर ही रहने पर आप को एक काला दूहा क्षितिज से कुछ ऊपर उठा दिखाई पड़ेगा जिस में से भूरी धूम राशि बल खाती हुई उठती दिखाई पड़ेगी। दूहे के चारों ओर श्वेत वाष्प की शिखाएँ भी मँडराती ऊपर उठती दिखाई पड़ेंगो। निकट पहुँच कर आप शंकु की ऊपरी मेड़ या भींटे को एक दिशा में टूट कर नीचा बना देखेंगे। वहाँ मेक्सिको की सरकार द्वारा दर्शक-मंच बना दिखाई पड़ेगा जहाँ शंकु की परिक्रमा कर या उस दिशा में जा कर पहुँचा जा सकता है। ऊँची पहाड़ी पर जाते समय शीत का अनुभव होगा। भाग्य से कोई उष्ण पेय आप को शंकु के शिखर पर मिल गया तो अच्छा ही है। अन्यथा दर्शक-मंच तक पहुँच कर तो आप कुंड के गर्भ से उठते ताप से ही बाहर की शीत को भूल जायेंगे और नैसर्गिक उष्णता का लाभ उठा सकेंगे। धन्य है यह पेरिकुटिन जिसने कुछ गाँवों तथा किसानों को तो चुपके से उजाड़ा किन्तु विस्तृत मानवता को अपने प्राकृतिक दृश्य या आनंद लेने का अवसर देने के साथ-साथ आज के विज्ञान को भूगर्भ का मर्म समझाने, धरती की कोख का पदार्थ परख करने के लिए तत्काल उभाड़ होते और ज्वालामुखी का जन्म

धारण करते देखने का सुन्दर अवसर प्रदान किया है। कौन कह सकता है कि कोई नया पेरिकुटिन धरती पर अवतारित होने के पूर्व हमारा विज्ञान का ज्ञान इतना कभी भी नहीं हो सकता कि हम उसका आभास पाकर विशेष सावधानी से अध्ययन करने के लिए पहले से ही सन्नध रह कर अपनी प्रयोगशाला उसकी छाती पर न बैठा लें ! भविष्य की खोजों का आज क्या अनुमान किया जा सकता है !

———

विस्यूवियस

आज से लगभग २ सहस्र-वर्ष पहले की कहानी है। इटली में एक विद्रोही सेनानायक भाग कर कहीं एक पहाड़ी टीले के ऊपर जाकर छिप गया था। उस टीले के ऊपर छिपने का सुभीता था। किनारे-किनारे कुछ दीवाल सी उठी और बीच में गहरा चौड़ा भाग था। इस तसलेनुमे रूप की चोटी में अपने अनेक अनुयायियों के साथ उसने शरण ली, परन्तु राजकीय सेनापति उसका पीछा करते-करते वहाँ तक भी पहुँचा। विद्रोही सेनानायक स्पार्टेकस ने बचने की कोई अन्य अवस्था न देखकर उस चोटी के आखात में उगी लम्बी-लम्बी अंगूर की लताओं को तोड़ रस्सी सी बनाकर उसकी सहायता से नीचे जा कूदा और भाग गया। यह टीला विस्यूवियस ज्वालामुखी का मुख था जो उस समय ३ मील चौड़े फैले हुए रूप में था। उसके बीच में छिपी विद्रोही सैनिक-मंडली को घेरने के लिए राजकीय सेना के सैनिक भींटों से नीचे उतारे गए थे।

जो स्थान सैनिकों की लुका-छिपी और मार-काट का मैदान बना था, उसको कोई कैसे कह सकता था कि वह अंगारे की भारी भट्टी है जो शताब्दियों से चिनगारी न दिखा सकने से अपना स्वरूप छिपा बैठी है। इसके असली स्वरूप को स्पार्टेकस के शरण-स्थल बनने के कुछ वर्षों पश्चात् ही सन् ७६ ई० में देखा जा सका। जिस मुख में जंगली अंगूर की लताएँ उग आई थीं, जिसकी

बाहरी ढालों पर बाग-बगीचे, अंगूर के उद्यान तथा हरे-भरे खेत खड़े थे, उसकी लुभावनी स्थिति को इस विस्यूवियस राक्षस ने अपनी लंबी कुम्भकर्णी निद्रा तोड़ कर करवटें बदलते हुए स्मशान रूप में परिवर्तित किया। एक भयानक और अचानक विस्फोट ने भयंकर आग की वर्षा की। साक्षात् मृत्यु नृत्य करने लगी। आस पास के नगर विनष्ट होकर समाधिस्थ हो गए। इनमें हरकुलेनियम, पाम्पाई, स्टेविया आदि नगर थे जो किसी समय इसके अंचल में सुखपूर्वक अपने निवासियों को आश्रय और जीविका प्रदान करते आ रहे थे। शंकु का कुंड भी फट कर बड़ा हो गया। उसका भीटा टूट-फूट गया। उसके एक खंड को ही आज बचा हुआ पर्वत रूप में देख कर सोना शृङ्ग नाम दिया जाता है। इस पुराने भीटे के अवशिष्ट घेरे के भीतर दूसरा शृङ्ग कालान्तर में बनकर आज विस्यूवियस नाम से प्रसिद्ध है।

विस्यूवियस का धरातल पर आधार ३० मील के घेरे में होगा जो उसके प्राचीन भींटे का बचा-खुचा अंश चारों ओर फैलाए दिखाई पड़ता है। इस घेरे के अंदर विस्यूवियस की चोटी समुद्र तल से लगभग ४००० फीट ऊँची होगी। सन् ७९ ई० के पश्चात् कितने ही बार अनेक भयंकर उभाड़ों ने शंकुओं को तोड़-फोड़ कर नए-नए शंकु बनाने और अपने उभाड़े लावा से नए पुराने शंकुओं का मिश्रण कर कितने ही रूप बनाए, उनकी लम्बी ही कहानी है। परन्तु हम इसके ऐतिहासिक रूप से ज्ञात पहले उभाड़ की कुछ विशेष चर्चा करेंगे। इसके भी पूर्व इसका कब और किस रूप में उभाड़ हुआ था, इसका उल्लेख उपलब्ध नहीं, किन्तु लिखित रूप में प्रथम उभाड़ का सन् ७९ ई० में होना एक ऐतिहासिक घटना है। इसके बाद से जितने भी बार इसके उभाड़ समय-समय पर होकर भयंकर कांड उपस्थित करते रहे, उनके वर्णन विशद रूप से

उपलब्ध हैं। इस प्रकार हमें एक ज्वालामुखी का २ हजार वर्षों का वर्णन विस्तृत रूप में जिस प्रकार प्राप्त होता है उतना संसार के किसी भी अन्य ज्वालामुखी का नहीं मिलता। इन वर्णनों को सबसे प्राचीन रूप से लेकर आधुनिक समय तक का पाकर देखते हैं कि विस्यूवियस एक प्रबल रूप का जागृत ज्वालामुखी है जो बीच-बीच में सैकड़ों या पचासों वर्ष तक जब-तब शान्त रहकर भी रह-रह कर दो सहस्र वर्ष तक उभड़ता ही आया है।

सन् ७६ ई० के ज्ञात रूप का प्रथम उभाड़ का वर्णन हमें प्लिनी नाम के एक नवयुवक के लिखित पत्र रूप में प्राप्त होता है जिसे आँखों देखा वर्णन कहा जा सकता है। नेपल्स की खाड़ी के सम्मुख जहाँ नेपल्स नगर बसा हुआ है उसके दक्षिण-पूर्व की ओर सात मील दूर विस्यूवियस अवस्थित है। इस खाड़ी के पश्चिमी तट पर विस्यूवियस से लगभग १८,२० मील दूर पश्चिम की ओर मिसेनम नामक नगर था। वहाँ पर ही प्लिनी अपने चचा तथा अन्य शरणार्थियों के साथ सुरक्षित रहने के लिए ठहरा था। उसके चचा का भी नाम प्लिनी था जो एक साहसी व्यक्ति था। उसने विस्यूवियस के उभाड़ के पश्चात् अपने इस भतीजे को अन्य लोगों के साथ मिसेनम ही में छोड़ कर इस ज्वालामुखी के प्रकोप को निकट से देखने तथा कुछ मित्रों को बचा लाने के लिए नौका से यात्रा की। उसकी नौका पूर्व तट स्टेविया नगर के सामने जा खड़ी हुई जहाँ उसे अपने मित्रों को जीवित दशा में देखने पर बचा लाने की आशा थी, किन्तु ज्वालामुखी की भयंकर अग्नि-वर्षा ने ऐसी अग्नि-प्रलय मचा दी थी कि चचा प्लिनी को स्वयं ही अपने प्राण दे देने पड़े। वह लौट कर न जा सका। इधर स्टेविया का ध्वंस हो गया था। उससे भी अधिक ज्वालामुखी के निकट के नगर पाम्पई और हरकुलेनियन का तो कुछ ठिकाना ही नहीं था।

ज्वालामुखी के दृश्य का वर्णन सिनी के कुछ शब्दों में देना अधिक उपयुक्त होगा। उसने लिखा है :—

"घरों से यथेष्ठ दूरी पर पहुँच कर हम लोगों ने एक अत्यन्त भयानक तथा संकटाकीर्ण दृश्य चुपचाप खड़े होकर देखा। हम लोगों ने जिन रथों को साथ ले जाने के लिए लिया था, वे समतल भूमि पर खड़े रहने पर इतना आगे पीछे आन्दोलित हो रहे थे कि हम बड़े पथरीले ढोकों की आड़ लगा कर भी स्थिर नहीं रह सकते थे। समुद्र उमड़ कर उलट जाता प्रतीत हुआ, और धरती की सिहरन तथा कंपन के लिए तट से पीछे भागता दिखाई पड़ा। कम से कम इतना तो निश्चित है कि तट पर्याप्त विस्तृत हो गया था और अनेक समुद्री जंतु उस पर पीछे छूटे रह गए थे। दूसरी ओर एक काला और डरावना बादल अंगारे के सर्पाकार बल खाते हुए बवंडर की भाँति उमड़ कर आग उगलता जो बिजली की चमक से दीखते किन्तु उससे भी आकार बड़ा दीख पड़ता।......राख अब हम लोगों के ऊपर आकर गिरने लगी, यद्यपि मात्रा कम ही थी। मैंने अपना मुँह फेरा और अपने पीछे एक घना धुआँ देखा जो हम लोगों के पीछे एक अंधड़ की तरह आया।

"हमने मंत्रणा दी कि दिन रहते ही मुख्य मार्ग से हट जाया जाय अन्यथा हम लोगों के पीछे अंधेरे में जो भीड़ आती जायगी उससे हम लोग पिस जायेंगे। हम लोग मार्ग से अभी हट भी न पाए थे कि हम लोगों को अंधकार ने घेर लिया, वह एक बदली की रात या अमावश्या की तरह की अंधेरी नहीं थी, बल्कि एक ऐसे कमरे की अंधेरी थी, जिसके सब द्वार बन्द हों और दीपक बुझा दिए गए हों। उस समय यदि कुछ भी सुनाई पड़ सकता था तो वह था अबलाओं का विलाप, बच्चों का रुदन तथा अधेड़ों की पुकार; कोई अपने बच्चों को पुकार रहे थे, कोई अपने माता-पिता को बुला रहे थे,

कोई अपने पतियों को आवाज दे रही थीं, सब लोग ध्वनि से ही एक दूसरे को पहचान सकते थे, कोई अपने दुर्भाग्य को रो रहा था, कोई अपने परिवार के लिए बिलख रहा था, कोई मृत्यु की शंका से ही मृत्यु के क्रोड़ में स्थान पाने की इच्छा कर रहा था। कोई अपने इष्ट देवों को पुकार रहा था, किन्तु अधिकांश की यही कल्पना थी कि काल रात्रि का आगमन हो गया है जो देव-लोक और नरलोक दोनों का ही लोप कर देगी। उनमें से बहुतेरे ऐसे थे जो कुछ यथार्थ संकट में अपनी काल्पनिक विपत्ति का भारी योग कर देते थे और भयग्रस्त जनता को यह विश्वास दिला देना चाहते थे कि मिसेनम यथार्थ में दहक रहा था।

"अन्त में एक मन्द ज्योति उद्भासित हुई, जिसे हम लोगों ने सोचा कि अंगारों के गिरने की यह अग्रसूचना ही है और यथार्थ में दिन के प्रादुर्भाव के स्थान पर यही बात थी भी। तथापि अंगारा हम लोगों से कुछ दूर गिरा, इसके बाद हम लोग फिर घोर अंधकार में निमग्न हो गए और हम लोगों पर घनघोर राख की वृष्टि होने लगी जिसे हम लोगों को जब-तब अपने शरीर पर से झाड़ कर हटाना पड़ता अन्यथा हम लोग पिस कर उसी में समाधिस्थ हो जाते।

"मैं इस बात का अभिमान कर सकता हूँ कि इस संकटपूर्ण दृश्य के मध्य कोई भी चीत्कार या भय का द्योतन मेरे मुँह से नहीं निकला जिसका एक मात्र कारण यही सान्त्वना थी कि सभी मानव-वर्ग इस व्यापक संकट में ग्रस्त हैं और मैंने कल्पना की कि मैं भी इस संसार के साथ ही मिट रहा हूँ।

"अंत में शनैः-शनैः एक धुएँ के बादल की तरह यह भयावह अंधकार लोप हो चला, यथार्थ दिवस का पुनरागमन हुआ, और शीघ्र ही दिवाकर के भी दर्शन हुए, यद्यपि वह मन्द ज्योति ही थे मानो सूर्यग्रहण लगा हो। जिस किसी भी वस्तु पर हम लोगों की

दृष्टि जाती—जो क्षीण शक्ति की हो गई थी, वह श्वेत भस्म से आवृत एक परिवर्तित रूप की ही दिखाई पड़ती मानो उस पर घना हिम आच्छादित हो गया हो।"

यह प्लिनी का विस्यूवियस के प्रकोप का १८ मील दूर से आँखों देखे दृश्य का वर्णन है जो दो हजार वर्ष से सुरक्षित हमें पढ़ने को मिलता है।

विस्यूवियस का यह इतिहास-प्रसिद्ध उभाड़ एक विस्फोट रूप में २४ अगस्त सन् ७९ ई० को हुआ था जिसमें केवल पत्थर के
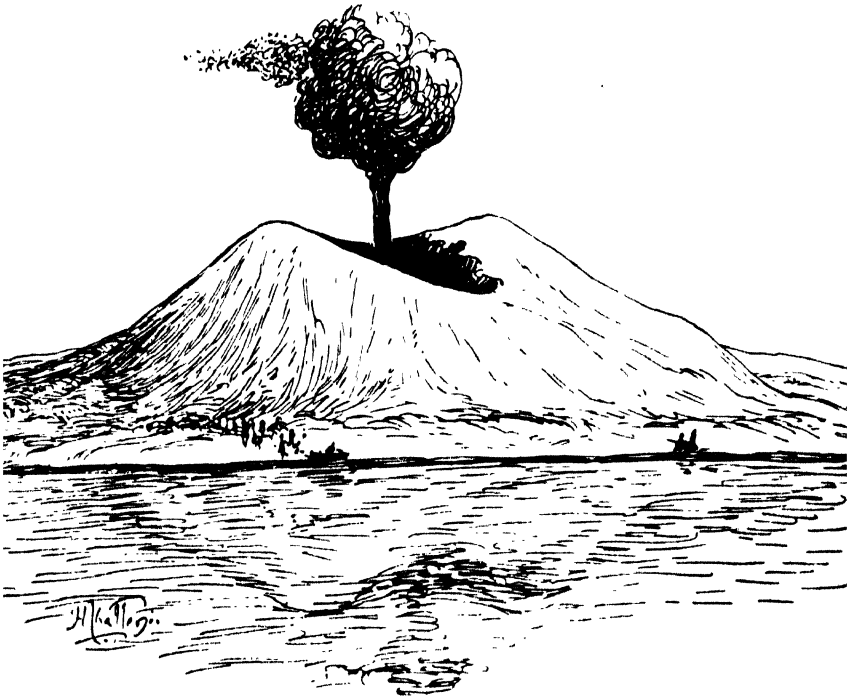
चित्र १६—विस्यूवियस।

ढोंके, चूरे, रेत, भाप तथा बमगोले ऊपर फेंके गए थे, भाप की भी अधिकता थी किन्तु लावा का उद्गम नहीं हुआ था। पहले मुख

पर से एक मोटी धूम-राशि निकल कर चीड़ के वृक्ष की भाँति ऊपर फैली और नीचे लम्बी दिखाई पड़ी। यह फिर फैलकर आकाश में छा गई। धरती काँपने लगी, भूकंप प्रारम्भ हुए, समुद्र का पानी वेग से ऊपर नीचे होने लगा। फिर धुएँ रूप में उठी भाप की गहरी तह में पर्वत-शिखर छिप गया, उसके कुंड से दहकती वस्तुएँ आकाश में उठकर विद्युत-संचार का भयानक दृश्य प्रकट करने लगीं। ज्वालामुखी के गर्भ में भयानक धड़ाकों और विस्फोटों की ध्वनि उठनी प्रारंभ हुई। चारों ओर घोर अंधेरा छा गया। दिन अंधेरी रात में परिणत होता देखा गया। फिर छिद्रमय पाषाण-खंड (प्यूमाइस) बरसने लगे। फिर भारी ढोकों को भी तोप के गोलों की भाँति ऊपर फेंके जाते देखा जाने लगा। पाम्पाई नगर के लोगों ने रात को यम की रात्रि ही समझा। घर में रहने पर दीवालें कांपतीं, बाहर जाने पर दहकती राख बरसती। कहीं भी शरण नहीं थी। भागने वालों में कोई सिर पर रक्षा के लिए गट्ठर रख लेता, कोई तकिया से ही सिर ढका रख कर भागने का उद्योग करता। इन दृश्यों को पाम्पाई की खुदाई होने पर जाना जा सका। भाप के पानी रूप में होने से राख, रेत आदि सन कर एक कीचड़ की जो भयानक नदी बहा ले चले, उसमें हरकुलेनियम नगर जमकर समाधि बन गया। उसको डेढ़ हजार वर्ष तक किसी ने नहीं देखा। सन् १७०० ई० में उसके अन्दर से संगमरमर के टुकड़े और मूर्तियाँ खोद-खोद कर ले जाते लोगों को देखकर वहाँ नगर होने का अनुमान होने पर खुदाई प्रारम्भ हुई। तब उसका धीरे-धीरे सुंदर दृश्य ज्ञात होने लगा। मनुष्य के शव अधिक न मिलने से यह अनुमान किया जाता है कि बहुत से लोगों को भाग कर प्राण बचाने का अवसर मिल गया होगा। पाम्पाई कीचड़ की जगह राख में दबा पड़ा था। अतएव उसकी भी खुदाई हरकुले-

चित्र १७—पाम्पाई का भग्ननगर।

नियम के ज्ञान के बाद प्रारम्भ हुई तो खुदाई में सुविधा होने से वहाँ थोड़े समय में ही अधिक दृश्य प्रकट हो सका। ये दोनों नगर अपनी संहार-लीला के डेढ़ हज़ार वर्ष तक छिपाए रखने के बाद प्रकट कर सके।

हरकुलेनियम की खुदाई में कितनी ही कला की वस्तुएँ प्राप्त हुईं। विशाल नृत्यशाला, भव्यमूर्तियाँ, तथा वृहद् पुस्तकालय को देखा जा सका। पुस्तकालय में 'अधझुलसी १८०० पुस्तकें भी प्राप्त

की जा सकीं जिनमें से बड़ी ही कठिनाई से ३०० पुस्तकें पढ़ी भी ली जा सकीं। पाम्पाई में भी सार्वजनिक विनोदशाला तथा सार्वजनिक भवन बने मिल सके। राख के अन्दर शवों के ढाँचे में तरल प्लास्टर डालकर उनकी प्रतिमूर्ति उतार लेने में भी सफलता मिल सकी है जिससे उस समय के मनुष्य की मूर्ति का चित्र प्रत्यक्ष देखा जा सके।

सन ७६ ई० के इस विस्फोट के पश्चात् खुदाई के पूर्व अन्य विस्फोटों का मलमा उन स्थानों को और भी अधिक ढकने में सहायक हो सकता था। ४७२ ई० में एक ऐसा उभाड़ हुआ था जिससे निकली राख, मलमा आदि की तह उनपर जम सकी होगी।

सन् १६३१ ई० में एक इतना भयंकर उभाड़ हुआ कि उसमें से लावा की सात लहरें फूट निकलीं। मार्ग के सभी ग्राम भस्म हो गए। कुल १८००० मनुष्यों की मृत्यु हुई। इस उभाड़ के पश्चात् कुछ न कुछ उभाड़ विस्यूवियस में बराबर होता रहता है। द्वितीय महायुद्ध के समय भी एक बार लावा का ऐसा उभाड़ हुआ कि उसके अंचल में बने हवाई अड्डे पर संकट आ उपस्थित हुआ। १८ मार्च सन् १६४४ ई० को यह उभाड़ प्रारम्भ हुआ। भूकम्प कई दिनों पूर्व से ही आकर इस उभाड़ की सूचना दे रहा था। इस दिन प्रकोप की अधिकता होने से लावा का उभाड़ प्रारम्भ हुआ। कुंड के तल में कई दरारें फट गई जिनसे लावा निकल-निकल कर भीटे के ऊपरी सिरे तक पहुँच गया तथा चारों ओर नीचे गिर कर बहने लगा। २० मार्च को शान्त उभाड़ का अन्त होकर विस्फोट की क्रिया प्रारम्भ हुई। भाप, राख, रेत, ढोंके, तथा लावा-खंड आकाश में वेग पूर्वक फेंके जाने लगे। साथ ही लावा भी निकलता ही रहा जिसका फैलाव खेत, गाँव तथा अंगूर के उद्यानों में होता रहा। ज्वालामुखी के शिखर तक यात्रियों को

पहुँचाने के लिए पर्वतीय रेलगाड़ी की जो सड़क थी, वह लावा की तह के नीचे, दब गई। ३० फीट गहरी और ६०० फीट लावा की धारा फैल सकी थी।

इस समय नेपल्स नगर ब्रिटिश तथा अमेरिकन सेनाओं (मित्र सेना) के अधिकार में था। अतएव सेना के अधिकारियों ने निकट से इस उभाड़ को देखा और इसके प्रसार का निरीक्षण करते रहे। लावा की एक धारा ३० फीट ऊँची और १०० गज चौड़ी अपनी जीभ लपलपाती हुई २१ मार्च को सैनसेबास्टियानो नामक कस्बे की ओर बढ़ती आने लगी जिसकी आबादी ढाई हजार थी। इस लहर के संहार कार्य को संवाद-पत्रों के प्रतिनिधियों तथा सैनिक अधिकारियों ने देखा। कस्बे में पहले एक किसान का घर पड़ता था। उस पर लावा का प्रहार प्रारम्भ हुआ। ८ फीट ऊँचा बाँध बीच में था। आशा थी कि लावा की लहर कदाचित उधर ही रुक जाय, परन्तु उसने बाँध को पार कर लिया। अब पत्थर के बने मकान की बारी आई। लावा के चपेट में मकान भस गया और मुख्य सड़क से आगे बढ़ा। बड़े ही सुन्दर-सुन्दर मकान सड़क के किनारे खड़े थे। पाठशाला-भवन भी सुन्दर बना हुआ था। दो ही घण्टे में यह सब कुछ नष्ट होकर लावा के पेट में चला गया। इस बस्ती को सैनिक अधिकारियों ने जब बचने की आशा न देखी थी तो सब लोगों को मकानों से बाहर निकाल देने की आज्ञा दे दी थी। बहुत से लोग तो पहले ही चले गये थे किन्तु कितने हठकर मोह वश अड़े पड़े थे। सब घरों के ताले बंदूक के कुंदों से तोड़-तोड़ कर एक-एक घर की भली-भाँति देख-भाल कर बलपूर्वक सब लोगों को बाहर कर बचा लिया गया। लावा के मार्ग में एक कुआँ भी मिला। उसमें ऊपर लावा की तह फैल कर नीचे तक भी भर गई। साथ ही पानी खौल उठा
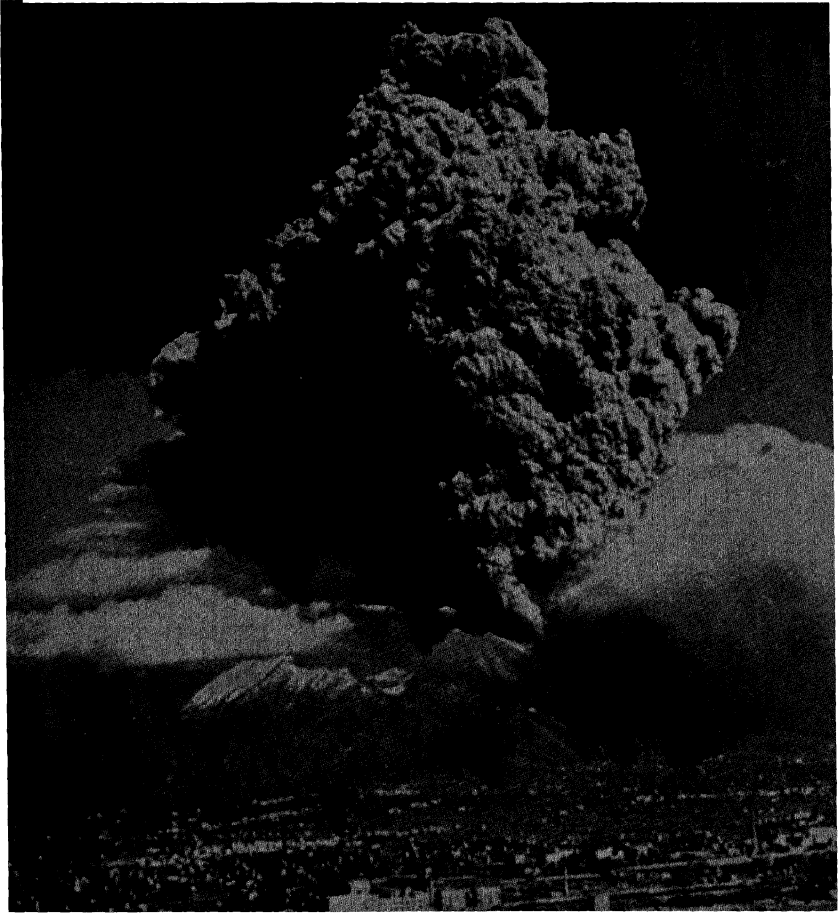
चित्र १८—विस्यूवियस का उद्गार।

और ऊपर गीसर का दृश्य उपस्थित कर उछल पड़ा। कुआँ भठ गया।

इन सत्यानाश और भगदड़ के दृश्यों के बीच एक विज्ञान

साधक अपने को सङ्कट में डालकर हठ कर पीछे ज्वालामुखी के समीप अपनी वेधशाला में पड़ा रहा। वह बार-बार अपने यंत्रों को देखता, बाहर लावा की चाल नापता, तापमान लेता। इन सब परीक्षाओं में लगे हुये उसे अपनी रक्षा की तनिक भी चिन्ता नहीं थी। इस वैज्ञानिक का नाम प्रोफेसर ग्रिसेपो इम्बो था जो विस्यूवियस राजकीय वेधशाला का सञ्चालक था और जिसे ज्वालामुखी विज्ञान का अधिकारपूर्वक ज्ञान था। उसने सैनिक अधिकारियों की चेतावनियों की चिन्ता किये बिना ही ज्वालामुखी के उभाड़ के भीषण चार दिनों तक अपनी भीषण परीक्षा जारी ही रक्खी। इधर सैनिक अधिकारी लावा की प्रगति देख जनता को बस्तियों से हटाने की व्यवस्था में लगे रहे।

अन्त में जब प्रोफेसर इम्बो ने अपनी परीक्षाओं से यह समझा कि लावा का कोप शान्त हो रहा है तो उन्होंने तुरन्त ही पैदल ४ मील दूर चलकर तुरंत ही सैनिक अधिकारियों को सूचना दी कि अब लावा की प्रगति अधिक आगे नहीं हो सकती। इसलिए बचे भाग में लावा के मार्ग में आशंकित स्थलों से सर्वसाधारण को रक्षा के लिए पृथक हटा ले जाने की कोई आवश्यकता नहीं। यह सूचना बहुत लाभकर सिद्ध हुई और इससे प्रोफेसर इम्बो की लगन का प्रमाण भी मिल सका। जनता अनावश्यक कष्ट उठाने से बच गई। सब की चिन्ताएँ दूर हुईं।

ज्वालामुखी के उद्‌गारों को देखकर यह सोचा जा सकता है कि लोग सदा उनसे दूर ही क्यों नहीं रहते किन्तु संसार में जीविका की कठिनाइयाँ जैसी विकट हैं तथा जन-संख्या इतनी बढ़ती जाती है कि सहज ही उपज कर सकने वाले स्थलों को लोग कुछ भय की आशंका होने पर भी छोड़ना उचित नहीं समझते; परन्तु अब सब देश की सरकारें ऐसे क्षेत्रों से संकट की सूचना या सम्भावना
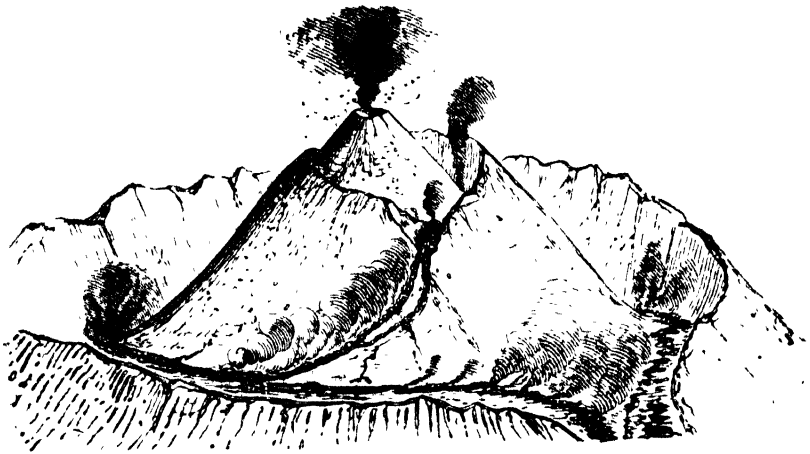
चित्र १६—सन् १७५६ ई० में विस्यूवियस का शंकु।

ज्ञात होते ही मनुष्यों के बचाव की व्यवस्था रखती हैं। अतएव ज्वालामुखियों के प्रकोप से नरसंहार की अब अधिक आशंका नहीं की जा सकती। भाप का उभाड़, भूकम्प आदि इसकी पूर्व सूचना भी देकर सावधान करते ही हैं।

विस्यूवियस के पिछली कुछ शताब्दियों के उभाड़ में १७६४ ई० में आधी मील लम्बी दरार से लावा निकला था वह समुद्र तक जा पहुँचा था। सन् १८७२ और १६०६ ई० में भी दो भयंकर उभाड़ हुए थे। १८७२ ई० में पहले भूकम्प का उभाड़ हुआ फिर २०००० फीट तक ऊँची भाप की घनी मात्रा उठी। लावा के बम-गोले ४००० फीट की ऊँचाई तक फेंके गए। शंकु के बगल से भी अनेक दरारों द्वारा लावा निकला। कुछ गाँव भी नष्ट हो गए। लेकिन अधिक जन-हानि नहीं हुई। सन् १६०६ ई० में वेधशाला के संचालक के कथनानुसार वेधशाला के चारों ओर लावा की धारा निकट तक फैल गई। दहकते हुए हजारों पत्थर के ढोंके २, ३ हजार

फीट तक ऊपर फेंके जाते रहे। भूकम्प की भारी लहरें उठीं। भूकंप-मापक यंत्र टूटने-टूटने हो जाता रहा। ३, ४ इञ्च मोटी लाल रेत की तह वेधशाला में जम गई। पहले के उभाड़ों से अधिक रेत और धूल उठी। नेपल्स नगर के घरों में छतें रेत से ढक गईं। इस प्रकार हम देखते है कि विस्यूवियस शताब्दियों से उभड़ता ही आता रहा है।

— —

क्राकाटाओ

क्राकाटाओ का विस्फोट एक अत्यन्त प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटना है। यह ज्वालामुखी सुन्डा के मुहाने में इस नाम के द्वीप पर अवस्थित है। सुन्डा का मुहाना चीन सागर को हिन्द महासागर से संयुक्त करता है और सुमात्रा तथा जावा के मध्य है। पहले यह द्वीप कदाचित् कई द्वीपों को मिलाकर किसी एक ज्वालामुखी का शीर्ष भाग रहा होगा जिसकी ऊँचाई १०००० की रही होगी और मुख की परिधि २५ मील होगी। इस द्वीप में दो सौ वर्ष तक ज्वालामुखी का उभाड़ नहीं हुआ था। वह सुप्तावस्था में पड़ा हुआ था। अतएव इसके तल पर हरी-भरी भूमि दिखाई पड़ती थी, घना जङ्गल छाये हुये था। इसी रूप में रहते हुये सन् १८८० ई० में इसमें भूकम्प के उग्र कम्पन उत्पन्न होते दिखाई पड़े जिनका प्रभाव दूर तक पहुँचता दिखाई पड़ा। अंत में २० मई, सन् १८८३ ई० को भयानक विस्फोट प्रारम्भ हुआ। उसमें तोपों की गड़गड़ाहट के समान शब्द उत्पन्न हुये जिनको १०० मील दूर तक सुना जा सकता था। दूसरे दिन धूल, राख उड़ी जो दोनों ओर समुद्र तल को पाट सकीं। २६ मई को जब वहाँ एक पर्यवेक्षक दल उतरा तो उसने सारी भूमि पर श्वेत भस्म बिछी देखी मानों गहरा पाला पड़ा हो और धरती पर उसकी गहरी तह जम गई हो। एक जगह से भाप की लहर भी ऊपर उठकर १०००० फीट ऊँचाई तक पहुँच रही थी जिसमें धूल और झाँवानुमा छिद्रमय पाषाण-खण्ड

(प्यूमाइस) उभड़ रहे थे। इनकी चारों ओर वर्षा सी होती रहती थी। तीन मासों तक यही दृश्य रहा। अंत में २६, २७ अगस्त को विस्फोट की पराकाष्ठा पहुँची।

सुंडा का मुहाना जहाजी मार्ग के मध्य पड़ता है, अतएव इस इतिहास-प्रसिद्ध घटना को आँखों देखने वाले जहाज भी हो सकते थे। कुछ जहाज के कप्तानों ने बहुत दूर से इस दृश्य को देखने का अवसर प्राप्त किया। एक ने लिखा है कि उसने आकाश में अत्यन्त ही विकट दृश्य देखा। ज्वालामुखी के ऊपर धूम-राशि एक देवदार वृक्ष की तरह दिखाई पड़ती थी जिसमें ऊपर उठते स्तंभवत धूम तथा अङ्गार के भाग को तना समझा जाता तथा ऊपर आकाश में जाकर फैले हुये भाग को धूम और अङ्गारों युक्त डालियों तथा पत्तियों और फल-फूल की भाँति माना जा सकता। सन्ध्या के पश्चात् बादलों का दृश्य रक्त-रङ्ग का दिखाई पड़ता जिसके किनारे पीले रङ्ग के प्रतीत होते। इसी के बीच बिजली के कौंधने के समान प्रकाश-रेखाएँ उठती दिखाई पड़तीं।

एक दूसरे जहाजी कप्तान ने लिखा है कि अंगारों की शृंखलाएँ उठ कर आकाश में उमड़तीं और अग्निकन्दुक बमगोले रूप में उठ कर अनवरत पर्वत के निम्न अंचल की ओर लुढ़कते जाते। बिजली की अद्भुत आभा का दृश्य भी इस विस्फोट में देखने को मिला। एक विचित्र ही रूप की गुलाबी रङ्ग की लपट बादलों से उतर कर इन जहाजों के मस्तूल तथा बादवान पर गोले रूप में आकर मढ़ी दिखाई जान पड़ती। पचास मील की दूरी पर के एक जहाज पर तो ६ बार विद्युतधारा की चोट पड़ती ज्ञात हुई, और पंक की वर्षा से मस्तूल तथा बादवान पटे से दिखाई पड़ते, जो एक द्युति-मय छवि दिखा रहे थे। जहाज के सभी खलासी तो इन दृश्यों से ऐसे भयभीत हो गए कि उन्होंने काम ही छोड़ दिया।

ऐसा भीषण दृश्य उन्होंने तो अपने जीवन में कभी भी नहीं देखा था।

२७ अगस्त को अड़ोस-पड़ोस के समुद्री क्षेत्रों के जहाज बिल्कुल ही घने अन्धेरे में निमग्न हो गए जिसके साथ ही राख तथा छिद्रमय पथरीले ढोंकों की भी उन पर वर्षा होती रही। विस्फोट की प्रबलता इतनी अधिक हुई कि तीन सहस्र मील दूर तक वह अनुभव की जा सकी। उससे इतनी प्रबल वायु-लहरें उत्पन्न होती पाई गईं जैसे पहले कभी भी अनुभव नहीं किया जा सका था। खिड़कियाँ उखड़ गईं, दीवालें चटख गईं, दीप-स्तम्भों से दीप उछाल फेंके गए, गैस के प्रकाश नगरों में बन्द हो गए, ये सब दृश्य १०० मील दूर तक के स्थान में दिखाई पड़े। वायु की कुछ लहरें तो धरती की कई बार परिक्रमा कर सकीं तथा जल-तल के नीचे से इतना अधिक स्थल भाग उड़कर लुप्त हो गया कि समुद्र की भारी लहरें उमड़ कर ४०० मील प्रति घन्टे के वेग से जावा तथा सुमात्रा के तटों तक जा टकराईं। गाँव और नगर बह गए। दो समुद्री प्रकाश-गृह भस्मसात हो गए। लगभग ३६००० मानव काल-कवलित हो गए।

अंजेर नाम का एक नगर इन लहरों की चपेट में ध्वस्त हो गया था। वहाँ के निवासियों में केवल कुछ व्यक्ति अपने प्राण बचा सके। उनमें से ही एक ने अपनी विपत्ति-गाथा में इस संहार-क्रिया का आँखों देखा वर्णन किया है। उसने लिखा है कि प्रातः काल वह तट पर वायु-सेवन कर रहा था। नित्य की तरह सूर्य निकलने का उपक्रम होता नहीं जान पड़ा। आकाश धूमिल उदास दृश्य दिखा रहा था। पिछले दिन का अन्धकार कुछ दूर हो गया था किन्तु तब भी अच्छा प्रकाश नहीं निकला था। इतने में एक अन्धकारमय काली वस्तु इस उदासी को चीरकर निकट आती

दिखाई पड़ी। पहले तो ऐसा ज्ञात होता था कि कोई छोटी पर्वत-मेखला जल तल के ऊपर उठ सी रही है किन्तु मैं जानता था कि वैसी कोई वस्तु उधर नहीं थी। दूसरे ही क्षण—और वह भी बड़ी ही त्वरावेग से—मुझे विश्वास हो गया कि यह कोई ऊँची, कई फीट उठी पानी की लहर है और दुर्भाग्य यह कि वह नगर के निकट ही तट से टकराएगी। चेतावनी देने का तो अवसर ही नहीं था। मैं पलटा और स्वयं अपने प्राण बचाने की चिन्ता में भाग चला। अब मेरी आयु दौड़ने की नहीं रह गयी थी, किन्तु फिर भी मैं खूब दौड़ा। कुछ पल बाद ही मैंने लहर को तट से टकराने की ध्वनि सुनी। प्रत्येक वस्तु जलमग्न हो गयी। दूसरी बार दृष्टि डालते ही चहुँधा घर बह जाते और वृक्ष धराशायी हो जाते दिखाई पड़े। सांस फूल जाने और क्लान्त हो जाने पर भी मैंने भागने का प्रयत्न जारी ही रक्खा। अपने पीछे लहर के उमड़ आने का शब्द जो मुझे सुनाई पड़ता, उससे मुझे ज्ञात हो रहा था कि मेरे प्राणों के लाले पड़ रहे हैं। मैं भागता ही गया। कुछ पग और बढ़ने पर एक कुछ उँचान की भूमि पर मैं पहुँच गया और यहाँ मेरे पीछे लहर आधमकी। मैंने सारा प्रयास व्यर्थ होते अनुभव किया, क्योंकि मुझे विस्मय के साथ दिखाई पड़ रहा था कि लहर उस समय भी कितनी ऊँची है। पानी की धारा में मेरे पैर उखड़ गए और इस दुर्दम्य जल-राशि द्वारा मैं सूखी धरती पर वाहित हो चला। इसके बाद क्या हुआ, इसकी तो मुझे उस समय तक की सुधि नहीं जब कि एक चपेट से मेरी मूर्च्छा भङ्ग हुई जान पड़ी। कोई ठोस कठोर वस्तु मेरी पहुँच में जान पड़ी और उसे पकड़ कर मैंने देखा कि एक सुरक्षित स्थान पर पहुँच गया हूँ। पानी आगे बढ़ गया किन्तु मैंने अपने को एक खजूर के वृक्ष से अटका पाया। नगर के निकट के अधिकांश वृक्ष धराशायी हो गए थे और मीलों दूर फेंक दिए

गए थे। परन्तु सौभाग्य वशात् यह वृक्ष अकेला बच गया था जिसके साथ मेरी भी रक्षा हो गयी।

दुर्गम लहर बढ़ती गयी, शनैः शनैः उसकी ऊँचाई तथा शक्ति क्षीण होती जा रही थी, अन्त में नगर के पीछे का पर्वतीय अञ्चल आ गया। तब उसकी दुर्धर्षता शान्त हुई और पानी धीरे-धीरे पीछे हटने लगा तथा समुद्र में वापस चला गया। उस पानी के पीछे हटने का दृश्य हमारी आँखों के सामने अब भी नाच रहा है। खजूर वृक्ष से चिपका, भीगा और थका हुआ जहाँ मैं पड़ा हुआ था, वहाँ पास से ही बहकर जाते मेरे कितने ही मित्रों और पड़ोसियों के मृत शव दिखाई पड़ रहे थे। कुछ इने गिने नगरवासी ही बच सके। मकान और वृक्ष पूर्णतया ध्वस्त हो गए थे और जहाँ पहले व्यस्त, इठलाता जनाकीर्ण नगर खड़ा था, अब उसका कुछ भी अवशिष्ट चिन्ह देख सकना कठिन ही था। जब तक आँख स्वयं इस ध्वंसलीला स्थल को न देख आवें तब तक आपको विश्वास नहीं हो सकता कि किस प्रकार पूर्ण रूपेण नगर का विलोप हो गया है। मृत शव, धराशायी वृक्ष, ध्वस्त भवन, एक पंकिल भूमि तथा कतिपय जल-कुंड ही रह गए हैं जो उस नगर की स्मृति हो सकते हैं।

इस भयंकर विस्फोट वाले ज्वालामुखी के द्वीप, क्राकाटोआ, का नाम पहले किसी ने सुना भी न था। ऐसे कितने ही छोटे-मोटे अन्य द्वीप महासागरों में भरे पड़े हैं। कुछ जावा और सुमात्रा के निवासी अपने डोंगों को इस द्वीप पर वन्य रूप में उत्पन्न होने वाले फलों की खोज में आया करते थे। इसी शान्त रूप से पड़े हरियाली से लदे द्वीप को जो प्रारम्भिक उभाड़ करते देखा गया उसकी धूम-राशि ७ मील तक ऊँची उठती दिखाई पड़ी थी। धूल, रेत आदि ३०० मील तक उड़ कर पहुँचती दिखाई पड़ी। मुख्य उभाड़ के

पूर्व १४ सप्ताहों तक यह धीरे-धीरे ही अपना रोष प्रकट कर मानों शक्ति की परीक्षा करता रहा जिससे किसी दिन अधिक से अधिक बल अकस्मात ही दिखा सके। पहले इस द्वीप में कभी ज्वालामुखी उभड़ने की बात सुनी गई थी, किन्तु इधर दो सौ वर्षों से कोई उभाड़ न होने से इसे विलुप्त समझा जाने लगा था किन्तु इस पर कोई बस्ती नहीं थी। कभी-कभी डोंगे आते, फल लाद कर वे माँझियों के साथ फिर वापस चले जाते। अतएव यथार्थ भयंकर विस्फोट को निकट से देखने वाला कोई भी व्यक्ति नहीं था। फिर भी दूर से देख सकने वाले भी त्राहि-त्राहि की पुकार किए बिना
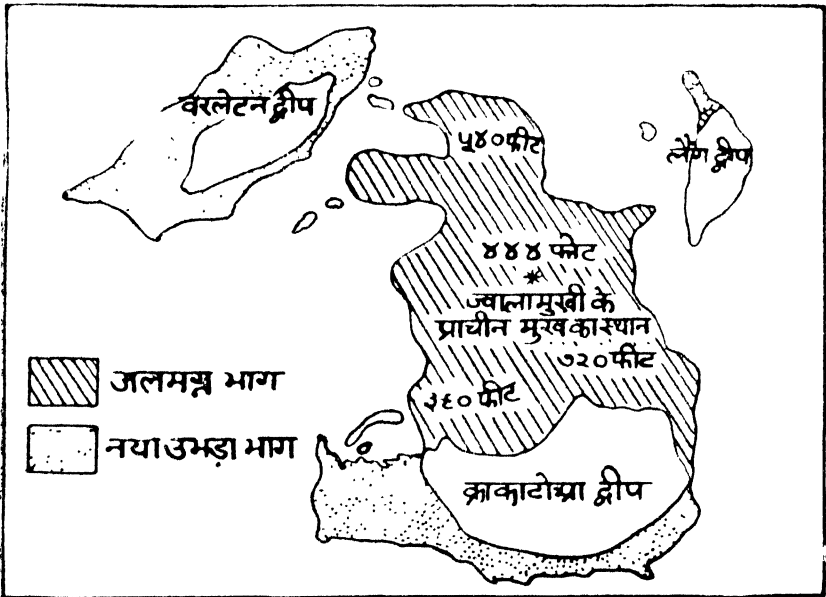
चित्र २१—क्राकाटाओ का मानचित्र।

न रह सके। २६ अगस्त को इतना घना धुआँ उठा कि सम्पूर्ण द्वीप उसकी गहरी ओट में छिप गया। धुएँ के ये बवंडर सत्रह

मील ऊपर तक उठे होंगे। रह-रह कर उसमें से डरावनी ध्वनियाँ उठती रहतीं। पत्थर बरसते, जो दस मील दूर तक जाकर गिरते। बिजली की कौंध धुएँ का कलेजा चीर कर भयानक दृश्य उपस्थित करती। उपद्रव बढ़ता ही गया। दूसरे दिन के चार भीषण धड़ाके अपनी भयंकरता से धरती, आकाश और समुद्र का कलेजा कँपा देने वाले प्रकट हुए। इनमें तीसरा धड़ाका ही सबसे भयानक था जिसका अत्यंत व्यापक परिणाम हो सका। मानव-इतिहास में इतना विकराल विस्फोट शायद ही हुआ हो। इस विकराल विस्फोट के पश्चात् धड़ाके का वेग कम हुआ, एक दो दिन में वह बिल्कुल ही शान्त हो गया। जब एक बार फिर इस के धरातल पर मानव के पग पहुँच सके तो सारा रूप ही पलटा हुआ था। मुख्य द्वीप का दो तिहाई भाग बिल्कुल ही उड़ गया था। ज्वालामुखी का शंकु खड़े रूप में आधा कट गया था। अब नई चोटी मुख के केन्द्र में ही समाई हुई थी। जहाँ पहले भूमि थी, वहाँ अब समुद्र का प्रसार था, कहीं-कहीं तो यह १०० फीट से भी अधिक गहराई में फैल गया था। किन्तु द्वीप का जो भाग बच रहा था, वह ऊपर से राख, चूरे, ढोंके आदि बरसने से कुछ ऊँचा बन गया था। अन्य समीपी छोटे-बड़े द्वीपों में से कुछ तो सर्वथा ही विलीन हो गए थे और कुछ आंशिक रूप से ही ध्वस्त हुए थे। ऊपर की गिरी वस्तुओं, कूड़ा-कबाड़ से कुछ बढ़ भी गए थे। समीप के समुद्र की गहराई में अनेक परिवर्तन हो गए थे। दो नए द्वीप भी उठ आए थे।

ज्वालामुखी से फेंके हुए प्यूमाइसों (छिद्रमय ढोंकों) में इतने बड़े-बड़े छिद्र थे कि वह पानी पर तैर सकते थे। कहीं पर तो जमघट कर द्वीपों का रूप धारण कर लिए थे जिनका प्रसार मीलों तक देखा जाता। ये कभी ६,७ फीट तक ऊँची तह बना लिए होते। जहाजों का मार्ग इनके कारण कंटकाकीर्ण हो गया था।

भारी मात्रा में आकाश में फेंकी गई धूल ने इतना अंधकार उत्पन्न किया कि दिन को ही १०० मील की दूरी पर स्थित बटाविया नगर में कमरों में दीपक जलाने की आवश्यकता प्रतीत होने लगी। समीप के जहाजों पर १८ इंच मोटी राख की तह जमी पाई गई। वर्षा होने पर ये धूल-कण अंधकार को और भी घना करने में सहायक सिद्ध हुए।

क्राकाटाओ के प्रकोप से उठी समुद्र की लहर को कहीं-कहीं १५० फीट तक ऊँचा उठते देखा गया। तट पर के समुद्र-तल से ५० फीट ऊँचाई पर बने मकान बह गए। सुमात्रा में एक स्थान पर तो एक जहाज लहरों के द्वारा धरातल पर २ मील भीतर ढकेल कर फेंक दिया गया जहाँ वह सूखी भूमि में समुद्र-तल से ३० फीट ऊँचे स्थल पर अटका पड़ा रहा।

क्राकाटाओ के विस्फोट के समय पृथ्वी की कोख उस सारे क्षेत्र में क्षुब्ध जान पड़ी जिससे शीघ्र ही जावा और सुमात्रा के अनेक ज्वालामुखियों को उभड़ते देखा गया। इसके उभाड़ के साथ ही शायद इस क्षोभ का प्रारम्भ हुआ था जो दूसरे दिन ही जावा में एक ज्वालामुखी के उभड़ने रूप में प्रकट हुआ। शीघ्र ही अन्य ज्वालामुखी भी उभड़ चले, यहाँ तक कि जावा के ४५ ज्वालामुखियों से १५ में उभाड़ देखा गया। कुछ ज्वालामुखियों के भयंकर उभाड़ के समय ऐसा भीषण बवंडर भी उठा जिसमें मकान की छतें, पशु तथा मनुष्य हवा में फेंक दिए गए।

क्राकाटाओ के उभाड़ से उठी वायु की लहर संसार भर के दबावमापक यन्त्रों में हलचल मचा सकी। बर्लिन तक पहुँचने में इसे १० घंटे लगे। उसके मुख से उभड़ी राख का फैलाव ३ लाख वर्ग मील में हो सका! एक अति विचित्र बात यह देखी गई कि सूक्ष्म धूलि-कणों का सारी पृथ्वी पर धीरे-धीरे प्रसार होने से वे

महीनों तक ऊपरी वायु-मंडल में लटके रहे। उससे सन्ध्या को गोधूलि वेला में असाधारण ललाई आकाश में दृष्टिगोचर होती। ललाई के स्थान पर हरी आभा भी कहीं-कहीं झलकती दिखाई पड़ती।

वैज्ञानिकों का विश्वास है कि क्राकाटाओ के अत्यन्त भीषण और अचानक विस्फोट का कारण यह है कि किसी नई दरार या छेद से समुद्र का जल प्रचुर मात्रा में धरती के भीतर उत्तप्त स्तरों तक पहुँच गया। यह पानी खौल कर भाप बन गया और अपने असीम विस्तार-शक्ति से इतना क्रुद्ध हुआ कि चट्टान चूर-चूर हो गई और मीलों दूर आकाश में धूल बनकर पहुँच गई।

एक वैज्ञानिक ने क्राकाटाओ के उभाड़ का वर्णन निम्न रूप में मार्मिक शब्दों में किया है :—

"२७ अगस्त १८८३ ई० को प्रात: १० बजे खेल का स्वांग समाप्त हो गया और असली खेल प्रारम्भ हो गया। दो या तीन आरम्भिक उभाड़ों रूप में नान्दीपाठ के पश्चात् एक भयानक विस्फोट का प्रादुर्भाव हुआ जिसने क्राकाटाओ के अधिकांश भाग को तोड़ फेंका और उसको धूलि-धूसरित कर वायु में झोंक दिया। उस अंतिम हलचल ने धरती पर के सभी पूर्व विस्फोटों को पूर्णतया हीन सिद्ध कर दिया। इस वज्रपात ने ऐसी कर्कशतम ध्वनि उत्पन्न की जो, जहाँ तक हमें ज्ञात है, इस धरती पर कभी भी देखी-सुनी, नहीं गई है। प्रमाणों द्वारा यह सिद्ध हो गया है जिसमें कोई भी सन्देह नहीं है कि इस विकराल ज्वालामखी की कड़कों ने (लगभग ३००० मील दूर) रॉडरिग द्वीप के एक चतुर समुद्रतटीय प्रहरी का ध्यान आकर्षित किया जिसने इस ध्वनि के प्रकार और समय को बड़ी सावधानी से टाँक लिया। उसने इस

वास्तविक विस्फोट के ठीक चार घण्टे बाद वह ध्वनियाँ सुनी थी जो शब्द के पहुँचने की ठीक अवधि है।

"क्राकाटाओ की इस दुर्धर्ष घटना ने वायुमण्डल की रचना के सम्बन्ध में हमें एक दूसरा पाठ पढ़ाया है। अपने ऊपर के वायु-मण्डल की १० मील से ऊपर की ऊँचाई के बारे में हम कुछ भी नहीं जानते थे। क्राकाटाओ ने हमें कुछ थोड़ी सूचना दी जिसकी हमें इतनी आवश्यकता थी। हम लोग यह कैसे जान सकते थे कि धरती पर के ऊँचे से ऊँचे पर्वतों से चौगुनी अधिक ऊँचाई वा गुब्बारों की पहुँच से भी दुगुनी अधिक ऊँचाई पर वायु प्रवाहित होती रहती है?...क्राकाटाओ की सहायता प्राप्त होने तक हमें वायु का प्रवाह इस ऊँचाई पर अनुभूत कराने वाला कोई भी साधन नहीं था। क्राकाटाओ ने उन हवाओं में धूलि की असीम राशि फेंकी। इस प्रकार वायु का सैकड़ों घनमील भाग उस अदृश्यता से हीन हुआ, जो वह अब तक अज्ञात स्थापित रक्खे था।

"आश्चर्यभरी दृष्टियों से लोगों ने देखा कि क्राकाटाओ की वह धूलि-राशि एक दुर्गम यात्रा पर जा रही है। व्यापारिक हवाओं को हम जानते हैं जो निश्चित् दिशाओं में स्थिरतापूर्वक बहती हैं और वे समुद्री माझियों के इतने उपयोग की है! किन्तु एक दूसरी भी सततवाहित वायु है, यह तथ्य पहले-पहल क्राकाटाओ ने विज्ञापित किया। इस विस्फोट के पूर्व किसी को इस बात में तनिक भी अनुमान नहीं था कि बहुत ऊँचाई पर २० मील से परे एक विकट आँधी, भीषणतम आँधियों से भी प्रबल वेग से अनवरत प्रवहमान रहती है।

जब इस आँधी में क्राकाटाओं की धूल मिलित हो गई तो इस आँधी की स्थिति मानव-दृष्टि में प्रकट हो गई। तब यह देखा गया कि यह आँधी भूमध्य रेखा की सीध में धरती की परिक्रमा कर रही

है और उसको परिक्रमा पूरा करने में १३ दिन लगे। विशाल विस्फोट से मथित धूल ने धरती के चारों ओर इस भयानक आँधी में चक्कर मारा जिसमें ज्वालामुखी ने उसे झोंक दिया था। इस अनुपम आँधी में जब धूल के बादल उमड़ रहे थे, तब सूर्य और चन्द्र-बिम्बों का सामना कर ये धूलि-कण अपनी विद्यमानता अत्यंत ही मनोहर रूप में असाधारण भव्यता और सौन्दर्य के विविध रंगों में प्रकट करते......आकाश में यह धूल जो असाधारण दृश्य उपस्थित करती उसी से धूल के बादलों की प्रगति व्यक्त होती; और धूल के बादलों की प्रगति से हम लोगों ने उस आँधी की गति का निष्कर्ष निकाला।"

इस प्रकार क्राकाटाओ का भयंकर वेग से उभाड़ जिस उग्रता से चट्टानों की धज्जी-धज्जी उड़ाकर वायुमंडल में इतनी अधिक ऊँचाई तक पहुँचाये था वहाँ तक पहले कभी-कभी किसी वस्तु की पहुँच देखी गई थी। यह धूल जितनी अधिक तीव्रता से वायुमंडल के अत्यन्त ऊपरी भाग में चक्कर मार रही थी, उसका अवलोकन सब देशों ने करना प्रारम्भ किया था। वह दूर-दूर के भूखंडों में जितनी शीघ्रता से फैली दिखाई पड़ती थी, वह आश्चर्य की बात थी। ये धूल के बादल पहले विस्फोट के कुछ दिन बाद ही भूमध्य रेखा के समस्त क्षेत्रों में दिखाई पड़ते रहे क्योंकि ऊपरी वायु बड़े ही वेग से इनका वहन कर रही थी। एक सप्ताह के ही पश्चात् वे शीतोष्ण कटिबंध में भी दिखाई पड़े।

क्राकाटाओ के उभाड़ से निकली सभी वस्तुओं को वेग से फैलने के प्रमाण मिलते हैं। समुद्र में उतराते हुए प्यूमाइस (छिद्रमय झाँवानुमा पत्थर) लगभग चार हजार मील की यात्रा कर मार्च १८८४ ई० में हिन्द महासागर के दक्षिणी भाग में स्थित फ्रांस-राज्याधीन सेंट पाल द्वीप तक पहुँचे। कदाचित क्राकाटाओ के प्यूमाइस मडगास्कर तक भी पाँच मास में पहुँच कर अफ्रीका

का तट स्पर्श कर सके। किसी भी प्रकार संसार भर में ये समुद्रों में फैल कर तैरते रहे।

जो धूल कभी क्राकाटाओ के गर्भ में या तल पर कभी दबी चट्टान रूप में पड़ी थी, वही इस उभाड़ के भयानक प्रभाव से आकाश में २० मील से भी अधिक ऊँचाई पर पहुँच कर प्रबल आँधी के वेग से वाहित होकर आकाश में जिस प्रकार का भव्य रूप दिखाती रही उस का उल्लेख कितने ही लोगों ने किया। सब देशों में इसके दिखाई पड़ने के समयों की तुलना कर इसके बह कर चक्कर लगाने का प्रमाण पाया गया। कुछ विद्वानों का कथन है कि इस धूल के सूक्ष्माकार होने, वेगपूर्वक इतनी अधिक ऊँचाई पर प्रवाहित होते रहने आदि के कारण धरती की गुरुत्वाकर्षण शक्ति का अवरोध कर वायु में अधिक समय तक पड़े रहना संभव हुआ। इसी कारण इस धूल के बादल १२ या इससे भी अधिक बार भी एक-एक पखवाड़े में धरती की एक पूरी परिक्रमा कर आते रहे। बाद में यह धूल लुप्त होकर धरातल पर शनैः-शनैः आ सकी। किन्तु यथेष्ट अवधि बीतने पर कहीं आकाश से यह मिट सकी। विस्फोट के दो वर्ष वायु की उस पेटी से धूल सर्वथा लुप्त हो सकी। सूक्ष्म धूलों की राशि कदाचित् पहले १२०००० फीट की ऊँचाई तक पहुँची थी, किन्तु विस्फोट के एक वर्ष पश्चात् तक भी वह ५०००० फीट तक की ऊँचाई पर लटकी रही। स्पष्ट रूप से धूल के बादल को ३,४ बार धरती की परिक्रमा करते तो साधारण दर्शकों ने भी देखा था। इस यात्रा में धूल ने लगभग ८२००० मील की यात्रा ७०० मील प्रति घंटे की चाल से थी।

सारी धूल, रेत, प्यूमाइस आदि की जितनी राशि क्राकाटाओ से निकली वह घनफल में कदाचित $1\frac{1}{2}$ घन मील चट्टान के टूट पड़ने से उत्पन्न हुई होगी। इस प्रकार हम इसकी मात्रा तो इतनी

अधिक नहीं पाते जितना अधिक कि इसको विस्फोट करने वाली अत्यन्त प्रबल शक्ति प्रतीत होती है। एशिया खंड के सागर में इस घटना से उठी धूलि-राशि के आकाशीय अभियान और यात्रा ने प्राकृतिक क्षोभ को कालान्तर में एक भव्यता में परिणत कर विश्व के कितने कलाकारों, कवियों तथा चित्रकारों को अपनी लेखनी, और तूलिकाएँ धन्य कर मनोरम वर्णनों, कविताओं तथा चित्रों के प्रणयन का अवसर दिया, उनकी विशेष चर्चा करने का हम यहाँ अवसर नहीं पाते। उन्हें अन्यत्र पढ़ा और देखा जा सकता है।

पेली ज्वालामुखी

विस्यूवियस के सन् ७६ ई० के विस्फोट से कुछ भयानकता में मिलता पेली ज्वालामुखी का विस्फोट था जिसका लोमहर्षक उभाड़ ८ मई सन् १६०२ ई० को हुआ था। इसके विस्फोटक रूप के उभाड़ ने जितना विचित्र और भयानक रूप दिखाया, उसकी कहानी बड़ी ही कारुणिक है। ऐसे उभाड़ अन्यत्र भी होते पाए गए हैं किन्तु अपनी तीव्र संहार-क्रिया से पेली ने सेंट पियरे नगर के ३०००० निवासियों का पल मारते ही नाश कर नगर को ध्वंस कर दिया। ऐसे उदाहरण बहुत कम ही मिलते हैं।

पश्चिमी द्वीप-समूहों में मार्टिनीक नाम का एक द्वीप है। उसी पर पेली नाम का ज्वालामुखी है जिसका उभाड़ सन् १८५७ ई० में हुआ था। तब से वह सुप्तावस्था में ही पड़ा हुआ था। केरेबियन सागर में ऐसे अन्य द्वीप भी हैं जिन में ज्वालामुखी हैं। १६०२ ई० के निकट उनमें से कुछ द्वीपों के ज्वालामुखियों में उभाड़ हुआ किन्तु उन सब में मार्टिनीक का विस्फोट अत्यंत ही भयानक था। प्रारंभ में कुछ भूकंप हुए, फिर कुछ धूम-राशि प्रस्फुटित हुई। इन प्रारंभिक क्षोभों के पश्चात् ८ मई को पहला भयानक विस्फोट हुआ। ज्वालामुखी के मुख से एक भयंकर उत्तप्त भाप और गैस की आँधी उठी जिसमें प्रज्वलित, देदीप्यमान भस्म तथा धूलि सम्मिश्रित होकर वह चली। पर्वत शिखर की ढाल से नीचे यह अग्नि-यात्रा अपनी भीषण विभीषिका के साथ उतरी और

अपनी लपट में सेंट पियरे नगर को पूर्ण भस्मसात कर दिया। रिवियरे नदी की उपत्यका इस अग्निकांड तथा उत्तप्त अंगारों के नग्न नृत्य से सिहर उठी। कोई प्राणी अपनी कथा सुनाने के लिए स्पंदन-क्रिया संचारित रखने में क्षम नहीं हो सका। छोटे-बड़े, धनी-निर्धन, कायर तथा उद्भट, सभी पुरुषों की एक साथ ही सर्वनाशी समाधि बन उठी। यमपुरी का भूतल पर अवतरण होने में पल भर के समय को देखने का किसी को अवसर नहीं मिला। इस मृत्यु-लीला की संचारिणी वह्नि-क्रिया के साथ कदाचित सभी पवन प्रवहमान थे जिनकी संयुक्त शक्ति ने एक पचासों मन भारी नाट्री डेम डिलागर्ड नाम की बृहदाकाय लौह मूर्ति को उसके आधार-स्थल से ४० फीट दूर ले जाकर पटक दिया किन्तु कदाचित् उस घटना को देखने वाली कोई मानव चक्षु-इन्द्रिय क्रियाशील नहीं रह गई थी। इस स्थानान्तर को बाह्य जगत ने ध्वंस-लीला के पश्चात् ही देखा।

सेंट पियरे नगर मानव क्रीड़ा-भूमि होने के स्थान पर जहाँ नरमेध यज्ञ करने पर उतारू हुआ था जिसकी उसने पूर्णाहुति भी कर दी थी, उसी भयंकर नाश-लीला के मध्य एक छोटी विचित्र घटना भी घटित होती देखी गई। सुना जाता है किसी प्रतापी सम्राट के निर्जन स्थल में नवजात शिशु के रूप में छोड़ दिए जाने पर नाग ने अपनी छत्र की छाया कर रक्षा की थी, कहीं पौराणिक कहानी में पढ़ते हैं कि कुम्हार के आँवे में से कच्चे बर्तनों के पक जाने पर भी उनमें पड़ा कोई मार्जार-शिशु जीता-जागता, अठ-खेलियाँ करता रह कर ही निकला था। प्रह्लाद को होलिका की अग्निवेष्ठित क्रोड़ में स्थान देने पर भी उसकी रक्षा किसी अलौकिक शक्ति ने की थी। नैष्ठिक व्यक्ति इनकी नितान्त सत्यता पर अगाध विश्वास कर आनन्द-विभोर हो उठते हैं; अविश्वासी इनके कपोल
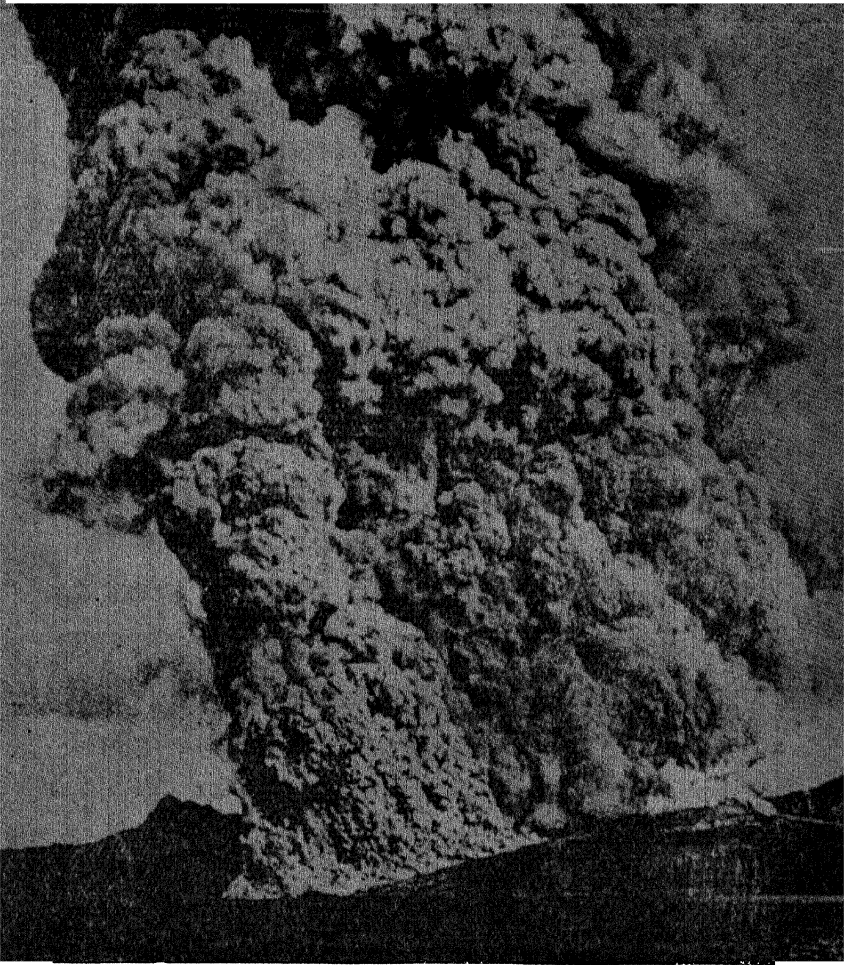
चित्र २२—पेली ज्वालामुखी का उभाड़।

काल्पनिक होने की बात वज्र-घोष से घोषित कर अपने तर्कवाद का ढोल पीटते हैं। किन्तु हम इन आवेशों, विश्वासों, तर्कों आदि की कोई भी बात बिना उठाए या हृदय में रक्खे, इतना जानते हैं तथा इतिहास अथवा प्रत्यक्षदर्शी वर्णनों के अनुसार हम यह

निस्सन्दिग्ध रूप से कह सकते हैं कि सेंट पियरे नगर के नरमेध यज्ञ में सम्मिलित होने वालों में अग्नि-क्रिया में लुप्त हो गए किसी न किसी लेखे या खाते या रजिस्टर में एक अज्ञातनाम बंदी का भी नाम था जो किसी गहन अपराध के दंड का भागी होने के लिए मृत्यु-पाश में मानव-हस्तों से वध होने के हेतु केवल निर्धारित मृत्यु-दंड की घड़ी आने की प्रतीक्षा कर रहा था। कारावास की एक विकट निर्जन कोठरी में वह एकांकी लौह-शृंखला-आबद्ध कदाचित् पड़ा था जिसका प्रवेश-द्वार दृढ़ तालों से जकड़ रखा गया था। नगर की भयानक चीत्कार, अग्नि-तांडव की भीषण प्रतिध्वनि कुछ-कुछ उसे अपने अंधेरे कक्ष में सुनाई दे रही थी। इन बाह्य कोलाहलों का कुछ कारण उसकी समझ में नहीं आ सकता था। चार दिन तक अपने कक्ष में पैंतरे बदलता, भूख-प्यास से व्यग्र किसी प्रकार वह बंद ही पड़ा रहा। अंधेरे में यम की बही में कदाचित् उसका नामोल्लेख होने से रह ही गया। सारा नगर प्राणीहीन, निर्जन बन गया। संहार-लीला समाप्त हुई। बाहरी दर्शक आ पहुँचे। बंदी की कराह किसी ने नगर भर की भयंकर नीरवता के अवलोकन के पश्चात् सुन ली। बंदी अब नरक-धाम से साक्षात् लौटा जीवित पुरुष था।

मार्टिनीक द्वीप ने एक तीसरा आश्चर्यजनक व्यापार भी अपने ज्वालामुखी के क्रीड़ा-स्थल में दिखलाया। कदाचित् पेली ज्वाला-मुखी के विस्फोटक उपद्रव के पश्चात् प्रदहमान पाषाणद्रव, लावा का भी बहाव होने वाला था, परन्तु वह बहुत कठोर रूप में होने से कंठ के बाहर न गिर सका, परन्तु भाप और उत्तप्त गैसें उसे कुछ शिथिल कर सीधे खड़े रूप में ही ऊपर उठाती रहीं। कुछ समय में अद्भुत दृश्य उपस्थित हो गया। काल-देव की मानव संहार-क्रिया के पश्चात् कदाचित् ध्वजारोपण की इच्छा हुई जिसके

स्थूलाकार स्तम्भ रूप में यह लावा-राशि ज्वालामुखी के कंठ से ठीक ऊपर की ओर उठती गयी। प्रकृति प्रस्तरकर्मी ने पूर्व-निर्मित किसी पुरातन शिलाखंड को छील छीलकर स्तंभ-रचना के स्थान पर अपनी भट्टी में ही एक बृहद् शिला-स्तंभ गढ़ लेने का उद्योग
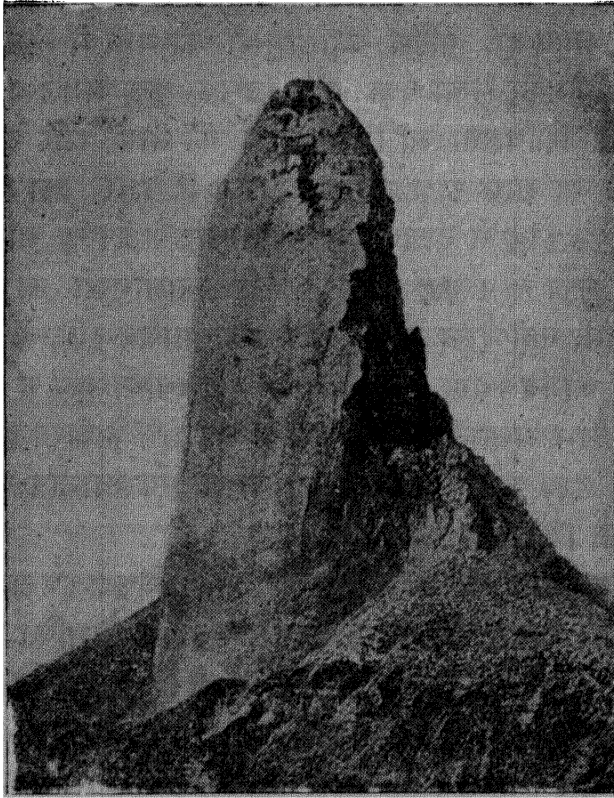
चित्र २३—पेली ज्वालामुखी की उभड़ी ग्रीवा।

किया। किन्तु कदाचित् उसको यह अपनी गढ़न सुगढ़ न लगी, अपनी ही रचना रुचिकर नहीं प्रतीत हुई। इसलिए उसने इस गढ़ीगढ़ाई पथरीली बुर्ज रूप में अपने एक कौशल का नमूना दिखा-

कर उसे पुनः अपने गर्भ में वापस ले लेने का निश्चय किया। अतएव ज्वालामुखी के शंकु-कुंड से ऊपर निकली दिखाई पड़ने वाली स्थूल ग्रीवा या बुर्ज विलुप्त हो गई। यह लावा-स्तंभ १८०० फीट की ऊँचाई तक उठा देखा गया था, परन्तु बाद में नष्ट हो गया। यह भी हो सकता है कि पिघला लावा सूख-सूख कर ऐसा बृहद् रूप न बनाए हो, बल्कि ज्वालामुखी की नली में ठेपी की तरह पहले से जमकर सूखा पड़ा हो। उसके कुछ अगल-बगल गर्मी पहुँचने से शिथिलता आने पर नीचे की भाप और तप्त गैसों के प्रभाव से यह सारा ठोस भाग स्तंभ रूप में ऊपर उठा हो। परन्तु भार अधिक होने से नीचे के दुर्बल आधार के कारण अधिक समय न ठहर सका हो। कुछ भी हो, पेली ज्वालामुखी का यह दृश्य पहले कभी नहीं देखा गया था। यह मानव-दृष्टि के लिए एक नए रूप का विलक्षण खेल था जो कुछ स्थायी रूप न पा सका। ऐसे ही स्तंभ अन्य ज्वालामुखियों में उस क्षेत्र के अन्य द्वीपों में भी उठने का दृश्य पुनः देखा जा सका था जो एक-स्थानीय घटना नहीं ज्ञात होती।

विश्व-विजय की कामना करने वाले, विख्यात रणवीर सेना-नायक तथा कालांतर में फ्रांस के राज्य-मुकुट से विभूषित नेपोलियन बोनापार्ट ने जासेफ टाशेर डिला पागेरी की जिस पुत्री को १७९६ ई० में अपनी अर्द्धांगिनी बनाकर १८०४ ई० में राज्य-महिषी का आसन ग्रहण कराया, उस कन्या रत्न, महारानी जोसेफाइन की जन्म भूमि मार्टिनीक द्वीप ही थी। इस शस्य-श्यामल, इक्षु, ताम्बूल कहवा के उपजाने के उर्वर भंडार, सघन वनस्थली से अपनी हरीतिमा की शोभा वृद्धि करने वाले द्वीप में पाश्चात्य देशों के अभीप्सित पेय, मदिरा की नदियाँ बहा करती थीं। यह द्वीप पश्चिमी द्वीप-समूहों में सौन्दर्य का शिरोमणि समझा जाता था जिसके

मुख्य नगर, सेंट पियरे को फ्रांस की औपनिवेशिक सरकार ने अपनी राजधानी बनाने का गौरव प्रदान किया। आज तो सेंट पियरे के ध्वस्त हो जाने से फोर्ट डी फ्रांस ने यह गौरव प्राप्त कर लिया है परन्तु सेंट पियरे के भी कभी स्वर्णिम दिवस थे जिसको किसी प्रशंसक ने "पश्चिमी द्वीप-समूह के नगरों में अद्भुततम, विचित्रतम एवं सुन्दरतम" होने की उपाधि प्रदान की थी। इस कारण यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि ३, ४ सौ वर्ग मील में विस्तृत इस द्वीप को उष्ण कटिबंध का स्वर्ग उद्बोधित कर करेबियन समुद्र की निर्मल नीलिमा के मध्य इसकी भव्य हरीतिमा-मय लता द्रुमादि की ओर संसार का ध्यान आकृष्ट होता रहता। इस द्वीप का ज्वालाकुंड, पेली पर्वत भी सौन्दर्य से शून्य नहीं था। उस पर सब ओर हरियाली आच्छादित रहकर शिखर के मुख रूप आखात में निर्मल जलाशय को स्थान प्राप्त था। इसके १८५६ ई० के पिछले उभाड़ में राख, कीच तथा कुछ गंधकीय वायव्यों का उत्सर्जन होकर ही रह गया था, अतएव सभी निवासी निश्शंक जीवनयापन करते आ रहे थे। कौन जानता था कि इसका कभी इतना भयावह उद्गार हो सकता है। ज्वालामुखी के पुराने मुख में जलाशय तथा भीटों पर हरे-भरे वृक्षों, वनस्पतियों आदि के दृश्यों को देखने वाले दर्शकों का ताँता लगा रहता।

प्रकृति ने पूर्वसूचना रूप में कितने ही छोटे-मोटे उद्गारों को पहले ही प्रकट करना प्रारम्भ कर दिया था परन्तु दीर्घसूत्री, शिथिलप्रयत्न, सुखोपभोगी, निश्चिंत जीवन बिताते रहते आने वाले लोगों को इन चेतावनियों की तनिक भी चिन्ता न हो सकी। अप्रैल मास भर पेलो के पार्श्व भाग की एक घाटी से भाप निकलती रही, २५ अप्रैल को कुछ राख भी उत्सर्जित हुई। एक पुराने जलाशय के सूखे पेटे में पानी भी भर आया दिखाई पड़ा। ३०

अप्रैल को कुछ भूकम्प भी हुआ । थोड़ा विस्फोट भी होकर रह गया। इन नैसर्गिक उपद्रवों से कुछ लोगों में खलबली मचनी प्रारंभ हुई, भगदड़ का वातावरण उपस्थित होने की नौबत दिखाई पड़ी, किन्तु हठी, दुस्साहसी समाचार-पत्रों ने इन दृश्यों की ओर से आँख मींज लेने का विज्ञापन प्रारंभ किया, पर्वत-शिखर पर अनुकूल वातावरण होने पर किसी दिन मनोरंजन-मंडल पहुँचने की भी विज्ञप्ति छपी, किन्तु.........

किन्तु प्रकृति उधर अपने शस्त्रायुधों के मल-निमज्जन करने, मुर्चा छुड़ाने, धार तेज करने में लगी हुई थी जिसकी कुछ खड़खड़ाहट, झंकार, इन क्षुद्र उपद्रवों रूप में दिखाई पड़ गई थी। कदाचित् प्रकृति की शक्ति-संचय, सैन्य-संग्रह की यह सूचना कुछ रण-व्यवस्था में अव्यवस्था होने, कहीं संवाद-नियंत्रण विभाग में असावधानी होने से वध्य मानवों के बधिर कर्णों तक पहुँच सकी किन्तु रण-कौशल में असावधान मानव ने इस बलात मिली रणायुध-समारोह की गुप्त सूचना से कुछ भी लाभ नहीं उठाया। अतएव कदाचित् चेतावनी रूप में प्रकृति का और भी क्रुद्ध रूप प्रकट हुआ। शत्रु को धराशायी करने के पूर्व उसे जागृत कर ललकार लेने की पुरातन भारतीय युद्ध-परम्परा को कदाचित् प्रकृति ने भी अपनी नीति बनाई। दो मई को एक प्रबल विस्फोट हुआ जिस के तुमुल गर्जन तथा धूम्र-राशि के भारी मात्रा में निष्कासन से लोग सिहर उठे, व्यवसायी दूकान बंद कर खिसकने लगे, पाठशालाएँ बंद हो चलीं। फिर भी किसी एक मार्ग के ग्रहण करने की लोगों में शिथिलता ही रही। ५ मई को फिर धड़ाका हुआ। २ मई के धड़ाके में कोई मनुष्य हताहत नहीं हो सका था, केवल श्वेत भस्म की वर्षा से मही श्वेत धूलि-कण में निमज्जित भर हो उठी थी, पक्षी मृत होकर आकाश के क्षेत्र से धरातल पर अपना

शव उत्पातित करते दृष्टिगोचर हो सके थे। विषैली गैसों के प्रभाव से कदाचित् उड़ते-उड़ते ही उनके प्राण-पखेरू उड़ चुके होते थे। किन्तु ५ मई के विस्फोट ने अब अपना शस्त्र अधिक सधा समझ कर, पूर्व आखेटों से उत्साह प्राप्त कर, मानवों पर शस्त्रप्रहार की ढिठाई करना प्रारंभ किया। विस्फोट के कारण नए जल-पूरित जलाशय का एक भींटा भस या उड़ गया जिससे उसका जल-भंडार निराश्रित होकर पर्वत के ढाल की ओर वेग से लुढ़क चला, मार्ग के वृक्षों को निर्मूल करती, चट्टानों की धूलि धूसरित करती, यह जलधारा एक विशाल पंकराशि को नदी रूप में ब्लांची नदी की उपत्यका में प्रवाहित होकर एक चीनी की बड़ी मिल को ध्वस्त कर सकी। चौंतीस व्यक्ति कालकवलित हो गए। इतना ही बलिदान बरबस छीन झपट कर यह धारा समुद्र में तिरोहित हो गई। किन्तु वहाँ भी इसकी राक्षसी-वृत्ति लुप्त नहीं हो सकी थी। इसने दो नौकाओं को उलट कर समुद्र के जल में समाधिस्थ कर दिया। सेंट पियरे नगर की निचली सड़कों तक भी इसने कदाचित् दूर से ही शत्रु-शिविर की आहट लेने की चिन्ता में अपनी पहुँच की। अब तो साहसियों के भी पैर उखड़ने लगे, फ्रांस साम्राज्य की एक उपनिवेश की स्वर्गपुरी रूप की भव्य राजधानी निर्जन बनने की अवस्था को पहुँचने लगी। लोगों को बाँध-बाँध कर कहाँ तक रक्खा जाता, कैसे अनिवार्य रूप से रहने के लिए ही विवश किया जाता। निदान मार्टिनीक के फ्रांसीसी राज्यपाल ने मानसिक प्रभाव से काम लेने के लिए अपनी कुछ वैज्ञानिक मंडली के साथ स्वयं ही इस सेंट पियरे नगर में निवास करने की व्यवस्था की। एक विशेषज्ञों का आयोग बैठा जिसकी घोषणा प्रकाशित की गई कि भय का कोई कारण नहीं। खलबली शान्त हो चली। लोग रुकने लगे।

देश विदेश में मार्टिनीक की घटनाओं का प्रकाशन भी होता

ही रहता था। मार्टिनीक स्थित अमरीकी राजदूत की धर्मपत्नी को उसके परिवार वालों ने चिन्तातुर होकर पत्र लिखे। उनके उत्तर में अमरीकी राजदूत की सहधर्मिणी ने अपनी भगिनी को जो पत्र लिखा था, वह एक उल्लेखनीय वस्तु हो गई है। उसने लिखा था :—

"मेरे पति ने मुझे आश्वासन दिलाया है कि तात्कालिक आशंका की आवश्यकता नहीं है, यदि तनिक भी संकट की संभावना होगी तो हम लोग स्थान छोड़ देंगे। बंदरगाह में एक अमरीकी पोत खड़ा ही है। वह कम से कम दो सप्ताह तक रुका रहेगा। यदि ज्वालामुखी का रूप अति उग्र हो जाता है तो हम अविलम्ब ही पोत पर सवार हो जाएँगे और समुद्र की ओर चले जाएँगे।"

किन्तु अमरीकी राजदूत की निश्शंकता, आश्वासन, तथा संकट से बच निकलने की सावधानी तथा आयोजनों में से किसी ने भी साथ नहीं दिया। नगर के अन्य अभागे निवासियों की तरह वे भी मृत्यु-मुख में पहुँच गए। काल के अत्यन्त कठोर पाश से सुरक्षित निकल भागने के किसी मानव-सुलभ साधन का उपयोग करने की घड़ी आ ही नहीं सकी। ८ मई के विकटतम विस्फोट की नरमेध-लीला में सर्वत्र सर्वनाश ही सर्वनाश का लोमहर्षक दृश्य उपस्थित हुआ जिसमें फ्रांसासी राज्यपाल का भी शव पड़ा था तथा अमरीकी राजदूत और राजदूतिनी के शवों की भी गिनती थी। आयोग के सम्मानित सदस्य, वैज्ञानिक तथा निरीह अबोध नागरिकों के शव भी अगल-बगल ही जमघट बनाए पड़े थे।

सेंट पियरे की आँखों देखी ध्वंसलीला का वर्णन एक रोरैमा नामक जहाज के कर्मचारी ने किया है जो दुर्भाग्यवश इस घड़ी के कुछ ही पूर्व भयानक मृत्यु-कांड का कुछ भी अनुमान किये बिना ही अपने जहाज पर बंदरगाह में प्रवेश कर सका था।

"मैंने सेंट पियरे का विनाश होते देखा। आग की एक विशाल लपट से सारा नगर ध्वंस हो गया। लगभग ४०००० व्यक्ति तत्क्षण मृत हो गए। बंदरगाह के १८ जहाजों में से केवल एक, ब्रिटिश जहाज, रोडम, भाग सका। और मैं सुनता हूँ कि उसके ऊपर के मनुष्यों में से अधिक से अधिक का प्राणान्त हो गया। एक मृत्यु की गोद में जाता हुआ माझी ही उसे बाहर निकाल सका। हम लोगों का जहाज, रोरैमा सेंट पियरे में गुरुवार को प्रातः ही पहुँचा। जहाज के बंदरगाह में प्रवेश करने के घंटों पूर्व हम लोग पेली ज्वालामुखी से धुआँ और लपट उठती देख रहे थे। हम लोगों में से किसी को भी संकट की आशंका नहीं थी। कप्तान मग्गा पोत-संचालन-मंच पर थे और हम सब लोग जहाज के डेक पर यह दृश्य देखने चढ़ आए। दृश्य बड़ा ही मनोमोहक था। सेंट पियरे के निकट पहुँच जाने पर हम लोग उमड़ती और उछलती लाल-लाल लपटों को स्पष्ट देख सकते थे जो पर्वत-शिखर से भारी मात्रा में उत्सर्जित होती और आकाश में ऊपर उभड़ उठतीं। ज्वालामुखी के ऊपर काले धुएँ के निस्सीम बादल मँडरा रहे थे। एक सतत वज्रघोष उठ रहा था। यह किसी पर्वत पर बनी संसार की सबसे बड़ी तैल-शोधनशाला के पर्वत-शृंग पर ज्वलित होने के समान ज्ञात होता था। हम लोगों के पहुँचने के बाद ही प्रातः पौने आठ बजे एक महाविकट विस्फोट हुआ। पर्वत उड़कर धूल-धूल हो गया। कोई चेतावनी नहीं मिली थी। ज्वालामुखी का पार्श्व भाग कट पड़ा और लपट की एक ठोस साक्षात भित्ति सीधे हम लोगों के सम्मुख फेंक सी दी गई। सहस्र तोपों की गरज के समान ध्वनि हुई।

"लपट की लहर विद्युत वेग से हमारे सम्मुख और ऊपर आ गई थी। यह आग की एक भीषण आँधी ही की तरह थी। मैंने

अपनी आँखों से इस लहर को "ग्रेपलर" जहाज को चपेट मारते और उलटते देखा। उसके सारे भाग में आग लहक उठी और वह समुद्र में डूब गया। एक संगठित राशि रूप में यह लपट उमड़ कर सीधे सेंट पियरे नगर तथा जहाजों पर आ धमकी। हम लोगों की आँखों के सामने ही नगर सर्वनाश हो गया।

"वायु बड़ी ही उत्तप्त हो चली और उसी के बीच हम लोग पड़े थे। अंगारे की यह राशि जहाँ कहीं समुद्र-तल से टकराती पानी खौल पड़ता और भाप रूप में आकाश में उड़ जाता। सारा समुद्र बड़े-बड़े जलावर्त्तो रूप में परिणत हो गया जो खुले सागर की ओर बढ़ने लगे। इन भयंकर, दहकते भँवरों में से एक रोरैना के निम्न-तल में भी प्रहार कर बैठा और उसे एक दीर्घ चूषक शक्ति से खींचकर करवट झुका दिया। वह बंदरगाह की ओर झुक गया। इतने में ही ज्वालामुखी की लपट की आँधी ने उसे टक्कर मारा और वह दूसरी ओर लुढ़क पड़ा। मस्तूल और धुएँदानी को लपट ने इस प्रकार काट फेंका, मानों फौलादी चाकू से वे काट दिए गए हों।

"जहाज के डेक पर केवल कप्तान मग्गा ही जीवित बचे रहे। वे आग की लपटों में फँस गए और बुरी तरह झुलस गए। उन्होंने लंगर उठा लेने का प्रयत्न किया किन्तु थोड़े ऊपर तक ही लंगर उठ पाया था कि उत्तप्त जलावर्त्त से रोरैना लगभग पलटा खा गया और लपट की लहरों ने उसे करवट दक्षिण पार्श्व में गिरा दिया। कप्तान मग्गा लपट की चपेटों में आगए। पोत-संचालन मंच से वे मूर्च्छित होकर गिर गए। ज्वालामुखी की लपेटों की आँधी कुछ मिनटों ही रही। यह जिस किसी वस्तु से स्पर्श करती उसे झुलसा कर भस्म कर देती। सेंट पियरे में सहस्रों पीपे मद्य संचित था। भयानक आँच ने इन्हें विस्फोटित कर दिया। प्रज्वलित होती हुई मदिरा नदी की धारा रूप में गली-गली बह चली और

फिर समुद्र में जा गिरी। इस दहकती मदिरा ने रोरैना को कई बार आग लगाई।

"ज्वालामुखी के उद्‌गार के पूर्व बंदरगाह के घाट को जनाकीर्ण देखा गया था। परन्तु विस्फोट के पश्चात् एक भी प्राणी कहीं भी नहीं दिखाई पड़ता था। रोरैना के ६८ व्यक्तियों में से केवल २५ प्रथम लपट के बाद बच रहे।

"फ्रांसीसी युद्धपोत "सुचेत" आया और अपराह्न २ बजे बचा ले गया। वह निकट ही खड़ा रहा और यथाशक्य जिनकी भी सहायता कर सका, ५ बजे तक किया और अपने बचाए हुए आदमियों को लेकर फोर्ट डि फ्रांस चला गया। उस समय ऐसा ज्ञात होता था मानो द्वीप का सम्पूर्ण उत्तरी खंड आग में दहक रहा है।"

———

हवाई द्वीप के ज्वालामुखी

हवाई द्वीप के ज्वालामुखी एकाकी रूप के हैं जो अन्य क्षेत्रों से पृथक रूप में ही विशाल पैसिफिक महासागर के मध्य स्थित हैं। ये द्वीप उन ज्वालामुखियों के समुद्री पेटे से धीरे-धीरे उठ कर बने हुए शंकु हैं जो समुद्र तल से ऊपर तक उठ कर अपने बृहदाकार शिखर को द्वीप रूप में बनाए हुए हैं। यथार्थ में ऐसे कई ज्वालामुखियों के शंकु अपने-अपने मुखों से लावा चारों ओर बाहर फैलाते रहने के कारण समीप-समीप के शंकुओं के मध्य की दूरी को निचले तल से ऊपरी तल तक अधिकांश भर कर एक मिले रूप में विद्यमान हैं जिनके कुंडों या मुखों का रूप कुछ बड़े या छोटे शिखरों के रूप में धरातल पर देखा जा सकता है। इन द्वीप-समूहों में कई द्वीप हैं जिनको दो समानान्तर रेखाओं की सीध में फैला पाया जाता है। इनमें से केवल हवाई द्वीप के मौना लोआ तथा किलाई नामक मुख आज भी जागृत हैं। और शेष विलुप्त या सुप्त बन गए हैं।

ज्वालामुखी के ये पृथक रूप के क्षेत्र कदाचित् संसार के सब से विचित्र क्षेत्र हैं। इन ज्वालामुखियों ने ज्वालामुखी-विज्ञान के अध्ययन का बड़ा ही सुन्दर अवसर प्रदान किया है जिससे इन विषयों में विशेष जानकारी प्राप्त की जा सकी है। निरापद रूप में अध्ययन का अवसर देना इन ज्वालामुखियों की एक विशेषता है। जहाँ हम अन्य अनेक विख्यात ज्वालामुखियों को अपने भयानक

संहार विस्फोट, धूलि धूम प्रसार आदि के कार्यों में संलग्न देखते हैं, वहाँ ये ज्वालामुखी गंभीरता पूर्वक अपनी ज्वाला सीमा के भीतर ही उठा-उठा कर सतत् लावा के दहकाते रहने का दृश्य दिखलाते रहते हैं। कभी-कभी इनकी उभाड़ी या शान्ति पूर्वक उत्सर्जित लावा की लहरें मुख से बाहर फैल भी जाती हैं जो द्वीप की धरती पर एक और परत की कहीं-कहीं पट्टी बैठा जाती हैं। उनके इस प्रयत्न में कभी-कभी बस्तियाँ भी नष्ट होती देखी गई हैं। किन्तु मन्द गति के प्रवाह से लावा का आगमन पहले से ही ज्ञात हो जाने से धन-जन की असीम हानि कभी नहीं देखी गई। थोड़ा-बहुत ऐसा प्रकोप हम देख कर चकित तो हो सकते हैं, किन्तु ३ मील गहराई के महासागर में इन द्वीपों का सारा कलेवर इन ज्वालामुखियों ने अपने लावा उत्सर्जन से किया है। उनको कितना समय लगा, किस वेग से उन्होंने यह कार्य पूरा किया, इसे कोई नहीं कह सकता किन्तु ये लावा के उभाड़ की ही सर्वांगीण रचना हैं। इस विषय में आज दो मत नहीं हैं।

आधुनिक युग में हवाई द्वीप के लावा के उभाड़ों में आज तक एक भी मनुष्य के मृत होने की बात नहीं सुनी गई। ये वास्तव में निर्माण कार्य में संलग्न प्राकृतिक शक्तियाँ हैं जिनको राष्ट्रीय धन रूप में समझा जा सकता है। इतने विस्तृत महासागर के मध्य ये द्वीप न खड़े हों तो अमेरिका और एशिया के मध्य यात्री-वाहक जलयान या रणपोत अपना विश्राम-स्थल पा सकना भी कठिन समझें। यातायात के नवीन साधन, वायुयान के लिए भी विराम स्थल कठिन ही हो जाते। अपवाद रूप में सन् १७९० ई० के उद्गार में कुछ सेना की टुकड़ी के सैनिकों की मृत्यु हो जाना किलोई के उभाड़ पर कलंकवत् माना जा सकता है, अन्यथा इनका जीवन सर्वथा निरीह, निर्दोष ही ज्ञात होता है।

इन द्वीपों के तट से ३० से ५० मील तक की दूरी पर के समुद्र की गहराई ३ मील पाई जाती है। उधर समुद्र-तल से इन के साथ ज्वालामुखी के शिखरों की ऊँचाई इन के पूर्ण कलेवर को प्रकट करती हैं। ज्वालामुखियों का समुद्री पेटे में सब के निचला आधार ५० मील व्यास से कुछ अधिक ही होगा। मौना लोआ तथा किलौई के अतिरिक्त 'मौना की' नाम के ज्वालामुखी को यद्यपि आज विलुप्त रूप में देखा जाता है तथापि उसे समुद्र-तल से १८००० फीट नीचे से उठ कर समुद्र-तल के भी ऊपर लगभग १४००० फीट ऊँचा पाया जाता है। अतएव इसकी कुल ऊँचाई ३२००० फीट मानी जा सकती है जिसका समुद्र-तल से ऊपरी भाग ही हमारी दृष्टि के सम्मुख आता है, परन्तु सारी ऊँचाई का हिसाब लगाकर तो इसे संसार का सबसे ऊँचा पर्वत ही मानना पड़ता है। इसका मुख-कुंड तो अब लुप्त ही हो गया है, परन्तु एक प्राचीन मुखकुंड में अब जलाशय को स्थान ग्रहण किये देखा जाता है। मौना को छोड़ कर दो अन्य विलुप्त ज्वालामुखी भी इससे कुछ कम ऊँचे हैं जिनको मिला कर हवाई द्वीप पर कुल पाँच ज्वालामुखी होते हैं। ये पाँचों ज्वालामुखी परस्पर २० मील के अंतर पर स्थित हैं जिन के मध्य के भाग में दोनों ओर से लावा पहुँच कर २००० से लेकर ७००० फीट तक ऊँचे मैदान बना सके हैं।

मौना लोआ को 'मौना की' का ही बंधु कहा जा सकता है। यह एक विस्तृत, चपटा, ढालनुमा शंकु है, जिसका व्यास समुद्रतल पर ४० मील होगा। इसका शिखर समुद्रतल से लगभग १३७०० फीट ऊँचा है। 'मौना की' पथरीले चूरे और ढोकों वाले शंकुओं के कारण ही मौना लोआ से १२५ फीट अधिक ऊँचा हो गया है। अन्यथा उच्चतर होने का सौभाग्य इसी को मिलता। मौना लोआ को इस प्रकार हम जागृत ज्वालामखियों में सबसे बृहद ही नहीं

चित्र २४—मौना लोआ के लावा का हुपुलोआ बंदर पर प्रहार।

पाते हैं, बल्कि वह संसार का सबसे बड़ा पर्वत भी है। उसके मुख से निकला लावा भी किसी भी अन्य ज्वालामुखी से अधिक निकलता है। इस कारण उसे "आज का ज्वालामुखी-शिरोमणि" नाम दिया जाना युक्तिसंगत ही हो सकता है। समुद्र के पेटे में इस ज्वालामुखी का व्यास १०० मील होगा और कुल ऊँचाई ३०००० फीट। इसके शीर्ष पर एक ८०० फीट व्यास का मुखकुंड है। इस मुखकुंड का धरातल लावा से बना है जो जम गया है। उसे ठोस

रूप का पाया जाता है। वास्तव में निचले तल से ऊपर तक पहुँचे ज्वालामुखीय छिद्र या ग्रीवा का लावा ही ऊपर के भाग में सूख कर उसके मुखकुंड का सूखा धरातल बनाता है। मौना लोआ के शंकु के ढाल की ओर नीचे एक उपशंकु के रूप में दूसरा ज्वालामुखी है जिसकी ऊँचाई समुद्रतल से ४००० फीट ही होगी किन्तु यह यथार्थ में एक स्वतन्त्र रूप से उठा पृथक जन्म धारण किए ज्वालामुखी है जो अब मौना लोआ से मिलकर ऊपरी तल एक धरातल के रूप में ही दिखलाता है। मौना लोआ की ऊँचाई से लावा-राशि ने किलौई की लावा-राशि से मिलकर यह सम्मिलित मंच रचित किया है।

किलौई का मुखकुंड एक अंडाकार आखात है जो २ मील लंबा और एक मील चौड़ा है। कुछ भागों में इस की गहराई १००० फीट है। इस मुखकुंड का धरातल उस मोटी शलाका या ठेपी की तरह का तल कहा जा सकता है जो किसी छेद को नीचे से ऊपर तक घेरे हो। ज्वालामुखी की गर्दन के नली रूप छेद को भरने वाला लावा ही इस रूप का हो सकता है। इस बड़े आखात का ज्वालामुखी की निचली तह तक जो रूप या विस्तार हो उसी का भाग ऊपर तक भरने वाला लावा ऊपर की ओर सूख सकता है। हम उसे ऊपर से एक भारी आखात का पेंदा ही उसे समझ सकते हैं, परन्तु इसके कुछ भाग में लावा की तरलता भी पिघले या खौलते रूप में मिलती है। उसको अग्नि-गर्त्त कहा जा सकता है। लेकिन उसका नाम हाले मौनों के ही नाम से बहुत प्रसिद्ध हो गया है। यह अग्नि-गर्त्त बड़े मुख-कुंड या आखात के अंदर एक दूसरे छोटे आखात में स्थित है। छोटे मुखकुंड का व्यास बड़े मुखकुंड का आधा होगा। लघु मुखकुंड के पेटे में सूखा लावा ऐसी स्थिति में है कि उस पर चला जा सकता है। किन्तु इसके ही एक खंड में खौलता हुआ कुंड भी विद्य-

मान है जिसे हाले मौनों (सतत दहकता अग्निकुंड) नाम दिया मिलता है।

किलौई के इस खौलते अग्निकुंड में लावा की लाल-लाल लपलपाती लहरें उठती और गिरती रहती हैं। जब यह लावा-राशि कुपित रहती है तो उसके उत्तप्त खौलते रूप का दृश्य वर्णनातीत होता है। इसके तल को लहरों के चढ़ाव के समय उठता और उतार के समय बैठता देखा जाता है। इसके तल का तापमान लगभग १००० शतांश का पाया जाता है। लावा की लहरों के साथ भाप भी निकलती पाई जाती हैं। लावा के लहरों रूप में फौवारा उठने के दृश्य को जिन्हें देखने का कभी अवसर मिला होगा वे कभी उसे विस्मृत नहीं कर सकते। इन फौवारों की संख्या कभी हजार तक पहुँच जाती है और कभी कम हो जाती है। गर्मी को बढ़ा कर उत्तप्त गैसें ही इन फौवारों के उठाने का कारण होती है। अतएव लहरों के उठने के समय लावा-तल का तापमान स्पष्टतया बढ़ा देखा जा सकता है। किसी समय यह लावा-कुंड बिल्कुल खाली भी हो जाने का दृश्य देखा जा सकता है। सन् १६-२४ ई० एक बार ऐसी घटना हुई थी। लावा नीचे खिसक कर कहीं बिल्कुल ही लुप्त हो गया था। ग्रीष्म ऋतु में इसके सूखे पेटे से उत्तप्त गैसें अपनी विस्फोट-शक्ति इतना बढ़ा सकीं कि अग्निकुंड के किनारे खंडित कर दिया। १६२४ ई० के मई मास में एक विस्फोट रूप का भयंकर धड़ाका हुआ जिसमें छोटे बड़े कितने ही आकार के प्रस्तर-खंड टूट-फूट कर बाहर फेंक दिए गए। अग्निकुंड से अचानक द्रव लावा लुप्त हो जाने से उसके किनारे टूट-टूटकर कुंड का मुँह ढक सा दिया, इस कारण गैसों के बाहर निकलने का मार्ग अवरुद्ध होने से ही विस्फोटक रूप का धड़ाका हो सका। इस भयानक धड़ाके में भाप की प्रचुर राशि ने अपने

वेग से कुंड का मुख खोलकर ढोंकों तथा चूरे को हजारों फीट ऊपर आकाश में फेंक दिया। तीन मास तक इस प्रकार के उपद्रव होते रहे। उस समय तक इस अग्निकुंड का विस्तार पहले से चौगुना होकर १६० एकड़ में फैल गया था तथा गहराई १२०० फीट हो गई थी।

समय-समय पर इस अग्निकुंड की ऊपरी तह ऊँची और नीची होती रही है। ऊँची होने पर लावा की लहरें फौव्वारे का रूप बनातीं। नीची होने पर किनारों का तोड़-फोड़ होता तथा धूल के भारी बादल ऊपर उठते।

१९२४ ई० के पहले तक इस कुंड में पिघलते लावा का दृश्य तो किसी घड़ी भी दिखाई पड़ता था, किन्तु उसके बाद से यदा-कदा ही अपना खौलता रूप दिखाता है। १९३१ ई० में एक भूकंप आने से इस अग्निकुंड के तल से पिघला लावा फूट निकला था जिसका दृश्य दो मास तक रहा। इस घटना के समय अग्निकुंड में १०० फीट की गहराई तक पिघला लावा भर गया था।

मौना लोआ से २० मील की दूरी पर स्थित होने पर भी किलोई एक सर्वथा स्वतंत्र ज्वालामुखी है, जिसके लावा का भीतरी स्रोत पृथक रूप का ही है क्योंकि दोनों ज्वालामुखियों के उभाड़ के समय सदा स्वतंत्र होते आए हैं। किलोई के मुखकुंड के बाहर लावा के बह निकलने का दृश्य कभी भी नहीं देखा जा सका है। किन्तु १९२४ के धड़ाके के अतिरिक्त अन्य धड़ाके भी हुए हैं जो इस से भी अधिक प्रबल थे। इसके बड़े मुखकुंड या आखात का भींटा सन १७८९ ई० के एक उभाड़ से निकले चूरों से बना कहा जाता है। सन् १८४८ से १८५५ तक किलोई लगभग शान्त ही बना रहा, नीचे से इतनी गर्म गैसें या भाप नहीं निकल पाती थीं कि लावा की तह पिघल उठे। इस कारण अग्निकंड का लावा जम उठा।

ठोस तह बन गई, वह धीरे-धीरे एक बुर्ज के रूप में फूल उठी और ३०० फीट ऊँची हो गई। कुछ समय बाद उस बुर्ज की तह फट पड़ी और उसमें से लावा निकल कर ५० फीट तक ऊपर उठता रहा। उसके साथ धड़ाका भी होता रहा। अगले वर्ष बुर्ज बिल्कुल लुप्त हो गई।

हवाई द्वीप के दोनों जागृत ज्वालामुखियों के लावा लगभग एक समान के ही हैं। परन्तु मौना लोआ में कभी भी धड़ाका नहीं देखा गया। ऊपरी मुखकुंड में लावा का भी उभाड़ कभी-कभी होता है, ज्ञात होता है कि इसके भीतरी भंडार की इतनी अधिक शक्ति नहीं रह गई है कि उसके इतने ऊँचे शिखर के मुखकुंड से लावा का उभाड़ कर सके अतएव शंकु की दीवाल से कहीं निचली तह से ही लावा फूट-फूट कर निकला देखा जाता है। शंकु का पार्श्व फोड़कर लावा के उभाड़ की एक प्रसिद्ध घटना सन् १८६८ ई० की है। उस समय समुद्र-तल से लगभग ३००० फीट की ऊँचाई के तल से लावा फौवारे रूप में १००० फीट से भी अधिक ऊँचा उठ सका। रात को उस मार्ग से जाने वाले जहाज यह समझते कि द्वीप के सारे पूर्वी खंड में आग लग गई है। इस फटान से अत्यन्त पतला लावा धारा बनाकर ४० या ५० मील चलकर समुद्र तट तक पहुँच सका।

मौना लोआ की प्रशस्ति में एक दर्शक ने निम्न वर्णन प्रकाशित कराया था :—

"ज्वालामुखीय धारा के उस स्रोत पर दृष्टिपात करना अत्यन्त रुचिकर था जिसने हवाई द्वीप की रचना करने वाले चार ज्वालामुखी पर्वतों की रचना की, जो कदाचित् विश्व के सर्वाधिक असाधारण वर्ग के ज्वालामुखी हैं। आधुनिक ज्ञान के आधार पर भूगभविज्ञानवेत्ता इस बात पर विश्वास करने की ओर प्रवृत्ति दिखाते हैं

कि जब यह प्रस्फुटित धारा, जो कई मीलों नीचे धरती को कोख में जन्म धारण कर सकी, "मौना की" ज्वालामुखी की आधुनिक ऊँचाई १३८२५ फीट तक पहुँचा सकी तो वह अपनी शक्ति और आगे नहीं बढ़ा सकती थी और अपने प्रस्फुटन का मार्ग अन्यत्र ढूँढने के लिए विवश होने पर ह्वाला लाई (८२६६ फीट) तथा किलोई ज्वालामुखियों को बनाया। तत्पश्चात् इसने अपनी शक्ति फिर स्थानान्तरित की और उन्हें सबसे बृहदाकार इस मौना लोआ की रचना की।"

मौनालोआ का ऊपरी मुखकुंड ५ मील परिधि का होगा जिस पर ५००, ६०० फीट ऊँचे टीले बाढ़ बनाये हुये हैं। इसके लावा के उभाड़ समुद्र के नीचे के भाग या निचले शंकु के ७००० से १३००० फीट की ऊँचाई के भाग में फटे दरारों से होते पाये जाते हैं।

इसके उभाड़ों में कुछ का विवरण निम्न प्रकार है :—

१. सन् १८७७ ई० में समुद्र तट से १ मील दूर पर पानी में समुद्रगर्भी उभाड़।

२. इसी वर्ष शंकु के दक्षिण-पश्चिम पार्श्व से उभाड़।

३. १८८०-८१ पार्श्व भाग से उभाड़। नौ मास तक यह उभाड़ चलता रहा।

४. १६१६ का लावा का उभाड़ एक ऐतिहासिक घटना है।

५. १६२६ ई० का लावा का उभाड़ समुद्र तट तक पहुँच कर हुपुलोआ ग्राम को ध्वंस कर सका।

६. १६३५ ई० में लावा के उभाड़ ने हिलो नामक बंदरगाह को नष्ट करने की अशंका उत्पन्न की। वायुयान से लावा के ऊपरी मार्ग में गोले बरसाकर लावा का मार्ग बदलने से नगर बच गया। यह मानव उद्योग से नैसर्गिक क्षोभ के मर्दन का विचित्र उदाहरण था।

७. शिखर के मुखकुंड के आर-पार एक चार मील लम्बी दरार फटी जिसमें बड़े मनोहर फौवारे छूट पड़े। महीनों यह दृश्य रहा।

१६१६ ई० के लावा-उत्सर्जन का वर्णन ज्वालामुखी वेधशाला के संचालक ने निम्न शब्दों में किया था :—

"एक भूरे लावा की ऊँची धारा के समीप ही घोड़ों को छोड़ दिया गया और पैदल ही चलकर लावा की फेर-बदल कर बही लगभग दस लहरों को पार किया गया। यहाँ पहुँच कर फटान के शङ्कुओं की एक पंक्ति देखी जा सकती थी। एक दरार रूप में धरती की वास्तविक फटान में एक साथ ही ४० शङ्कु बने दिखाई पड़ते थे। उस फटान में १००० फीट तक लगातार विशाल फौवारे उठते दिखाई पड़ रहे थे जिसका दृश्य एक लपट की भारी भित्ति सा दिखाई पड़ता था, लाल-लाल लपटें थीं। सूक्ष्मता से देखने पर वे प्रदीप्त, हल्के, भुरभुरे, पदार्थ की बनी दिखाई पड़ती थीं जो ऊपर उठने पर पीत वर्ण की तथा गिरने पर रक्त वर्ण की भासित होती थीं। उसकी ध्वनि चट्टान से समुद्री लहरों के तुमुल संघर्ष सरीखी उठती थी। बीच-बीच में फटान में भरी लावा-राशि में से एक उत्तप्त वायव्य उठकर उसे मथ कर फेनिल कर देता तथा फेन ऊपर उछाल दिया जाता था.........

झील के दक्षिण-पश्चिमी भींटे के भग्न भाग से बाहर आने का द्वार बन गया था। वहाँ ४० फीट चौड़े नाले से, लावा की धारा किसी बाँध के खंडित भाग से प्रवाहित जलधारा समान बहती थी। हम लोगों से केवल १०० फीट पश्चिम यह धारा एक भयावह नदी बनी थी जिसका वेग १८ मील प्रति घंटा होगा।.........

लावा की धारा १० दिन तक बहती रही।

जहाँ पर लावा की धारा समुद्र से मिलती थी, वहाँ से ऊपर की ओर भाप की धारा बहकर अपने साथ पत्थर के ढोंके और रेत

उड़ा ले जाकर रेत का एक काला शंकु बना सकी। ऊपर तैरते हुये लावा-खंड जो उत्तप्त रक्त वर्ण या श्याम वर्ण के लावा-खण्ड थे अथवा नीचे रक्त वर्ण के और ऊपर की ओर श्याम वर्ण के उस लावा की द्रवित धारा के ऊपर सीधे ही या लुढ़क-पुढ़क कर ऊपर-नीचे होते बह रहे थे।

"फटान के स्रोत का अनुरंजित दृश्य अति ही मोहक था। लाल टेस रंग के फौवारों के ऊपर रक्त तथा हरित लपटों की तहों पर आरोहित श्वेत फेन पृष्ठ भाग में गहरे हों या नीले धूसर वर्ण की आभा से सुशोभित था। इसके ऊपर धूमिल पीत वर्ण के बादल बीच-बीच में भूरे या कहवे के रंग की तरंगी युक्त उद्भासित होते थे। इनके भी पीछे सघन नीलिमामय गगन मण्डल दूरस्थ क्षितिज के विमल बादाभी धूमजों युक्त छबिमान था।"

जापान के ज्वालामुखी

बैंडेसैन या कोबंडेसैन ज्वालामुखी हजार वर्ष तक सुप्त पड़ा रहकर जापान देशवासियों को अपनी स्थिति का धोखा देता रहा। उसके हृदय में अग्नि के दबे रहने का कुछ भी संकेत न मिलने से किसान उसके मुख में उगी बनस्थली में नित्य विहार करते, काम धंधा करते समय व्यतीत करते। कदाचित कभी-कभी बीच की शताब्दियों में कुछ क्षुब्धता का प्रमाण मिल जाया करता रहा हो किन्तु कभी भारी उपद्रव नहीं देखा गया। यहाँ पर कभी कोई बड़ा ज्वालामुखी था। उसके मुखबंध के खंडित होने से अनेक शिखर से बन गए। उन्हीं में एक बैंडेसैन है। वह पूर्वकालीन वृहद् ज्वालामुखी किसी समय अपना भीषण उभाड़ कर अपने भीटे खंडित कर सका। उस उभाड़ में कदाचित ५० ग्राम विनष्ट हो गए थे। किन्तु उस दुर्घटना के एक सहस्त्र वर्ष पश्चात् ऐसी स्थिति हो गई थी कि उसके सम्पूर्ण मुख के क्षेत्र में जंगल भर गया था।

१५ जुलाई १८८८ ई० को जो उभाड़ हुआ, वह एक उल्लेखनीय घटना है। पहले कुछ साधारण उभाड़ हुआ, फिर भीषण भूकंप आया। इसके पश्चात् ही धुएं और भाप की भारी मात्रा फट पड़ी। धड़ाके के पश्चात् धड़ाके होने लगे। सारी भूमि तिमिराच्छन्न हो गई। उस अंधकार में बिजली की कौंध भी कभी-कभी उठती दिखाई पड़ जाती। इन उपद्रवों के पश्चात् पंक, मिट्टी और पत्थर की भारी नदी सी पर्वत के ढाल पर तीव्रभांति से उमड़ चली

जिसमें मार्ग के ग्राम समाधिस्थ होते गए। पचीसों वर्ग मील भूमि उत्पात का क्षेत्र बन गई।

इस विस्फोट का आँखों देखा वर्णन प्राप्त हो सका है जो किसी जापानी धर्मयाजक का है। उसने इस प्रकार घटना का उल्लेख किया है :—

१५ तारीख का प्रातःकाल, जो एक घातक दिवस था, एक निर्मल, आलोकित आकाश से प्रारम्भ हुआ।......किन्तु ८ बजे प्रातः धरती में एक विकट उथल-पुथल उठी, और हम सब घर से बाहर निकल आए। लगभग १० मिनटों में, जब हम स्तब्ध, भयातुर खड़े ही थे कि कोबंडे के ढाल पर से अकस्मात् एक भयानक धड़ाका उठा। इस धड़ाका उठने के स्थल के लगभग एक मील नीचे की ढाल के स्थान पर से अज्ञात काल से धुआँ उठता आता रहा था। उभाड़ के पश्चात् काला धुआँ घनी राशि में उभाड़ कर वायु में उभड़ चला और आकाश को आच्छादित कर लिया। इस समय हम लोगों के चारों ओर छोटे और बड़े पथरीले ढोंके बरसते रहे। इन सब विपत्तियों को अधिक भीषण बनाने के लिए वज्र घोष भी उठता सुनाई पड़ता। पर्वतों तथा वनस्थली का विदीर्ण होने का अलौकिक दृश्य भी दिखाई पड़ा जिसे मैं कभी विस्मृत नहीं कर सकता। हम सब चारों ओर भागने लगे। किन्तु कुछ गज ही बढ़ पाए होंगे कि हम सब धरती पर पछाड़ खाकर गिर गए। बिल्कुल घोर अन्धकार था। हमारे पैरों के नीचे धरती अब भी कंपायमान थी। हमारे नाक, कान, मुख और आँखें राख और मिट्टी से भर गई थीं। न तो हमारे मुख से शब्द निकल सकते थे और न हम हिलडुल ही सकते थे। मैं यह नहीं जानता था कि मृत हो गया हूँ या स्वप्नाभिभूत हूँ। उसी समय मेरे हाथ पर एक पत्थर गिरा और मैंने जाना कि मैं आहत हो गया हूँ। यह सोच

कर कि मृत्यु समीप है, मैं बुद्ध भगवान का नाम जपने लगा। बाद में मेरे कूल्हे, दाहिनी टाँग और पीठ पर चोट लगी। एक घंटे के पश्चात् पत्थरों का बरसना बन्द हुआ, घोर अंधेरे ने चांदनी रात का रूप धारण किया। यह अवसर भाग निकलने का देख कर मैं उठ खड़ा हुआ और चिल्ला उठा "भाइयो, मेरा साथ पकड़ो," किन्तु वहाँ तो कोई भी नहीं था। मेरे आधा मील उतर चलने पर दूसरा धड़ाका हुआ। चौथाई मील और उतर चलने पर तीसरा धड़ाका हुआ। किन्तु पत्थर की वर्षा रुक गई थी। राख ही बरसती थी।

भारी मात्रा में मिट्टी, धूल, राख का आकाश में उड़कर चारों ओर फैल उठना इस उभाड़ की विशेषता थी। लगभग २७ वर्ग मील भूमि इस मिट्टी, राख आदि से पट गई थी। लगभग डेढ़ अरब घनगज इन स्थानों में बिछ गई होगी। पहाड़ के टूट गिरने का दृश्य देखा गया। पर्वत ध्वस्त सा हो गया। चूर-चूर होकर वह चट्टान टूट गिरने की भाँति ढाल से नीचे लुढ़क पड़ा। भारी उपद्रव में कुछ चूरे, ढोंके आदि नीचे लुढ़कते। कुछ मिट्टी, धूल आदि वायु में उड़ जाती और दूर तक फैल कर भूमि पर गिरती। मृत्यु-संख्या अधिक नहीं थी। लगभग ५०० आदमी मरे होंगे। इनमें से १०० व्यक्ति ऐसे भी थे जो झोपड़ों में सुरक्षित पड़े थे। चुप पड़े रहने से उनकी जीवन-रक्षा हो जाती, परन्तु रक्षा की उतावली में जब वे अधिक सुरक्षित स्थान में पहुँचने की अभिलाषा से बाहर निकले तो ज्वालामुखी की धूल, मिट्टी आदि की वर्षा में धरातल पर ही समाधिस्थ होकर मूर्तिवत खड़े-खड़े ही मृत हो गए।

ज्वालामुखी के मुख से वायु के गर्म झोंके ने धरातल पर प्रवाहित होकर जो सर्वनाशक दृश्य उपस्थित किया, वह भूला नहीं जा सकता। भवन ध्वस्त हो गये, वृक्षों की पत्तियाँ और डालें ऐसी नुच

गई मानों वे नंगे लौह-स्तंभ हों। आकाश के बरसने वाले पथरीले ढोंकों ने धरातल पर गिर कर बड़े खड्ड से बना दिए थे। वह भी एक विचित्र ही दृश्य था। इतना उपद्रव खड़ा करने वाले ज्वालामुखी को ६००० फीट ऊँचा ही पाते हैं। इस ज्वालामुखी का उभाड़ केवल दो घंटे ही रहा होगा किन्तु उतने ही समय में इसका अधिकांश, २००० फीट से भी अधिक ऊँचा भाग सर्वथा उड़ गया।

बैंडेसैन ज्वालामुखी को उन ज्वालामुखियों की श्रेणी में गिना जा सकता है जो अर्द्ध ज्वालामुखीय उभाड़ ही करते हैं। कहीं धरातल या समुद्र के भाग से जल का प्रवेश धरती की पपड़ी के उस भाग में हो पाता है जहाँ मगमा या पिघल सकने योग्य पाषाण को ऊपर की तहें अपने दबाव से ही ठोस बनाए रखती हैं तो उस गहरी तह के उत्तप्त पाषाण के साथ जल का संपर्क होने से भारी मात्रा में भाप उत्पन्न होकर बहुत ही अधिक प्रबल विस्तार करने लगती है। उस भारी मात्रा में एकत्र ही उत्पन्न भाप की राशि ऊपर की ओर स्तरों के बीच दुर्बल स्थान या विवर पाकर बड़े ही वेग से ऊपर फट पड़ने का उद्योग करती है। इस प्रकार के उभाड़ करने वाले कितने ही ज्वालामुखियों के होने का विश्वास किया जाता है। सन् १८८३ ई० में जापान में ही शिराने नामक ज्वालामुखी का उभाड़ उसी प्रकार भयानक रूप में हुआ था। १८६३ ई० में एक दूसरे ज्वालामुखी अज़ूमा सैन का भी इसी प्रकार उभाड़ हुआ। जावा, कोस्टा रिका और अमेरिका में भी ऐसे ज्वालामुखियों के उभाड़ होने का अनुमान किया जाता है। जावा में १८२२, १८४० में गेलुंगंग, कोस्टा रिका में सन् १८६४ ई० में टुरियाबा तथा अमेरिका में लेस्सेन पीक के कुछ उभाड़ इस प्रकार के होने का विश्वास किया जाता है। ऐसे ज्वालामुखियों में लावा, प्रस्तर खंड या चूर्ण का उभाड़ प्रायः नहीं के बराबर ही होता है।

पैसिफिक महासागर के चारों ओर तटवर्ती ज्वालामुखी पट्टी में जापान द्वीप समूह प्रमुख स्थान रखते हैं। इन द्वीपों में लगभग २०० ज्वालामुखी होंगे जिनमें जागृत ज्वालामुखियों की संख्या ५० तक पहुँचती होंगी। इनमें से १८ ज्वालामुखियों में से रात-दिन धुआँ उभड़ता ही रहता है।

जो ज्वालामुखी विस्फोटक रूप के होकर प्रस्तर खंडों और चूर्णों को अपने चारों ओर फेंक कर अपने मुख के चारों ओर के भींटे बहुत ढालुआ बनाते हैं उनको प्रस्तरचूर्णीय शंकु का ज्वालामुखी नाम दिया जा सकता। ऐसा ही प्रस्तरचूर्णीय शंकु (सिंडर कोन) जापान के एक प्रसिद्ध ज्वालामुखी का है, जो फ्यूजीयामा नाम से प्रसिद्ध है। इस ज्वालामुखी की ऊँचाई समुद्र-तल से १२४०० फीट के लगभग होगी। इतने उच्च पर्वत के शिखर को शीतोष्ण कटिबंध के क्षेत्र में हिम-मय ही देखा जा सकता है। अतएव अपने तुषाराच्छादित शिखर-युक्त ज्वालामुखी को ग्रीष्म ऋतु में कुछ समय के लिए गम्य पथ बना कर मुखगह्वर का दर्शन करने पहुँचने वाले दर्शकों को जमघट करते देखने में कुछ आश्चर्य नहीं किया जा सकता। जापान के कलाकारों को भी अपनी चित्रण-प्रतिभा के उभाड़ के लिए इस भव्य ज्वालामुखी को आधार बनाना स्वाभाविक ही हो सकता है। अतएव शताब्दियों से अनेकानेक सुन्दर चित्रों में हम जापानी चित्रण-कला को फ्यूजीयामा के मनोहर चित्रों में सुशोभित होते देखते हैं, किंवदन्तियों में भी बड़े ही सरस रूप में इस पर्वत को वर्णित होते देखा जाता है। जापानी सार्वजनिक स्थल, नृत्य तथा व्यवसाय-गृह तथा व्यक्तिगत आवासों में हम सर्वत्र ही आदर की दृष्टि से चित्रों, पटों आदि में चित्रित प्रदर्शित होते देख सकते हैं।

फ्यूजीयामा जापानियों का एक तीर्थ ही बन गया है जिस के

चित्र २५—फ्यूजीयामा।

दर्शकों की संख्या ग्रीष्म काल में ५० हजार तक पहुँच जाती होगी। यह ज्वालामुखी जापान की राजधानी टोकियो से दक्षिण-पश्चिम की दिशा में लगभग ६० मील पर अवस्थित है। अन्य पर्वतों से चारों ओर से पृथक, एकाकी रूप में स्थित इसका सुरम्य रूप दर्शनीय ही है। इसका साधारण सुडौलपन इसकी शोभा को द्विगुणित कर देता है। दक्षिण की ओर यह अबाध रूप से अपने पार्श्व को सीधे समुद्र-तट तक विस्तृत किए हुए हैं। इसके शिखर

की चढ़ाई दुष्कर नहीं है क्योंकि इसका ढाल मध्यम रूप का ही है। शिखर का व्यास लगभग २००० फीट होगा तथा मुख-गह्वर की गहराई लगभग ५००-६०० फीट अनुमानित की जाती है।

जापान के लिखित इतिहास में इस ज्वालामुखी का अनेक बार उद्गार होने का प्रमाण मिलता है। इसका अंतिम उभाड़ सन् १७०७ ई० में हुआ था। उस समय इसके मुख-गह्वर से लावा की भारी धारा बह चली थी। मुख से ऊपर उभड़ी हुई राख तो टोकियो नगर के तल में कई इंच तक जमी पाई गई थी। इस प्रकार इसमें लावा और प्रस्तरचूर्ण दोनों का ही उभाड़ होने से मिश्रित रूप के शंकु का निर्माण हुआ है। इसमें केवल बाहर की ओर ही लावा का बहाव नहीं पाया जाता, बल्कि शंकु की दीवाल या भींटे के फट पड़ने से निकला लावा भारी दरारों से निकल पड़ने के कारण बाद में जम जाने पर भित्ति-शिला (डाइक) का निर्माण किए भी दिखाई पड़ता है। जहाँ शिलाओं के मध्य विदारित खंड में आकर जमा लावा भित्ति-सा बन जाता है, वहाँ सीधे ऊपर की ओर ही न जाकर बगल से दो शिला-स्तरों के बीच के अंतराल में फैल कर एक चपटी परत भी बना सकता है जिसे पत्र-शिला (सिल) नाम दिया जाता है। फ्यूजीयामा के शंकु के पार्श्व में भीतरी भाग में ऐसी पत्र-शिला भी लावा के भीतर ही भीतर फैल कर जमने से बनी मिलती है।

जापान के साकुराजिमा ज्वालामुखी की ऊँचाई लगभग ३५०० फीट होगी। यह जापान के दक्षिणी छोर पर एक छोटे द्वीप पर है जो कागोशिमा खाड़ी में कागोशिमा नगर के सामने अवस्थित है। यह नगर इस नाम के प्रान्त की राजधानी है। यहाँ की जन-संख्या लगभग ७०००० होगी। इस नगर से साकुराजिमा द्वीप तक ढाई मील चौड़ा समुद्र फैला था। कागोशिमा के इतने निकट के इस

द्वीप के तटवर्ती १८ ग्रामों में २२००० निवासी रहते थे। किन्तु सन् १९१४ में इस ज्वालामुखी के उभाड़ ने सत्यानाश का दृश्य उपस्थित किया।

साकुराजिमा के समीपवर्ती स्थानों में जब-तब भूकम्प के उभाड़ होने लगे थे। इसलिए वैज्ञानिकों ने यह अनुभव किया था कि इस का अवश्य ही किसी समय भयंकर उभाड़ होगा जिससे कागोशिमा नगर की घनी बस्ती को भारी हानि उठानी पड़ सकती है। चार वर्ष पूर्व तो कुछ विद्वानों ने पत्रों में चेतावनी भी प्रकाशित करवा दी कि नगर का संहार हो जाना संभव है। जब किसी ज्वालामुखी के समीप के स्थल में बार-बार भूकम्प उठना प्रारम्भ हो तो यह निश्चित रूप में देखा जाता है कि प्रारम्भिक रूप में अपने क्षोभों द्वारा इन भूकम्प रूपों में अग्रिम सूचना देने के पश्चात् ज्वालामुखी का अवश्य ही भयंकर उभाड़ होता है जो भीषण नाश का दृश्य उपस्थित करता है। इस अकाट्य सत्य को साकुराजिमा ज्वालामुखी ने भी कई वर्षों की हलचलों के पश्चात् अपने १९१४ ई० के भारी उभाड़ रूप में प्रकट किया।

१९१० ई० के दो लेखकों ने अपनी भविष्यवाणी रूप में इस ज्वालामुखी के उभाड़ से हानि होने की विज्ञप्ति पत्रों में प्रकाशित कर दी थी। सन् १९१३ ई० में इसी भविष्यवाणी को सत्य करने का श्रीगणेश करने के लिए ९१ बार भूकम्पों का उभाड़ देखा गया। इसके पहले वर्षों में ३४ भूकम्पों का प्रतिवर्ष औसत देखा जा रहा था। किन्तु इस औसत के इतना बढ़ जाने पर तो वैज्ञानिकों को बहुत अधिक चौकन्ना हो जाना पड़ा। भूकम्पमापक यंत्र पर उनकी दृष्टि बड़ी जागरूकता से रहने लगी।

१० जनवरी १९१४ ई० को अपराह्न और संध्या को भूकम्प के पाँच प्रबल धक्के उठे। दूसरे दिन सूर्योदय के पूर्व ही तीन और

अधिक भीषण धक्के उठे, जिनके साथ वज्र-घोष भी सुनाई पड़ा। ११ जनवरी को दस बड़े भारी धक्के उठे। छोटे-मोटे धक्कों का तो ठिकाना ही नहीं था। प्रातःकाल तो प्रति घण्टे पाँच धक्के उठे, मध्याह्न के लगभग प्रति घण्टे ग्यारह धक्के अनुभव हुये। सन्ध्या को धक्कों का औसत प्रति घंटा बीस तक पहुँच गया। अधिकांश धक्कों में गड़गड़ाहट की ध्वनि तथा तड़प सुनाई पड़ती मानों भारी दबाव में पड़ी कोई गैस अचानक फटी पड़ रही हो। कागोशिमा में संध्या से अर्द्ध रात्रि तक ११ जनवरी को गड़गड़ाहट के साथ भूकम्पों को प्रति २० मिनट पर अनुभव किया जा सका। अर्द्ध-रात्रि के पश्चात् ३ बजे रात तक प्रति १० मिनट पर भूकंप अनुभव किया जाने लगा। तत्पश्चात् दो घंटों तक प्रति ५ मिनट पर भूकम्प और गड़गड़ाहट अनुभव किया जाता रहा। ११ जनवरी के प्रातः ४ बजे से लेकर १२ जनवरी के प्रातः १० बजे तक कुल ४१७ भूकम्प उठने का उल्लेख पाया जाता है। १२ जनवरी को प्रातःकाल १० बज कर ५ मिनट पर भयानक विस्फोट उठा जिसने धरती के भीतरी क्षोभ को बाहर निकाल फेंकने का अवसर प्राप्त किया। बाद में भूकम्प शान्त हो गये। इस प्रकार इस भयानक उभाड़ के ४५ घंटे पूर्व से ही भयानक रूप में चेतावनी प्रारम्भ हो गई थी जिनको भूकंप तथा भीषण गड़गड़ाहट रूप में सब लोगों ने अनुभव करना प्रारंभ कर दिया था।

जापान के इस ज्वालामुखी के उभाड़ का विस्तृत वर्णन डा० जग्गर नाम के एक वैज्ञानिक ने किया है जो हवाई द्वीप की ज्वालामुखीय वेधशाला का संचालक था। उसने एक पत्र में इन वर्णनों को प्रकाशित कराया था। उसने लिखा है :—

"इन पूर्व सूचनाओं से लाभ उठाया गया। जल-प्रणाली के आरपार प्रत्येक सुलभ हो सकने वाली नौका रविवार ११ जनवरी

को सारे दिन भाग-दौड़ करती रही तथा द्वीप के निवासियों, उनके बिछौने, चटाइयाँ, चावल की बोरियाँ तथा पशु-पक्षी को जापान के मुख्य भूखंड तक पहुँचाती रही। सोमवार तक स्थल सेना, समुद्री बेड़े तथा पुलिस कर्मचारियों ने अपना अधिकार कर लिया था, जहाजी कंपनियाँ, संवाद-पत्रों के कर्मचारी, माध्यमिक विद्यालय के छात्रों ने द्वीप में रक्षक-दलों की स्थापना कर ली थी तथा प्रत्येक प्राणी को, जिन्हें वे पा सके, हटा ले गए। लोगों ने मन्दिरों के हाते, समाधिस्थलों तक में आश्रय लिया। व्यवसायियों ने सहायता प्रदान की। ५००० शरणार्थी विद्यालयों, मंदिरों तथा सार्वजनिक भवनों में ठहराए गए। कदाचित् ६५००० व्यक्ति स्थानान्तरित किए गए तथा लोगों के स्वेच्छा-प्रदत्त आतिथ्य के भागी हुए।

"सोमवार को १० बज कर ५ मिनट पर अंतिम घड़ी आ पहुँची। उस समय कागोशिमा के सम्मुखीय पार्श्व में पर्वत के मध्य भाग में भयग्रस्त जनता ने एक श्याम वर्ण धूम-राशि को गुब्बारा रूप में फूल उठकर बड़े अद्भुत रूप में उस धरातल से ऊपर चढ़ते देखा जहाँ पर एक घड़ी पूर्व ही नारङ्गी की बगीची, ईख के खेत तथा मूली की क्यारियाँ विद्यमान थीं। धूम-राशि पहले तो लेटी सी ही फैलती रही, फिर खड़ी ऊपर उठती दिखाई पड़ी और आकाश में ३०००० फीट ऊँचाई तक उठ गई। पहले उसका गदा का रूप रहा। किन्तु बाद में महान चक्र का रूप बन सा गया। क्षणिक विश्रान्ति किन्तु अधिकाधिक भीषणता के साथ विस्फोट का यह विलोड़ित आघात अधिक से अधिक भयावह ही होता गया। धूम तथा धूल के भीषण बवंडर में बिजली की रेखाएँ कौंध उठतीं तथा इस घोर कालिमामय धूम-पुंज में निम्न खंड में ऊपर की ओर उभड़ते हुए शिला-खंड, बमगोले, रेत तथा धूम की खड़ी रेखाएँ पर्वत की ऊँचाई के बराबर अठखेलियाँ करती समय-समय पर देखी जातीं।

इसके अतिरिक्त देदीप्यमान वृहद् पाषाण-खंड भी बाहर फेंके जाते देखे जाते जो अपने पीछे वाष्प की विलोडित रेखाएँ छोड़ जाते।

"जन-हानि की एक मात्र घड़ी वह दुर्घटना थी जो उसी दिन संध्या को घटित हुई जब कि एक भयंकर भूकंप ने कागोशिमा की दीवालों और भवनों को धराशायी कर दिया। चट्टानों के बड़े-बड़े ढोंके तोड़ कर नीचे लुढ़का दिया। रेलवे लाइन तथा तार को अस्तव्यस्त कर दिया। चट्टानों के टूटने से शरणार्थी संकटापन्न हुए। १० फीट ऊँचाई की ज्वार लहर ने बन्दर की छोटी-छोटी समुद्री नौकाओं का सत्यानाश कर दिया। ३५ व्यक्ति पिसकर मर गए, ११२ आहत हुए। यह भूकंप विश्वव्यापी सा था, क्योंकि योरप तक इसका प्रभाव पहुँचा।

"ज्वालामुखी से लावा का बहाव प्रारंभ हो गया था तथा गैस के विस्फोटों ने भीतरी धरती के लाखों मन द्रव्य को विच्छिन्न कर दिया था जिससे ज्ञात होता है कि यह भूकंप कदाचित् भीतरी गहराई में हलचलों या अव्यवस्था का प्रमाण था जो जापान के क्यूशू द्वीप से फारमोसा तक ६०० मील दक्षिण-पश्चिम की दूरी तक विस्तृत द्वीपों की माला में फैले हुए र्यू-र्यू नामक ज्वालामुखियों की महान् लड़ी के अंतर्गत प्रारम्भ हुई थी।

"१४ जनवरी को अंतिम दुर्घटना समाप्त होती जान पड़ी और ज्वालामुखी के मृत्यु क्षेत्र में जो १५००० मनुष्य निवास करते थे, वे नगर में भटकते रहे। द्वीप पर के १८ ग्रामों में से सात नष्ट हो गए। ...ऊपर आकर गिरी राख तथा बमगोले और ढोंकों से हकामा-गोशी नाम का ग्राम बिल्कुल नष्ट हो गया। मुख्य भूखंड तथा द्वीप के मध्य के समुद्र को लावा ने पाट दिया तथा साकुराजिमा द्वीप को प्रायद्वीप रूप में परिवर्तित कर दिया। एक मास में लावा

समुद्रतल से ३०० फीट ऊँचा स्थल बना सका जहाँ पहले २०० फीट गहरा समुद्र था।"

साकुराजिमा का उभाड़ कदाचित् जापान के इतिहास में सबसे अधिक ही भयानक था परन्तु बड़ी सतर्कता तथा सावधानी रखने के कारण धन-जन की भारी हानि बचा ली गई। कुल ३५ व्यक्ति मरे। उनकी मृत्यु भी कागोशिमा नगर में भूकम्प के कारण हो सकी थी। दो व्यक्ति भय से समुद्र में कूद पड़े थे, उनकी मृत्यु हो गई थी किन्तु जहाँ तक ज्ञात हो सकता है ज्वालामुखी के उभाड़ की वैज्ञानिक भविष्यवाणी के कारण ज्वालामुखी के विस्फोट से एक भी व्यक्ति की मृत्यु नहीं हुई। किन्तु इसके विपक्ष जापान में ही १६२३ के भीषण भूकंप में ४ लाख मनुष्यों का प्राणान्त हो गया था।

जापान का मिहारायामा ज्वालामुखी शतशः जापानी युवकों के आत्मघात करने का वीभत्स गर्त्त या कूप कहा जा सकता है। भावावेश में आकर किन्हीं कारणों से मृत्यु का स्वेच्छा से आलिंगन करने के लिए जोशीले या निराश नवयुवकों को इस ज्वालामुखी पर पहुँचते और इसके मुख-गह्वर में अपने को फेंक देने का कारुणिक दृश्य देखा जाता रहा है। एक बार गह्वर या मुखरंध्र में गिर जाने पर फिर कभी शव का कुछ भी पता नहीं लग पाता था, अतएव जीवन से ऊबे जापानी युवकों के लिए मृत्यु का यह मार्ग सुगम और अचूक ज्ञात होता रहा है। किन्तु किसी समय इस मृत्यु-कूप का अंतर्भाग दर्शन करने के लिए जापान ऐसे देश में आत्मघातकों की ही भाँति दुस्साहस कर उतरने वाले व्यक्तियों की कमी नहीं हो सकती थी। निदान एक जापानी संवाद-पत्र ने सार्वजनिक रूप से इस कूप के अंतर्भाग का रहस्योघाटन करने के लिए कुछ व्यक्तियों को नीचे पहुँचाने की व्यवस्था करवाई। एक गोलानुमा फौलादी खटोला बनाया गया जिसमें शीशे की खिड़कियाँ रक्खी गईं। इसे

क्रेन यंत्र से नीचे गिराने और ऊपर उठा लेने की व्यवस्था की गई। एक गड़ारी पर से रस्सी ले जाकर उसे खटोले में बाँध कर क्रेन से लटका दिया गया। नीचे उतरने वाले साहसी वीरों को अग्नि-अभेद्य एसबेस्टस के वस्त्र पहनाए गए। खटोले में टेलीफोन लगाया गया, जिसका संबंध ऊपरी तल तक रक्खा गया। छाया-चित्र (फोटो) उतारने का यंत्र भी रक्खा गया। ऐसे खटोले में टोकियो के "यामिउरी शिम्बन" संवाद-पत्र के दो कर्मचारी ज्वालामुखी के मृत्यु-मुख में उतरने चले। योरुप के स्ट्राम्बोली ज्वालामुखी में एक ए० कर्नन नाम का साहसिक वैज्ञानिक ८०० फीट नीचे मुख में पहले उतर चुका था। इस साहसिक कार्य को भी नीचा दिखाना था। नाक में गैस-अवरोधक मेखला लगाकर ये वीर उतरे। ५०० फीट नीचे जाने पर वातावरण स्वच्छ दिखाई पड़ा। गर्त्त की दीवाल दीख पड़ने लगी। उनमें गहरे फटानों से लावा फटी पड़ती थी। प्रति ५ मिनट पर रह-रहकर धड़ाका हो उठता। ७०० फीट गहराई पर एक शव मिला। उसे बाहर निकाल सकने का प्रयत्न असफल रहा। इसके बाद तो शवों का ठिकाना न रहा। १२४० फीट की गहराई में पहुँच कर खटोला ऊपर कर लेने का आदेश पहुँचा। उभाड़ के कारण झकझोरे लगकर खटोले के दीवाल से टकरा जाने की आशंका थी।

इन भयंकर झकझोरों से दीवाल से टकरा कर चूर-चूर हो जाने के खटके से ही इन वीरों को बाहर आना पड़ा, अन्यथा गर्मी असह्य नहीं थी। इस प्रकार इस मृत्यु-कूप का दर्शन किया जा सका। ६०० फ़ीट नीचे की गहराई का फोटो उतार सकना सम्भव नहीं हुआ। परन्तु पर्याप्त गहराई तक पहुँचा जा सका था। इस प्रकार एक वर्ष में २०० व्यक्तियों तक के आत्मघात कर अपनी अंतिम पवित्र गति में विश्वास करने वालों के इस विश्वस्त मृत्यु-कूप का नारकीय दृश्य जगत् के सम्मुख रक्खा जा सका।

काटमाई ज्वालामुखी

उत्तरी अमेरिका के अलास्का प्रायद्वीप से पश्चिम की ओर अल्यूशियन द्वीप-समूहों तक लम्बी पंक्ति रूप में जो ज्वालामुखी हैं वे उस बड़ी शृङ्खला के ही भाग हैं जो पैसिफिक महासागर के तट-वर्ती स्थानों में एक बड़े भारी वृत्त रूप में फैली है। इस शृङ्खला का उत्तरवर्ती भाग ही अलास्का तथा अल्यूशियन द्वीपों का ज्वाला-मुखी मण्डल है। ज्वालामुखियों की यह पतली पट्टी १६०० मील लम्बी है। अल्यूशियन द्वीपसमूह की पट्टी पूर्णतया ज्वालामुखीय है। अलास्का के स्थल-खंड में ६ या १० ज्वालामुखी जागृत या सुप्त रूप के होंगे। अल्यूशियन में इससे भी अधिक होंगे।

अलास्का में सन् १६१२ ई० में ६ जून को एक ऐसे ज्वाला-मुखी का बहुत ही प्रबल उभाड़ हुआ था जिसको आँखों देखने वाले केवल दो परिवार ही थे, जो निकट में रह गये थे। शेष व्यक्ति शिकार की खोज में दूर चले गये थे। अलास्का एक अधबसा प्रांत ही है जहाँ शीत-प्रधान भूमि में कुछ आदिवासी अमेरिकन ही जहाँ-तहाँ निवास करते हैं। जीवन-निर्वाह के साधन दुर्लभ होने के कारण ये अल्पसंख्यक आदिवासी किसी प्रकार थोड़ी-बहुत प्राकृतिक खाद्य-सामग्रियों, समुद्र की कुछ मछलियों आदि के सहारे अपना जीवन कठिनाई से ही चला पाते हैं।

ऐसे उजाड़ खंड में अलास्का की बीड़र बस्ती के भी आदमियों में केवल दो परिवारों के ही अपने डेरे में पड़े रह जाने और शेष के

बाहर शिकार करने निकल जाने पर काटमाई नाम के ज्वालामुखी ने अपना बड़ा ही भयंकर उभाड़ किया। अनुमान किया जाता है कि संसार के बड़े से बड़े नगर में यह उभाड़ हुआ होता तो उस नगर को १० या १५ फीट गहरी राख में समाधिस्थ होकर संसार से विलुप्त हो जाते पाया जाता। ऐसी स्थिति में न्यूयार्क नगर तक विलीन हो गया होता तथा उस से दूर स्थित फिलाडेल्फिया नगर भी एक फुट ज्वालामुखी राख से ढक गया होता। दो-तीन दिन तक वह घोर अंधेरे में भी ढका पड़ा रह जाता।

६ जून १६१२ के काटमाई ज्वालामुखी के उभाड़ के पूर्व कोई पूर्वसूचना रूप की हलचल नहीं हुई। एक ही भयंकर उभाड़ में काटमाई पर्वत का समूचा शिखर चूर-चूर होकर उड़ गया। इतना भारी और प्रबल विस्फोट कदाचित् कहीं अन्यत्र नहीं हुआ। इसके शिखर के उड़ जाने से कुल धूल, चूर्ण आदि इतनी अधिक मात्रा में आकाश में फेंक दी गई कि उसकी कुल राशि ५ घन मील अनुमानित की गई है। अतएव पर्वत-शिखर के स्थान पर इस उभाड़ ने एक साधारण खड्ड ही धरातल पर छोड़ा। निकट के रहने वाले दो परिवारों ने ही इस दृश्य को देखने का अवसर प्राप्त किया तथा कहीं भी घनी बस्ती न होने से भारी धन-जन हानि होने से बच गई। फिर भी हम काटमाई ज्वालामुखी के उभाड़ की प्रबलता इससे कम नहीं कह सकते।

काटमाई के उभाड़ का संवाद मिलते ही संयुक्तराष्ट्र अमेरिका के खोज विभाग ने अपने वैज्ञानिकों को इसकी छानबीन करने के लिए भेजा। उन लोगों ने सब दृश्यों को देखा तथा आँखों देखे वर्णन को सुना। उनकी खोज और पूछ-ताछ के अनुसार ज्ञात हुआ कि तटीय भाग में ७५० मील दूर तक धड़ाके की कर्कश ध्वनि सुनाई पड़ सकी थी। भीतरी खंड में अलास्का पर्वतश्रेणी के पीछे

तक भी यह ध्वनि लगभग ६०० मील तक सुनाई पड़ सकी। भाप तथा राख की घनी राशि आँधी द्वारा पूर्व दिशा में उड़ा दी गई। और कुछ घंटों में ही सारे अलास्का प्रायद्वीप में और दूर के द्वीपों तक फैल गई। राख और धूल से भूमि पट गई, उनकी १२ इंच मोटी तह दूर तक के स्थानों में जम गई। घोर अँधेरा चारों ओर छा गया। दिन के दोपहर को इतना घोर अँधेरा हो गया, मानो अर्द्धरात्रि का घोर अंधकार हो। ज्वालामुखी से १०० मील दूर के एक स्थान पर तीन दिन तक घोर अँधेरा छाये रहा। यदि कानपुर में ज्वालामुखी का उभाड़ होता तो इलाहाबाद तक पूर्व में तथा इटावा तक पश्चिम में तीन दिन तक रात-दिन घोर अंधेरा छाए रहता। धुआँ तो डेढ़ हजार मील दूर वैंकूवर द्वीप तक फैला दिखाई पड़ा। छिद्रमय ज्वालामुखीय ढोंके (प्यूमाइस) तो छोटे-छोटे द्वीपों समान समुद्र में इतने अधिक फैल गए कि जहाजों का चलाना कठिन हो गया। वायु के साथ ये प्यूमाइस के कृत्रिम द्वीप समुद्र में बह-बह दूर तक पहुँच जाते। भारत में कानपुर के निकट उभरे ज्वालामुखी का धुआँ मद्रास राज्य तक पहुँचने पर हमें कैसा अधिक आश्चर्य होता। यह प्रकृति के एक विकट प्रकोप का परिणाम था किन्तु १९१४ में एक बार फिर साधारण उभाड़ होने के पश्चात् यह काटमाई ज्वालामुखी अब सुप्त ही बना पड़ा है।

काटमाई ने अपना सिर देकर जिस भयंकर उभाड़ का जन्म दिया, अब वहाँ दर्शक जाकर शिखर के स्थान एक विमल जलाशय को ही देख सकता है जो शिखर के उड़ जाने पर बने खड्ड में पानी भर जाने से बना है। यह नील जल-शोभित सरोवर एक मील से अधिक लम्बा तथा लगभग एक मील चौड़ा होगा। इस मनोहर दृश्य की भव्यता बढ़ाने वाला तुषार-नद भी देखा जा सकता है जो ज्वालामुखी के उभाड़ से बीच में कट कर दो खण्ड में तो हो गया

किन्तु ज्वालामुखी के उभाड़ की गर्मी उस तुषार-राशि के खण्डों पर कुछ भी प्रभाव नहीं डाल सकी और उसके खण्ड अबाध रूप में सुरक्षित देखे जाते हैं। इस दृश्य को दर्शक भींटे के अवशिष्ट खण्ड पर चढ़ कर देख सकता है।

काटमाई के उभाड़ के कुछ दिनों पश्चात् ही जून १६१२ ई० में काटमाई से कुछ मील ही दूर एक दूसरा प्रबल उभाड़ हुआ। काटमाई की निचली घाटी के तल में छोटे-छोटे ज्वालामुखियों ने सिर उभाड़ना प्रारंभ किया था। उनमें ही एक में भारी उभाड़ हुआ जिसे आँखों देखने वाला एक ही व्यक्ति था जो वहाँ के आदि-वासियों का सरदार था। संयोगवश इस उभाड़ के कुछ क्षण पूर्व ही वह वहाँ से सुरक्षित स्थान तक आ पहुँचा था। पर्यवेक्षकों का विश्वास है कि इन छोटे-छोटे ज्वालामुखियों का उभाड़ प्रथम उभाड़ के ही स्रोत से उत्पन्न नहीं हुआ था बल्कि घाटी की तली ही फट कर छेद बना नए-नए ज्वालामुखी बना रही थी जिसे नया ज्वालामुखी ही नाम दिया जाना चाहिए। घाटी में तथा उसकी शाखा घाटियों में प्यूमाइस तथा अन्य ज्वालामुखीय धूल, चूरे आदि पटे पड़े थे जिनकी गहराई असीम थी। इनके ऊपर काट-माई के उभाड़ वाली भस्म जम गई थी। इससे ज्ञात होता है कि घाटी में पहले भी ज्वालामुखी का प्रसार था। उसके तल पर फेंके पदार्थों के पश्चात् काटमाई के उभाड़ होने से नई तह जम पाई। इन्हीं क्षेत्रों में घाटी के सहस्रों धूम निकलने वाले छिद्रों का फैलाव होने से इसका नाम ही दस सहस्र धूमों की घाटी पड़ गया है।

अमेरिका में पीत-पाषाण उद्यान जिस प्रकार एक सरकार द्वारा सुरक्षित भूमि बन गई है। उसी प्रकार दस हजार धुएँ वाली यह घाटी काटमाई तथा अन्य निकटस्थ ज्वालामुखियों को मिलाकर एक विस्तृत सुरक्षित भूमि घोषित कर दी गई है। लगभग ११ लाख

एकड़ भूमि इस सुरक्षित क्षेत्र में होगी। लोगों का अनुमान है कि ज्वालामुखियों की उभाड़ करने की शक्ति क्षीण होने लगती है तो उस की जरावस्था का पूर्व रूप धूम्र-कूपों रूप में होता है। दस-सहस्र धूम्र-कूप क्षेत्र ऐसा ही है। विश्वास किया जाता है कि ऐसा क्षेत्र ज्वालामुखीय उभाड़ के क्षेत्र के भीतरी उत्ताप या अन्य शक्ति के और भी अधिक दुर्बल होने पर गीसरों अर्थात् पानी तथा भाप ऊपर फेंकने का दृश्य उपस्थित करता है। अतएव यह कहा जाता है कि पीत-पाषाण-उद्यान (येलोस्टोन पार्क) की सुरक्षित भूमि पहले इस धूम्र-कूप क्षेत्रों की भाँति ही रही होगी तथा यह दससहस्र धूम्र-कूपों का क्षेत्र भी किसी दिन केवल गीसरों का क्षेत्र रह जायगा और ज्वालामुखी क्षेत्र भी अंतिम जरावस्था में पहुँच जायगा। कदाचित् ऐसा रूप आ उपस्थित होने में कई शताब्दियाँ लग जायँगी।

दससहस्र धूम्र-कूप घाटी का पता सन् १९१६ ई० में संयुक्त राष्ट्र की राष्ट्रीय भौगोलिक समिति को खोज करते समय लगा था। यह घाटी लगभग १७ मील लंबी है जिसमें धूम्रकूप धूप वर्षा सतत ही करते रहते हैं। कुछ में से तो भाप की धारा १००० फीट ऊँचाई तक आकाश में उठती है, कुछ ५०० फीट तक ही भाप फेंक कर रह जाते हैं। किन्तु इन सबसे ऊपर फेंके गए भाप की राशि मिलित हो होकर एक विकराल घने बादल का रूप धारण कर लेती है।

———

मध्य अमेरिका के ज्वालामुखी

मध्य अमेरिका के ग्वाटेमाला राज्य में ज्वालामुखियों का बाहुल्य है। एक ओर इन बहुसंख्यक ज्वालामुखियों से देश का दृश्य तो बड़ा भव्य बना दिखाई पड़ता है, परन्तु दूसरी ओर उनका समय-कुसमय उभाड़ जनता के महान् कष्ट का कारण बनता है। इन सौन्दर्य-स्थलों के निकट रहना बड़ा महँगा पड़ता है। जान के लाले पड़ जाते हैं। किन्तु इन ज्वालामुखियों का उभाड़ समाप्त हो जाने पर जिन स्थलों में ज्वालामुखीय भस्म धरातल पर जम जाती है वह स्थल बड़ा ही उर्वर बन जाता है। वह मनुष्य के पोषण का सुन्दर आधार बन जाता है। उनमें हरे-भरे खेत, कहवा आदि के बागान खड़े दिखाई पड़ते हैं। प्रकृति की कोपाग्नि के कूप के भीटों के ढाल पर ही इन हरे-भरे खेतों को खड़ा देखना बड़ा ही विरोधा-भास ज्ञात हो सकता है किन्तु प्रकृति इसी प्रकार के खेल करती है। संहार और निर्माण की रचना-क्रियाएँ साथ-साथ, पास-पास ही प्रभाव दिखाती पाई जाती हैं। इस प्रकार के विरोधाभास के देश, ग्वाटेमाला के ज्वालामुखी लावा उद्गार वाले कोटि के नहीं हैं। वे विस्फोट के साथ चूर्ण, रेत और भाप आदि बाहर निर्गत् करते हैं। इसलिए इनके शंकु ऊँचे गहरे ढाल के ही दिखाई पड़ सकते हैं जिनको चूर्णीय शंकु (सिंडर कोन) नाम दिया जाता है। ऊपरी शिखर से आधे समकोण का ढाल बनाकर इनके भीटों को नीचे चौड़ा होकर शंकु बनाते देखा जाता है।

ग्वाटेमाला का सैंटा मेरिया नामक ज्वालामुखी अपनी भव्यता के लिए जितना प्रसिद्ध है उतना ही अपनी संहार-शक्ति के लिए भी विख्यात है। चारों ओर कहवा के बागान का दृश्य जहाँ है, वहाँ मध्य में १२ हजार से भी कुछ अधिक ऊँचाई तक सैंटा-मेरिया के शिखर को उठा पाया जाता है। इसका सबसे भयंकर उभाड़ २४ अक्तूबर सन् १९०२ ई० को हुआ था जिसमें कदाचित् ६ हजार मनुष्यों का प्राणान्त हुआ। ज्वालामुखी के मुख से निकले धूम के बादल १८ मील ऊपर तक उभड़े दिखाई पड़े। इसके उभाड़ की तुमुल ध्वनि तो ५०० मील दूर कोस्टा रिका तक सुनाई पड़ी। इस पर्वत का पार्श्व पूर्णतया खण्डित होकर उड़ गया जिससे ७००० फीट ऊँची एक खड़ी दीवाल-सी चोटी बच रही। उसके नीचे इसका मुखकुंड तीन चौथाई मील चौड़ा तथा इससे कुछ अधिक लंबा और १५०० फीट गहरा दिखाई पड़ सका। इसके मुख से निकला चूर्ण, १२५००० वर्ग मील से भी अधिक क्षेत्र में फैल गया। इसमें ढाई हजार वर्गमील के क्षेत्र में तो चूर्ण और छिद्रमय ढोंके (प्यूमाइस) ८ इंच से भी अधिक मोटी तह फैला सके। इतने अधिक विस्तृत क्षेत्र में इतनी गहरी दानवी लीला संहार करने की भयंकर शक्ति रख सकती थी। खेत, बाग-बगीचों, फसलों आदि का तो कुछ कहना ही नहीं, मकान तक भी इतने क्षेत्र में चूर्ण और ढोंकों की वर्षा के भारी बोझ से जर्जरित और ध्वस्त होकर पूर्ण खंडहर बन गए जिनकी कोई ठीक कल्पना भी कर सकना कठिन ही है। इस तरह की ध्वंस-लीला में सर्वस्व स्वाहा ही होकर रहा करता है। वही दशा सैंटोमेरिया ने उपस्थित की। इतनी भयंकर नाशलीला के पश्चात् कहवा के बागान के स्वामियों ने जहाँ अपनी भाग्य-श्री को सर्वथा अस्त होते ही समझ लिया था, वहाँ उन्होंने फिर उद्योग कर चूर्ण, राख आदि की तह खोदकर जब

पहले धरातल पर ही दूसरे पौधे उगाने प्रारंभ किए तो ऐसा जान पड़ा मानो धरती कुछ समय के लिए सो गई थी। और निद्रा से उठने के पश्चात् पूर्ण शक्ति संग्रह किए जागृत पुरुष की भाँति अपनी उर्वरता का अद्भुत रूप दिखाकर मानव-पोषण के पूर्ववत् कार्य में फिर संलग्न हो गई।

सैंटोमेरिया के १९०२ के उभाड़ के पश्चात् सन् १९२९ ई० में भी भयंकर उभाड़ का दृश्य देखा गया था।

ज्वालामुखियों का एक त्रिगुट्ट आज शान्त रूप में अपना दृश्य ग्वाटेमाला में दिखाता है। इन में से एक ज्वालामुखी अग्निमुखी (वोल्कन डेल फ्यूगो) तथा एक दावामुखी (वोल्कन डी एगुआ) नाम से प्रसिद्ध है। जिन दिनों स्पेन वासियों ने अपनी साहसिक यात्रा कर अमेरिका में अपने पैर जमाने प्रारंभ किए थे उन दिनों उनका आगमन मध्य अमेरिका के इस राज्य में भी हुआ। अग्निमुखी ज्वालामुखी को वहाँ के मूल निवासी बड़े भय की दृष्टि से देखते थे जिससे यह अनुमान होता है कि सोलहवीं शताब्दी के कुछ पूर्व, स्पेनवालों के वहाँ आगमन के पूर्व से ही ज्वालामुखी का भयंकर उभाड़ हो रहा होगा। स्पेनवालों के पहुँचने पर भी उसका पूर्ण रूप से उभाड़ जारी ही था। किन्तु सोलहवीं तथा सत्रहवीं शताब्दी में उभाड़ की शक्ति दिन पर दिन मन्द ही पड़ती गई किन्तु बाद की शताब्दियों में उभाड़ की प्रबलता अधिक हुई और यह शीघ्र-शीघ्र अपना रोष प्रकट करने लगा। सन् १९३२ ई० में इस अग्निमुखी या फ्यूगो ज्वालामुखी ने इतना प्रबल विस्फोट किया कि उसका शिखर पूर्णतया उड़ गया तथा उसके चूरे, राख आदि ५० मील के अर्द्ध व्यास में छितरा गए।

एगुआ या दावामुखी ज्वालामुखी अब तो पूर्ण रूप से विलुप्त ही रूप धारण किए हुए है जिसके मुख में वर्षा-जल भर कर एक

जलाशय को आश्रय दिए है किन्तु किसी समय यह भी आग का पुतला रहा होगा। जिस समय स्पेन वासी अपनी विजय-वाहिनी लेकर ग्वाटेमाला की भूमि पर उतरे उस समय इस ज्वालामुखी की आग शान्त होकर जलाशय को अपने वक्ष पर स्थान दे चुकी थी किन्तु सन् १५४६ ई० में भूकंप के प्रकोप से इसका एक ओर का भींटा ध्वस्त हो गया। फिर क्या था, भारी जलराशि उस कुंड से नीचे भारी ढाल से उतर पड़ी। मार्ग के भारी से भारी अवरोध का भी इस भयानक जल-प्रवाह के सम्मुख रुकना सर्वथा असंभव ही कार्य था। मिट्टी पत्थर, पेड़ आदि सब कुछ पदार्थ इस के जल के प्रवाह के साथ बह कर नदी के पेटे की भाँति निराश्रित बन गए। इस यम-धारा की दिशा में उस समय की औपनिवेशिक राजधानी स्थित थी। उस राजनगर को इस भयानक नद ने ध्वस्त कर दिया। उससे हट कर स्पेन वालों की कार्य-कुशलता से शीघ्र ही एक दूसरा नगर बन कर राजधानी बना। किन्तु १७१७ ई० में अब अग्निमुखी या फ़्यूगो के क्षोभ की बारी आती दिखाई पड़ी। उसके उभाड़ के साथ भूकंप भी उठा। राजधानी विनष्ट हो गई। आज इन दोनों विनष्ट राजधानियों से बिल्कुल हट कर ३० मील की दूरी पर आज की राजधानी ग्वाटेमाला नगरी विद्यमान है।

मध्य अमेरिका का एल सेलवेडर नाम का प्रजातंत्र राज्य अमेरिका के सब देशों से अधिक भयंकर ज्वालामुखियों की भूमि है। ज्ञात होता है कि धरती ने भी वहाँ कोई अंकुश न देखकर अपनी कोख के उत्ताप को धरातल पर उगल-उगल कर मानवों को त्रस्त करते रहने का आयोजन कर रक्खा है। ऐसी भूमि को हम पैसिफिक महासागर के तट पर स्थित देखते हैं जिससे हमें ज्ञात होता है कि यह भारी भूकंपों की भारी शृङ्खला की ही एक लड़ी अपने ज्वाला-मुखियों के रूप में दिखाती है। पैसिफिक महासागर को चारों ओर

से घेरने वाली विश्वव्याप्त ज्वालामुखीय पंक्तियों का ही प्रसार हम इस प्रजातन्त्र राज्य में देख पाते हैं जो अपने छोटे आकार के लिए भी प्रसिद्ध कहा जा सकता है। इतने छोटे देश में चार महान ज्वालामुखी विद्यमान पाए जाते हैं। ये ज्वालामुखी या तो आधुनिक युग के ही उत्पन्न हैं या बहुत दिनों से जागृत ही रहते आये हैं। परन्तु इनके अतिरिक्त विलुप्त ज्वालामुखी भी कितने ही पाये जाते हैं।

इजालको—यह ज्वालामुखी समुद्र-तट के निकट ही स्थित है अतएव समुद्री माँझी इसके उभाड़ के दृश्य को बड़ी दूर से भी देख सकते हैं। इसका उभाड़ सदा ही होता रहता है। एक वैज्ञानिक ने इसके विषय में लिखा है कि इसके मुख से निकले लावा की धारा इसको नीचे से ऊपर तक पूर्णतया आच्छादित रखती है। अतएव रात्रिकाल में तो इसका पूर्ण शङ्कु सर्वांग प्रज्ज्वलित, अग्निमय ही दिखाई पड़ता है। इस दहकती आग में चमकते शङ्कु का विशाल रूप दिखाई पड़ता है। इसी कारण लोग यह कहते दिखाई पड़ते हैं कि यह पर्वत अग्नि में ही स्नान करता या डुबकियाँ मारता है।

पहले यह स्थल पशुओं का एक चरागाह ही था किन्तु सन् १७७० ई० में बिना किसी पूर्व सूचना के ही इसका भयंकर उभाड़ हुआ। भूमि काँप उठी, धरती का तल फटकर ज्वालामुखीय ग्रीवा बन गया। उसमें से भाप तथा भारी लावा-राशि उभड़ पड़ने लगी, साथ ही ठोस पदार्थ भी बाहर फेंके जाते। इन वस्तुओं के जमाव से भारी शङ्कु बन खड़ा हुआ। तब से यह ज्वालामुखी सदा जागृत ही रहता आया है। इसका शङ्कु आज ६००० फीट ऊँचा होगा, किन्तु उसका सतत बढ़ना जारी ही है। प्रति मिनट श्वेत उत्तप्त पाषाणों की राशि मुख से उभड़ कर आकाश की ओर उभड़ पड़ती और फिर भींटों की ओर नीचे गिर पड़ती है। इसके बाद कुछ पल के लिए शान्ति छा जाती है। उसके पश्चात् फिर पूर्ववत उभाड़ हो

उठता है। यही क्रिया पुनर्वार नियमित रूप से होती देखी जाती है मानो कोई यन्त्र धरती की कोख में लगा रह कर इस खिलवाड़ को सतत करता जा रहा हो।

इस ज्वालामुखो में एक बड़ी विचित्र ही बात देखी गई थी। इसमें कोई मुख-कुंड दिखाई नहीं पड़ता था। इस अद्भुत घटना से वैज्ञानिक बहुत ही चकित थे किन्तु किसी दूसरे ऊँचे शिखर से इसके उभाड़ का अवलोकन किया गया तब इसका रहस्य खुल सका। बात यह है कि जब उभाड़ होता है तो नीचे की उत्तप्त गैस इसके शिखर के ऊपरी तल में ग्रीवा बनाकर मुख का छिद्र बना देती है और दहकते पाषाण-खण्ड ऊपर वायु में फेंक दिये जाते हैं, किन्तु ऊपर की दहकती वस्तुएँ जब फिर नीचे गिर पड़ती हैं तो भौंटों के तट पर उन्हें पाया जाता है। किन्तु इसकी गर्मी से ये सब वस्तुएँ लावा के साथ गलकर सारे छिद्रों को बन्द कर सपाट तल बना देती हैं। फिर दुबारा नीचे की गैसें अपने जमाव और भारी गर्मी से लावा में नीचे से धक्का देकर छेद कर देती हैं तो फिर दहकते पथरीले श्वेत ढोंकों, लावा तथा भाप आदि का ऊपर की ओर उभाड़ हो पाता है। यह घटना इस प्रकार दुहराई जाकर इसका मुख उभाड़ के ठीक समय ही प्रकट कर पाती है। वायुयान से क्षण-क्षण पर लिए हुये चित्रों से इस ज्वालामुखी के उभाड़ के रूप को भली भाँति समझा गया है।

इजाल्को ज्वालामुखी संसार का अत्यधिक जागृत ज्वालामुखी है। इसके मुख से मध्य अमेरिका के अन्य सभी ज्वालामुखियों से अधिक वस्तु बाहर फेंकी जा सकी है।

संसार के उन ज्वालामुखियों में से अधिकांश जो ऐतिहासिक काल में उत्पन्न हुये थोड़े समय तक ही जागृत रह सके। किन्तु मध्य अमेरिका के पश्चिमी तट पर सन् १७६३ ई० में जन्म धारण करने

वाला यह इजाल्को नामक ज्वालामुखी प्राय: निरंतर रूप से जागृत ही रहता आया है। यह सैन सेलवेडर नगर के उत्तर में स्थित है। इसमें प्रारंभिक उभाड़ तो १७६६ ई० में ही प्रारंभ हो गया था, परन्तु आधुनिक मुख का जन्म १७६३ ई० में ही हुआ। इसमें चूर्ण और ढोंकों के प्रारंभ से उभाड़ होने के पश्चात् लावा का उभाड़ प्रारंभ हुआ था जो पाँच मास तक जारी रहा।

सैन सैलवेडर—मध्य अमेरिका के इस नाम के ही नगर के निकट स्थित ज्वालामुखी का नाम भी सैन सैलवेडर ही पड़ा है। यह ३०० वर्षों तक सुप्त रूप में ही पड़ा रहा और लोग इसे विलुप्त समझने लगे थे किन्तु १६१७ ई० में इसका उभाड़ देखा गया। इस का मुखकुंड एक जलाशय को आश्रय दिए था। कुंड की चौड़ाई आधे मील से अधिक तथा गहराई लगभग २४०० फीट थी। इस गहरे खण्ड में नीले जल का भंडार विद्यमान था। इस गंभीर जल को शान्त रूप में पड़ा देखा जाता। ७ जून १६१७ को प्रात: तड़के ही बार-बार भूकम्प उठने लगे जिनसे सैन सैलवेडर नगर ध्वस्त हो गया। एक वैज्ञानिक ने इसका निम्न रूप में वर्णन प्रकाशित कराया था :—

प्रात: ६॥ बजे एक भूमि में भीषण हलचल हुई जिससे धरातल पर खड़े सभी व्यक्ति लड़खड़ा गए। इसके कुछ देर बाद ही ज्वालामुखी आग की लपटों से आच्छादित हो गया। इसका इतना प्रकोप बढ़ा कि सम्पूर्ण आकाश ही अग्निमय दिखाई पड़ने लग गया। इसके पश्चात् भयानक वज्र-घोष तथा निरंतर गर्जन प्रारंभ हुआ। तत्पश्चात् पहले से ही भयग्रस्त नगरवासियों पर उत्तप्त रेत की दहकती वर्षा होने लगी। पुराने मुखकुंड के निकट ज्वालामुखी की ढाल पर बहुत अधिक ऊँचाई पर बाहरी भींटे में उभाड़ हुआ था किन्तु यह नया मुख शीघ्र ही अवरुद्ध हो गया, और बाद में

पुराने मुखकुंड में ही उभाड़ प्रारंभ हो गया, जिसमें जलाशय ने स्थान ग्रहण कर लिया था। पहले तो जलाशय ही प्रज्ज्वलित हो उठा। श्वेत उत्तप्त लावा उभड़ने से यह दृश्य उपस्थित होता, जो जलाशय के पेंटे से ऊपर उठता किन्तु ऊपरी तल तक नहीं पहुँच पाता क्योंकि पानी की गहराई विशेष थी, किन्तु धीरे-धीरे सारा पानी भाप बनकर सूख ही गया और लावा को खुलकर अपना खेल दिखा सकने का अवसर प्राप्त हुआ। पहले तो कुछ पानी सूखा फिर बीच में लावा ऊपर उठकर फिर नीचे गिर जाता जिससे धीरे-धीरे सारा जलाशय सूख गया। अतएव अब लावा के उभाड़ का नग्न दृश्य देखना संभव हो गया। अब झील के भींटे पर निरापद रूप से खड़े होकर कुंड के पेंदे का दृश्य देखा जा सकता। बड़ा ही विचित्र दृश्य वहाँ देखने को मिला। पहले तो पेंटे में एक दरार फटी जो कदाचित् पहले एक गज लंबी और कुछ इंच चौड़ी होगी। उसमें से छोटी-छोटी लपटें निकलतीं किन्तु फिर एक बहुत ही भारी धड़ाका हुआ, ज्वालामुखी का सर्वांग कंपायमान हो उठा, एक भाप की भारी राशि वायु में उठी जिससे एक बड़ा भारी बादल बन गया। इस भाप में आप किसी भी आकार के लावा के खंड देख सकते। बड़े टुकड़े कुछ थोड़ी ऊँचाई से ही नीचे गिर पड़ते किन्तु उससे छोटे टुकड़े कुछ ऊपर तक जाकर गिरते। इन गिरे हुए ढोंकों के फिर चूरे हो जाते और वे भाप के झोंके के साथ फिर ऊपर फेंक दिए जाते। ढोंके और टुकड़ों के गिरने, फिर चूरे होकर बड़ी ही दूर तक आकाश में उठने का दृश्य उपस्थित हो गया।

समुद्र में तो ऐसे ज्वालामुखियों के होने की बात देखी सुनी जाती है, जिनके उभाड़ से द्वीपों तक का जन्म होता पाया जाता है। परन्तु एक जलाशय में वही क्रिया दुहराई जाना एक भारी आश्चर्य ही है। सन् १८७६ ई० में एक ऐसी ही घटना हुई थी। सैल-

वेडर के मध्य भाग में हलोपैंगों झील में भारी भूकंप का उद्गार हुआ जिसके पश्चात् ही जल बिल्कुल ही न्यून हो गया। दो मास में पानी का तल लगभग ३५ फीट नीचे उतर गया। भूकंप के समय झील में बड़ा ही विक्षोभ उत्पन्न हुआ और उसके मध्य भाग से भाप की बहुत ही भारी राशि उभड़ पड़ी। एक रात को विक्षोभ की मात्रा बहुत ही अधिक हो गई तथा दूसरे दिन झील के बीच में एक द्वीप खड़ा दिखाई पड़ा, जिसके मध्य भाग से भाप उभड़ रही थी। एक मास तक उभाड़ जारी रहा। द्वीप बढ़ता ही गया। भाप की धारा १००० फीट तक ऊँची उठ जाती। गंधकीय गैसों का फैलाव होने से उस झील की सम्पूर्ण मछलियाँ मृत हो गईं। उभाड़ के बाद द्वीप को ५ एकड़ भूमि में विस्तृत तथा १५० फीट ऊँची चट्टान दिखाता पाया गया। यह शिखर ७०० फीट गहरे पानी में खड़ा था। चारों ओर ज्वालामुखी होने से यह विश्वास किया जाता है कि झील ज्वालामुखीय कुंड रही होगी।

कोसेगुइना—मध्य अमेरिका के पश्चिमी निकारागुआ राज्य में कोसेगुइना नाम का ज्वालामुखी है। संसार के अत्यन्त विकट विस्फोट करने वाले इनेगिने दो चार ज्वालामुखियों में ही इसकी भी गिनती है। इस समय तो यह ज्वालामुखी सुप्त रूप का ही है. परन्तु सन् १८३५ ई० में इसमें बड़ा ही भीषण धड़ाका हुआ था। उस धड़ाके में इसका पूर्ण शिखर ही चूर-चूर होकर उड़ गया और उनकी वर्षा दूर-दूर के जल तथा स्थल खण्ड में हुई। २० जनवरी १८३५ ई० को उभाड़ का श्रीगणेश हुआ। चारों ओर ३०० मील तक धड़ाके के शब्द से दिशाएँ प्रतिध्वनित हो उठीं। साथ ही रेत तथा धूल के बादल भी उभड़ पड़े। दो दिन तक यह प्रारम्भिक रौद्र रूप रहा परन्तु तीसरे दिन खंड-प्रलय का दृश्य ही उपस्थित हो गया। घोर अंधेरा छा गया तथा विस्फोट की विकरालता चरम

सीमा को पहुँच गई। अनवरत बालुका-राशि की वर्षा होने लगी। छतों के ऊपर इसका भारी संचय होते जाने से छत भस कर गिर जाने के भय से लोग अपने घरों को छोड़-छोड़कर मैदान में भाग खड़े हुए। बालू तथा चूर्णों की यह वर्षा ड़ेढ़ हजार मील अर्द्ध-व्यास की गोलाई में फैली हुई थी। अंत में २२ जनवरी को भीषणतम विस्फोट की भयंकर गरज सुनाई पड़ी। इसकी प्रचंडता तो इतनी अधिक थी कि ८०० मील दूर के एक स्थान पर एक अधिकारी ने शत्रु की तोपों का प्रहार समझ कर अपने सैनिकों को मोर्चाबन्दी करने तथा प्रत्युत्तर के लिए बंदूकें सम्भाल खड़े हो जाने का आदेश दे दिया। एक अन्य स्थान पर ११०० मील की दूरी पर भी ऐसी कर्कश ध्वनि सुनाई पड़ सकी। ज्वालामुखी के भीषण प्रकोप ने सारी प्रकृति को क्षुब्ध कर कंपित कर दिया था। पक्षी सर्वथा विलीन हो गए, हिंसक पशु दुबक कर, भयातुर हो निरीह पशुओं की भाँति मनुष्य के आवासों में शरण लेने घुस पड़े। ३०० मील की दूरी में चारों ओर की जनता अवाक सी रह गई। लोगों ने यही समझा कि प्रलय का दिन ही आ पहुँचा है। दो चार पगों की दूरी पर ही प्रबलतम प्रकाश भी अदृश्य दिखाई पड़ता तथा मध्य-मध्य में कभी बिजली कौंध उठती जिससे भयानकता और भी बढ़ जाती। डेढ़ दिन तक इसी प्रकार का यमपुरी सा दृश्य दिखाई पड़ता रहा। अन्त में धीरे-धीरे यह प्रकोप शान्त हो चला।

जिस समय विस्फोट जारी था, किसी को भी इसका कुछ मर्म नहीं जान पड़ता था। घोर अंधकार में कहीं कुछ भी दिखाई ही नहीं पड़ता था किन्तु धीरे-धीरे यह दिखाई पड़ सका कि १२ मील की परिधि में एक ज्वालामुखीय कुंड या मुख निर्मित हो गया है। उसमें से भारी लावा-राशि उभड़-उभड़ कर समुद्र में गिरती जा रही है।

पर्वत का शिखर ध्वस्त होकर उड़ गया है जिसकी वायु में फेंकी मात्रा असीम है। पहाड़ के पार्श्व ढोंकों, चूरों आदि से पूर्णतया ढँक गए थे। ज्वालामुखी के चारों ओर मीलों तक इनकी बड़ी मोटी तह बिछी पड़ी थी। समुद्र में छिद्रमय ढोंकों ने अपना गहरा जाल सा बिछा दिया था जिनको जहाज अपने मार्ग में बड़ा बाधक देखते। कहीं भी उन्हें इनके अतिरिक्त पानी खुले रूप में न दिखाई पड़ सकता। कितनी ही दूर तक समुद्र-यात्री ऐसी स्थिति पाते। इस प्रकार की भीषण उभाड़ वाले ज्वालामुखी को देखकर बेचारे मूल निवासी क्यों नहीं त्रस्त होते ! पूजा-पाठ कर तथा बलि चढ़ा कर अपने इस रुद्र देव की तुष्टि करने का वे अवश्य प्रयत्न करते किन्तु इन मानव-उत्कोचों का प्रकृति की दुर्धर्ष शक्तियों पर क्या प्रभाव पड़ सकता है ! वे तो अपने कोपानल की न्यूनता या वृद्धि पाकर ही अपना रौद्र रूप घटाती या बढ़ाती हैं।

मोमोटोम्बो—मेक्सिको से लेकर पनामा तक मध्य अमेरिका के पश्चिमी पार्श्व में ज्वालामुखियों की एक विस्तृत पंक्ति है। पश्चिमी निकारागुआ प्रान्त में इस उपर्युक्त ज्वालामुखी, कोसेगुइना को छोड़कर बीसियों ही ज्वालामुखी हैं जिनमें कुछ आज भी जागृत रूप के पाए जा सकते हैं। मोनागुआ नगर के निकट खुदाई होने पर ज्वालामुखीय उभाड़ की तह हटाने पर मनुष्य के पग-चिह्न स्पष्ट रूप से दिखाई पड़े जिससे यह विदित हो रहा था कि किसी समय भारी उभाड़ होने पर लोगों ने भाग कर अपने प्राण बचाने का उद्योग किया होगा। यह विस्फोट आज से कुछ सहस्र वर्षों पूर्व हुआ होगा। मोमोटोम्बो ज्वालामुखी ही वह ज्वालामुखी है जिससे उभड़ी कीचड़ की जमी तह में मनुष्य तथा पशुओं के पग-चिह्न दिखाई पड़ सकते हैं। यह उस पश्चिमी तटीय ज्वालामुखी पंक्ति में ही स्थित है। इसकी ऊँचाई लगभग ४००० फीट होगी। अब तो इस

ज्वालामुखी का उभाड़ बहुत ही शान्त हो चला है और भाप का उद्‌गार शान्त रूप से होता ही दिखाई पड़ता है। किन्तु किसी समय इसका इतना रौद्र रूप था कि लोगों का कथन है कि इसका दर्शन करने जाने वाला व्यक्ति फिर कभी नीचे वापस आता नहीं दिखाई पड़ता था। आज इसके शिखर पर आए दिन ही यात्री निरापद रूप में चढ़ते देखे जाते हैं।

इराज़ू—मध्य अमेरिका के इस ज्वालामुखी को अग्नि-ज्वालामुखी न कह कर पंक ज्वालामुखी कहना अधिक संगत है। इसके भीटों पर फेंकी गई कीचड़ को सूख कर झुर्रियों-युक्त तल बनाते देखा जाता है। इसमें कई मुखकुंड हैं जिनसे लावा के स्थान पर कीचड़ ही निकलता है। एक मुखकुंड जलाशय का रूप धारण किए है जो बहुत ही अधिक ऊँचाई पर है परन्तु उससे निचाई पर के ही एक मुखकुंड से भाप का निष्कासन होता है।

इराज़ू का एक भयंकर विस्फोट सन् १७२३ ई० में हुआ था। इसके बाद जब १६१० ई० में कोस्टा रिका राज्य में भूकंप की शक्तियाँ क्रुद्ध हुईं तो कुछ ज्वालामुखियों का प्रकोप बढ़ा। एक ज्वालामुखी का भीषण उभाड़ हुआ, भूकंप भी उठा। उसी समय इराज़ू में भी एक नया मुखकुंड उत्पन्न हो आया। तत्पश्चात् १६१७ ई० में इराज़ू में एक उभाड़ हुआ जिसमें भारी-भारी ढोंकों तथा चूर्ण की वर्षा हुई। फव्वारे की भाँति ही एक कीचड़ की धारा वायु में ऊपर तक फेंकी गई दिखाई पड़ी। उसके फिर नीचे गिरने पर विस्तृत क्षेत्र में उसका फैलाव हो गया। १६१६ ई० में भी एक उभाड़ हुआ। कीचड़ के काले-काले स्तंभ रह-रहकर इस ज्वालामुखी की ग्रीवा से बाहर निकलने लगे जिनके चारों ओर घोर धूम-राशि आच्छादित रहती। पत्थरों की भी भरपूर वर्षा हुई। उस घटना के बाद से तो थोड़े-थोड़े समयों पश्चात् कीचड़ के स्तंभों तथा ढोंकों की वर्षा हो

ही जाया करती है। यह विचित्र ज्वालामुखी ११००० फीट से कुछ अधिक ऊँचा है। कोस्टा रिका का एक दूसरा ज्वालामुखी, पोआज साढ़े नौ हजार फीट ऊँचा होगा जिसके मुखकुंड में एक जलाशय है जिस में भाप उठता रहता जल-तल सदा बुदबुदाता रहता है।

ये सब ज्वालामुखी ऐसे भूभाग में ही हैं जिसकी थोड़ी चौड़ी पट्टी के पूर्वी और पश्चिमी दोनों तट संसार के दो विशाल महासागरों के जल द्वारा प्रक्षालित होते रहते हैं।

भूमध्य सागर के ज्वालामुखी

स्ट्राम्बोली—योरुप में भूमध्यसागर में स्ट्राम्बोली नाम का ज्वालामुखी सतत जागृत रहकर धरती की कोख में ज्वाला का प्रमाण देता है। जिस प्रकार गीसर में कुछ निश्चित अवधि के पश्चात् गर्मी की मात्रा भाप रूप में संचित होकर पानी को ऊपर उछाल फेंकती है, उसी प्रकार इस ज्वालामुखी में कुछ निश्चित अवधि के पश्चात् लावा का उछाल होना देखा जाता है। यह इटली के निकट लिपरी द्वीप पर समुद्र तल से सीधे खड़े रूप में विद्यमान है। इतिहास का उल्लेख हमें अधिक से अधिक जितने प्राचीन काल तक लिखित मिलता है उतने समय इस ज्वालामुखी के उभाड़ होते रहते आने का उल्लेख मिलता है। अतएव जागृत ज्वाला-मुखियों में इसे पुराने से पुराना कहा जा सकता है। ईसा के पूर्व भी इसके उभाड़ का उल्लेख कितने ही लेखकों ने किया है। किन्तु उससे भी अधिक प्राचीन काल से भी इसका उभाड़ होता आ रहा है। लिखित इतिहास की अवधि में कभी भी इसके शान्त हो जाने की बात नहीं सुनी जाती। अनुमान किया जाता है कि केवल यही ज्वालामुखी अति पुरातन काल से सदा जागृत रहने वाला होगा। लेकिन यह हो सकता है कि उसकी प्रबलता कभी कम और कभी अधिक रहती आई हो।

इस ज्वालामुखी को भूमध्यसागर का प्रकाश-स्तंभ माना जाता रहा है। इसके उभाड़ को समद्र में १०० मील दूर तक देखा जा

सकता है, इसलिए जहाज से इसको देखकर जहाज के माँझी मार्ग-प्रदर्शन में सहायता पाया करते थे। इसकी कुछ निश्चित अवधि से उठती लपटें इसके पहचानने में भ्रम नहीं होने दे सकती थीं।

इसके शिखर से नीचे दो तृतीयांश भाग पर ही इसका मुख्य मुखकुंड है। दूसरे अन्य क्षुद्र मुखकुंड भी पार्श्व में पाए जाते हैं, इस स्थिति के कारण शिखर के ऊपर चढ़ कर नीचे भाग में स्थित मुखकुंड का भली भाँति निरीक्षण करना संभव होता है।

इस ज्वालामुखी में छोटे-मोटे विस्फोट तो बराबर ही होते रहते हैं किन्तु मुख्य रूप से विस्फोट सात से लेकर पन्द्रह मिनट तक के अंतर के पश्चात् हुआ करता है। बड़े-बड़े वैज्ञानिक विश्व की रचना तथा धरती की भीतरी तहों के मर्म का अध्ययन करने के लिए इस ज्वालामुखी का अवलोकन करने आते रहते हैं और बहुत निकट से इसका अध्ययन करने का प्रयत्न करते हैं। एक वैज्ञानिक ने अपने पैर दूसरों से पकड़ रखवा कर कुंड के भीतर झाँकने का भी प्रयत्न किया था और इस प्रकार लावा के कर्तृत्व को देखने का प्रयत्न किया था। उसके कथनानुसार उस कुंड में पिघली चाँदी की भाँति लावा के तह के दर्शन होते थे और नियमित समय के अंतर पर उभड़ते थे। श्वेत भाप का एक बुलबुला उठकर बाहर उभड़ पड़ता तथा एक कर्कश ध्वनि करता। लावा के प्रत्येक उभाड़ के समय टूटे-फूटे दहकते पथरीले चूर्ण या टुकड़े लावा के तल पर ऊपर उठते और गिरते दिखाई पड़ते।

पन्द्रह मिनट या इससे कुछ अधिक अवधि के पश्चात् इस हलचल में बाधा पड़ कर शांति छा जाती और फिर गंभीर घोष के पश्चात् उभाड़ प्रारंभ होता। कुछ धरती का कंपन भी होता, लावा के तल के ऊपर भाप के बुलबुले भी छा जाते। इस बुलबुले के फट जाने से एक लावा का उछाल हजार फीट तक वायु में उठता दिखाई

पड़ता। उससे ढोंके तथा चूर्ण दहकते रूप में चारों ओर बरस पड़ते। इस प्रकार शांति और उभाड़ का क्रम चलता देखा जाना नित्य ही का काम है।

ऐसा ज्ञात होता है कि स्ट्राम्बोली के मुखकुंड में लावा की ऊपरी तह ठंडक से कुछ अधजमी हो जाया करती है। फिर जब नीचे से भाप की प्रबलता अपने दबाव और गर्मी से इस ऊपरी तह के अधजमे भाग को तोड़कर ऊपर आने का प्रयत्न करती है तो उभाड़ होता है। एक बार उभाड़ हो जाने पर ताप का भंडार समाप्त सा हो जाने से जब लावा नीचे गिर पड़ता है या चूरे बाहर गिरा देता है तो फिर एक बार ऊपरी तह अधजमी बनकर उस क्रम को जारी रखती है।

लावा की ऊपरी तह जमा देने का कारण यह भी है कि इस कुण्ड के पार्श्व का भाग खुला है इसलिए उस मार्ग से खुली हवा कुंड में प्रवेश कर ठंडक पहुँचाने में समर्थ होती है जिससे लावा शीघ्र जम पाता है।

इस ज्वालामुखी से भाप की धारा तो ऊपर सदा ही उठती रहती है और बादल सा छाए रहती है। किन्तु उभाड़ होने पर लाल लपट इस बादल में बीच में मिश्रित होती दिखाई पड़ती है। यदि किसी समय स्ट्राम्बोली में कोई बहुत प्रबल उभाड़ हुआ रहता तो उसका रूप कदाचित् दूसरा ही होता। वह अपनी गर्मी बाहर निकाल डालने का मार्ग एक साथ ही पाकर कदाचित् इसको सुप्त या विलुप्त बना चुका होता।

कहा जाता है कि एक वैज्ञानिक ने इस ज्वालामुखी के कुंड में ८०५ फीट की गहराई तक प्रवेश करने में सफलता प्राप्त की थी। जापान में कुछ साहसिक पत्रकारों ने इससे भी कुछ अधिक गहराई

तक भी अपने देश के एक ज्वालामुखी के कुंड में प्रवेश कर अपने साहस का उदाहरण रक्खा था।

एटना—सिसिली के पूर्वी तट पर एटना ज्वालामुखी अवस्थित है जो योरप का सर्वोच्च तथा वृहत्तम ज्वालामुखी है। इसकी ऊँचाई समुद्र-तल से १०७८० फीट ऊँची है। यह ज्वालामुखी अपना निम्न आधार लगभग ६० मील की गोलाई का रखता है जिसको अधिक दूर तक लावा पूर्ण आच्छादित रखता है। साधारणतया इसका शिखर तुषार-आच्छादित ही रहता है। यह ज्वालामुखी इतना ऊँचा है कि इसके कुण्ड से ऊपरी भींटे के छोर तक लावा की पहुँच ही नहीं हो पाती। कभी-कभी ही वह ऊपरी छोर तक पहुँच पाता है। इस कारण लावा के क्षोभ के कारण भींटे की निचली दीवाल के भागों में से अन्य छोटे-छोटे मुख-कुण्ड बन जाते हैं। इस कारण मुखकुण्डों के एक गुच्छ रूप में ही इसको देखा जाता है। ये क्षुद्र मुखकुण्ड लगभग २०० की संख्या में होंगे। इनमें से कुछ तो ३००० फीट तक ऊँचे हैं। लावा की तह के भित्ति रूप में दरारों से ऊपर तक आकर जम जाने के कारण एक जाल सा बिछा होता है। इन भित्ति-शिलाओं (डाइक) के कारण एटना पर्वत बड़े दृढ़ रूप का है।

एटना विस्यूवियस का समीपवर्ती है। विस्यूवियस के सन् ७६ ई० के विख्यात उभाड़ के पश्चात् एटना में भी कुछ हलचल का अभाव रहा। ऐसा देखा गया है कि तब से अब तक जिस समय विस्यूवियस क्षुब्ध रहता था, उस समय एटना शान्त रहता था। किन्तु जब एटना का उभाड़ होता तो विस्यूवियस शान्त रहता। किन्तु ऐसे अवसर भी आए जब इन दोनों का क्षोभ साथ ही होता रहा।

एटना के अनेक उभाड़ों ने भीषण संहार भी किया है। सन्

११६६ ई० के उभाड़ में केटेनिया के ध्वस्त हो जाने से १५००० मानव मृत हुए, सन् १६६६ ई० के उभाड़ में २०००० मनुष्य मृत हुए। सन् १६२८ ई० में एटना का अद्भुत उद्गार हुआ। एक १०० फीट चौड़े लावा की धारा २० फीट प्रति मिनट की चाल से बही जिसकी पहुँच समुद्र-तट तक हुई। एक नगर बिल्कुल ही लुप्त हो गया। इतना सब होने पर भी आज एटना के पार्श्व में हरे-भरे खेतों में रहने वाले किसानों की कमी नहीं है जो भय की आशंका से चिन्तित न होकर अपनी उपज से जीवन यापन करते जाने में भूले रहना अधिक सुविधाजनक समझते हैं।

दक्षिण सागर के ज्वालामुखी

पैसिफिक महासागर में फीजी तथा समोआ द्वीपों के मध्य एक मुद्रिकाकार द्वीप है जिसे मूंगे के कीटों द्वारा गोलाकार निर्मित "एटोल" नामक द्वीपों की भाँति समझा जा सकता है। किन्तु यह ज्वालामुखी की रचना है जिसकी कोई शिखर या पर्वतीय रूपरेखा नहीं। केवल समुद्र-तल से कुछ ऊपर तक इस ज्वालामुखी का मुखकुंड उठा हुआ है जिसके कुंड में बीच में झील स्थित है। इस प्रकार इसका भींटा मुद्रिका के आकार में जल-तल से केवल ८०० फीट ही ऊँचा है। परन्तु समुद्र के पेटे से ६००० फीट ऊपर आकर यह समुद्र-तल पर उभड़ा है। इस कारण हम इसके आकार का अनुमान कर सकते हैं।

इस एकाकी ज्वालामुखीय द्वीप पर कुछ आदिवासी बहुत दिनों से निवास करते आए हैं। उनको हम अद्भुत साहस तथा अपनी जन्मभूमि से प्रेम रखते देखते हैं। दुख-सुखों का कुछ भी ध्यान रक्खे बिना वे अपने इस द्वीप का निवास नहीं छोड़ते। कितनी ही बार इस ज्वालामुखी ने अपने उभाड़ों से उन्हें त्रस्त किया होगा, परन्तु वे वहाँ चिपके ही पड़े रहते हैं। इस स्थान पर रहने की उन्हें चपल बुद्धि भी है। संकट आते ही वे अविलंब रक्षा का उपाय करते दिखाई पड़ते हैं। २५ जून १९२५ ई० को एक बार इसका जब उभाड़ हुआ तो इनको बड़ी ही तत्परता से अपने सभी बंधुओं को तुरन्त ही सूचित कर रातों ही रात संकट के स्थान से

हट कर कुछ ऊँचे सुरक्षित स्थल पर पहुँचे देखा गया। यदि ये इतनी स्फूर्ति से भाग न खड़े होते तो इनकी बस्ती ज्वालामुखी के रोष में नष्ट ही हो गई होती। सहयोग तथा सावधानी का यह अद्भुत उदाहरण ही इन्हें वहाँ जीवित रक्खे है। इस द्वीप को टिन-कैन द्वीप नाम दिया गया है। टिन-कैन (टिन के कनस्तर) में पहले यहाँ डाक पहुँचाई जाती थी इसलिए ही यह नाम पड़ा। यहाँ के निवासी "टोंगा" नाम से प्रसिद्ध हैं।

इस टिन-कैन या न्याफाऊ नामक द्वीप के फूटू ग्राम में रात्रि-काल में चार बजे प्रातः किसी ने दो मील दूर धरती में हलचल तथा अग्नि का उभाड़ देखकर उपर्युक्त उभाड़ की सूचना पाई थी और उस समय ही सारे ग्रामवासियों ने एक दूसरे को सावधान कर भाग खड़े होने में सहायता की थी। बच्चे और वृद्ध भी उनके सहयोग से भली भाँति दूसरों के कंधों पर बैठ कर भाग सके। अर्द्ध-सभ्य लोगों में भी इतनी सतर्कता और क्रियाशीलता जीवन-रक्षा के लिये पाई जाती है।

किंवदंती है कि इस द्वीप पर ही एक दल ने अपने मुख्य सरदार से विद्रोह कर कहीं दूसरा ग्राम बसाया और उस नए दल के मुखिया ने कोई कर देना भी अस्वीकार कर दिया। उसने जोश में कदाचित यह भी घोषणा की कि किसी दैवी विपत्ति में पड़ कर वह इस लोक से मुक्ति पा जाना श्रेयस्कर समझेगा, किन्तु कर देना या अधीनता स्वीकार न करेगा। दुर्भाग्यवश एक ज्वालामुखी का उसके ग्राम में बीच की सड़क पर लंबी दरार रूप में उभाड़ हुआ तथा रात को अकस्मात् निकले लावा की धारा ने उस ग्राम के दो तृतीयांश व्यक्तियों को उदरस्थ कर लिया किन्तु संख्या थोड़ी ही थी। कुल ६० या ७० व्यक्ति इस प्रकार मृत हुए। लावा के उभाड़ से मनुष्यों के मृत होने के बहुत ही कम उदाहरण मिलते हैं। लावा

की गति इतनी मंद होती है कि उससे रक्षा पा जाने का पर्याप्त अवसर मिल जाता है परन्तु न्याफाऊ द्वीप के अहुआ नाम के ग्राम के वासियों का लावा के प्रकोप से नष्ट हो जाने का इस कारण अवसर आया कि रात्रि के अंधकार में अचानक कदाचित् शान्त रूप में ही उसका उभाड़ हो गया। यह दुर्घटना २४ जून सन् १८५३ ई० को घटित हुई थी। कहा जाता है कि धरती फट जाने से इस विद्रोही दल के नेता के घर के ठीक नीचे से ही लावा का उभाड़ होकर यह दुर्घटना कर सका था। ग्राम की सड़क से चौड़ान में लावा की धारा उभड़ कर सीधे समुद्र तक जा पहुँची थी और ग्राम को नष्ट कर सकी थी।

३१ अगस्त १८८६ ई० को भी इस द्वीप में एक भारी उभाड़ हुआ था। पहले भारी भूकंप उठा, फिर एक भारी गोभी के फूल के आकार में रेत तथा धूल का घना बादल उमड़ पड़ा किन्तु सौभाग्य से वायु-मण्डल की ऊपरी व्यापारिक हवा ने उसे पश्चिम की ओर उड़ा दिया और वहाँ के निवासी बच निकले। बालू की २०० से ४०० फीट तक ऊँची तहें जम गईं। बस्ती के पास भी चूरे, धूल आदि की तीन फीट मोटी तह आ जमी। सबेरे सात बजे भूकम्प का पहले उद्गार हुआ था। फिर आधी रात को एक उभाड़ हुआ, झील से ३००० फीट ऊपर बवंडर उभड़ कर पहुँचा, फिर भूकम्प शान्त हुआ। भारी आँधी का बाद में प्रकोप हुआ, कितनी जगह बिजली गिरी। काले रूप की धूल तथा बालू के भारी अंधड़ ने घोर अंधकार में बहकर पेड़-पौधों को नष्ट किया। इस प्रकार उपद्रव जारी रह कर १८ दिन तक गीसर की भाँति धुआँ, भाप आदि का उभाड़ करता रहा। न्याफाऊ के ज्वालामुखी को न्यूजीलैंड के ज्वालामुखियों से कुछ भाई-चारा दिखाते पाया जाता है। वे एक ही ज्वालामुखी क्षेत्र से सम्बन्धित हैं, सैकड़ों

मील दूर होने पर इनको एक समय ही उभाड़ दिखाते पाया जाता है ।

सन् १९१९ ई० में न्याफाऊ के एक भारी उभाड़ ने भारी हानि पहुँचाई थी । चार हजार एकड़ के नारियल के बाग नष्ट हो गये, हजारों रुपये की अन्य जायदाद नष्ट हुई ।

अन्य स्थानों में भी कहीं-कहीं पृथक-पृथक स्थल खंड के रहने वाले ज्वालामुखियों में भी कभी-कभी एक समयों में या कुछ ही समय के हेर-फेर से उभाड़ होने पर धरती के अंतर्भाग में उसके स्रोत स्थलों में कुछ सम्बन्ध होने की कल्पना करनी पड़ती है ।

———

पश्चिमी द्वीप-समूह के ज्वालामुखी

लासौफ्रियेर—धरती की भीतरी तहों में ज्वालामुखी की उभाड़ शक्ति उत्पन्न करने वाले कारणों को आँखों से देखने में अपनी विवशता समझ आज का वैज्ञानिक धरातल पर ही दिखाई पड़ सकने वाली ज्वालामुखीय क्रियाओं का बड़े ध्यान पूर्वक अवलोकन करता है। छोटी-छोटी कितनी ही घटनाओं तथा उनकी विशेषताओं की लड़ी जोड़-जोड़कर सम्भव है वह किसीं भारी भेद का पता लगा ले। यह आशा ही उसे अपनी खोजों में लगी रहने के लिए उत्साहित करती रहती है। पश्चिमी द्वीप-समूहों में भी कोई ऐसी लड़ी देखने की आशंका होती है। किसी समय पेली ज्वालामुखी का मार्टिनीक द्वीप में अपना आततायीपन दिखला सकने के कुछ पश्चात् या कभी पूर्व अन्य स्थल पर कुछ उत्पात दूसरे ज्वालामुखी को करते पाया जाता है। इससे अनुमान करने की प्रवृत्ति होती है कि कदाचित कतिपय ज्वालामुखियों में कुछ भ्रातृत्व भावना विद्यमान हो जिससे वे कुछ अवधि के हेर-फेर से एक काल में ही उभाड़ दिखा पाते हैं।

पश्चिमी द्वीप-समूहों में ही एक दूसरा द्वीप सेंट विंसेंट नाम का है जिस पर लासौफ्रियेर नाम का एक ज्वालामुखी अवस्थित है। इसका कुण्ड गंधक का आखात या कुण्ड होने और उसकी गैस का बाहुल्य अपने उभाड़ करने से यह नाम धारण करता है जिसका अर्थ हमारी भाषा में गंधक-कुण्डी या गंधक-आखातीय है। हम

भी इसे गंधक-कुण्डीय नाम दे सकते हैं। सेंट-विंसेंट द्वीप मार्टिनीक द्वीप से ६० मील दूर होगा। इसलिए इन दोनों स्थानों के ज्वालामुखियों के उभाड़ों में समसामयिकता देखकर हम इनमें कुछ बंधुत्व भावना अर्थात् भूगर्भ में एक ही उद्गारस्रोत होने की कल्पना करने में कुछ हिचक नहीं अनुभव कर सकते।

मार्टिनीक द्वीप के कुख्यात ज्वालामुखी पेली का उभाड़ ५ मई को प्रारंभ होकर ८ मई १९०२ को पराकाष्ठा को पहुँचा था। इसी अवधि में ६ मई १९०२ ई० को लासोफ्रियेर (गंधक-कुंडीय या गंधक-मुखी) ज्वालामुखी का भी उभाड़ सेंट-विंसेंट द्वीप पर प्रारंभ होता देखा गया। भाप के बादल उगल-उगल कर इसने भीषण तड़प भी दिखाना प्रारंभ किया जिससे सर्वसाधारण त्रस्त हो उठे। किन्तु न मालूम क्या बात थी कि लोग किसी मायाजाल में आबद्ध पुरुष की भाँति वहाँ पड़े ही रहे, उनमें से थोड़े लोग ही बाहर निकल भागने का उपक्रम कर सके किन्तु कुशल यही थी कि कहीं आबादी सन्निकट नहीं थी, फिर भी जो लोग थे, मृत्यु की गोद में सब ओर सोए ही पाए गए। विस्तृत स्मशान भूमि का रूप ही इस भूखंड ने ले लिया। ७ मई को ज्वालामुखी ने अकस्मात भीषण उभाड़ कर लावा की छः स्वतन्त्र लहरें बहाना प्रारंभ कर दिया था। वे ढाल पर प्रवाहित होकर मृत्यु का संवाद चहुँधा पहुँचाने लगीं। यम का प्रबल प्रहार सर्वत्र हो चला। इतनी विपत्ति से ही मृत्यु-वाहिनी को संतोष नहीं हुआ। बिजली भी कौंधने लगी और जो लोग घाटी में उत्तप्त लावा-प्रवाह से बचे-खुचे रह गए थे, उन पर इस विद्युत्-वज्र ने प्रहार प्रारंभ किया। जीवन का लोप होकर उस खंड में यम सैन्य का नग्न नृत्यस्थल ही स्थापित करना उद्देश्य ज्ञात होता था। उधर लावा ने भी संहार की भीषण लीला खड़ी करने में और बल लगाया। उसकी शतशत धाराएँ ज्वालामुखी से प्रवाहित

होकर एक दूसरे से अलिंगित होकर मृत्यु का भयानक जाल बिछा सकें। इस दहकते मृत्यु-पाश से भला कौन बच निकलता ! मकड़ी के जाल से बेचारा नन्हा कीट कहाँ त्राण पा सकता है ! यम की इस प्रदह्यमान फाँस से कोई प्राणी भी किस प्रकार छूट निकल सकता था !

एक लेखक ने इन घटनाओं का बड़ा ही विशद वर्णन लिखा है :—"इस महान दुर्घटना के लिए वातावरण अद्भुत था। सौफ्रियेर ज्वालामुखी अपनी अंत:पीड़ा से प्रकम्पित हो उठा। उसके शिखर से एक कज्जलनुमा श्यामवर्णीय भव्य धूम्रराशि उमड़ कर आकाशगामी हुई। मुखकुंडों से प्रदीप्त पदार्थ नि:सृत हो रहे थे जो समुद्र की ओर प्रवाहित होकर इंद्रधनुषीय विविध रंग प्रदर्शित करते। पर्वत के शीर्ष पर भीषण अग्नि-प्रदाह मचा था। आसमान फाड़ती हुई ऐसी बिजली गरज उठती जिसे मनुष्य ने कभी देखा सुना न हो। धरती से भयंकर विस्फोट उठते जिनका बिजली से राक्षसी मिलाप होकर ऐसी तुमुल ध्वनि हो उठती जो उस खण्ड के निवासियों की भारी भगदड़ में और भी हलचल पैदा कर देती। रात भर यही दशा रही। दूसरे दिन और रात भी इस दुरवस्था का प्रसार रहा। तीसरे दिन यम की तरह श्याम वर्ण की एक भारी धूम्रराशि उठकर आकाश में इतनी दूर जा पहुँची कि उसकी ऊँचाई ज्वालामुखी से आठ मील अनुमानित की गई। पत्थर और चूरे, लावा को भी साथ मिश्रित कर इस भीषण बवंडर के साथ आकाश में उठ गए जिससे स्थल तथा समुद्र-तल चारों ओर मीलों दूर तक पट गया। धीरे-धीरे इस धूम्रराशि ने ऊपर छितरा कर छत्र का रूप धारण कर आकाश को ऐसा मेघाच्छन्न किया जिससे मध्याह्न-वेला अर्द्धरात्रि में परिणत हो गई।

"वायुमंडल में गंधकीय गैस की इतनी अधिक मात्रा मिलित

हो गई कि जीवन दूभर हो गया। सैकड़ों प्राणी तो लावा-राशि के स्पर्श तक हुए बिना ही इस गंधकीय गैस के ही विषाक्त प्रभाव से, सौफ्रियेर ज्वालामुखी के निकट होने के कारण, निष्प्राण हो गए। सब लोग यही सोच रहे थे कि अब सारा द्वीप यमलोक को ही जाकर शान्ति धारण करेगा। अतएव इस विवशता में ही देवी देवता मनाने, ईश्वराराधना का दुर्बल सहारा पकड़ने के अतिरिक्त अन्य कोई अधिक प्रबल क्रियाशील पार्थिव साधन पा सकने का सुभीता उन्हें नहीं दिखाई पड़ता था। इस घोर निराशा में प्रगाढ़ता का पुट देने के लिए घोर अंधकार में कभी-कभी प्रबल विद्युत्प्रकाश उद्भासित होकर दिन से भी अधिक उज्ज्वल वातावरण पल भर के लिए दिखाकर लुप्त हो जाता।

अगले दिन कुछ विश्रान्ति मिली। सौफ्रियेर का क्षोभ दुर्बल पड़ता दिखाई पड़ा। लावा की धारा का बल तो न्यून नहीं हुआ परन्तु पत्थरों की वर्षा कुछ समय के लिए स्थगित हो गई। प्रकृति के रोष में शिथिलता देख पड़ते ही कुछ साहसी व्यक्तियों ने बाहर निकलकर इस विपत्ति का कुछ लेखा-जोखा लगाने की उत्कंठा पूर्ण करने का प्रयत्न किया। खेती सर्वथा नष्ट हो गई थी। उसे ज्वालामुखीय धूलि, चूर्ण आदि ने पूर्ण आवृत कर रक्खा था। गाँव और बगीचे ढाल की ओर बिल्कुल ही नष्ट हो गये थे। प्राणियों का उनमें कहीं नाम भी नहीं था।"

इन क्षेत्रों में बेचारी केरिब जाति का जन्म स्थान था। किसी समय योरोपीय यात्री कोलंबस के आगमन ने इन जातियों के नाम पर उस ओर के समुद्र का नाम ही केरीबियन समुद्र रख दिया। वह जाति पूर्णतया इस ज्वालामुखी पर्वत के अंचल में निवास करने के कारण इस उपद्रव से अपना नाम ही संसार से मिटती देख सकी। उनमें से उस स्थल पर कोई भी बच न सका। इन

क्षेत्रों में सर्वत्र कम से कम २ फीट गहरी ज्वालामुखीय धूल तथा चूर्ण की तह जम गई थी। कहीं-कहीं इस तह के ऊपर लावा ने अपनी धारा बहा कर बड़े भारी बेलन की भाँति चल कर सब कुछ पदार्थ उसी में बैठाकर ऊपर से मुहर भी लगा दी थी। सारे द्वीप में हरियाली के नाम पर कोई वस्तु शेष नहीं रह गई थी। पशु मृत हो गये थे। घरों का कहीं नाम नहीं रह गया था। नदियाँ थीं, किंतु उनमें पानी बहना बंद हो गया। पानी सूख कर लुप्त हो गया था तथा अब उबलते लावा की धारा उसे अपना प्रवाह-स्थल बनाकर आग और पानी के नाम-धाम का भेद भुला रही थी।

पेली ज्वालामुखी ने बहुसंख्यक मानवों का भक्षण किया किंतु सेंट विंसेंट द्वीप में सौफ्रियेर (गंधकमुखी) ज्वालामुखी को सारी भूमि खा जाते और प्राणियों की बस्ती की जगह निर्जनता का राज्य स्थापित करते देखा गया। पेली ज्वालामुखी से सेंटपियरे नगर नष्ट होकर सारे नगरवासियों का नाश देख सका। सौफ्रियेर के उभाड़ में दो सहस्र प्राणी मृत हो सके, उनमें केरिब जाति के अधिकांश लोग थे जिनके कुछ थोड़े नाम-लेवा ही आज दूसरे द्वीपों में बचे हुये पाये जाते हैं। इनके कुछ अवशिष्ट व्यक्तियों को आश्रय देने वाले सेंट लूशिया तथा डोमिनिया द्वीप ही हैं। किन्तु प्रकृति की इन दुर्घटनाओं रूप में ज्वालामुखियों को हम किसी जाति या वर्ग विशेष के ही मनुष्यों से विद्रोह भावना रखकर उनके लोप करने की गुप्त योजना करते नहीं देखते। वे अपने कुछ अन्य ही कारणों तथा प्रभावों से अपने उद्‌गारों का समय, स्थल तथा उसकी प्रबलता की मात्रा वा रूप निर्धारित करते होंगे जिनको समझ सकने की लालसा मनुष्य के हृदय में बनी ही हुई है। ला सौफ्रियेर ज्वालामुखी के उभाड़ अन्य समयों में भी भीषण रूप के होने के उल्लेख मिलते हैं। ऐतिहासिक काल में इसका प्रथम उभाड़ १७१८ ई० में होना

पाया जाता है। उस समय लावा का निष्कासन हुआ था परन्तु सन् १८१२ ई० का उभाड़ विशेष भयानक था। वर्ष भर तक भूकम्पों के जब-तब उभाड़ होने की पूर्व सूचनाओं के पश्चात् सौफ्रियेर का उभाड़ २७ अप्रैल १८१२ ई० को हुआ था।

एक बड़ी विचित्र कहानी सुनी जाती है। कोई चरवाहा ढोर चरा रहा था। ऊपर की ओर से कोई ढेला गिरते उसने देखा। एक, दो, तीन इसी तरह कितने ढेले आते रहे। उसने सोचा कि उसका कोई दूसरा साथी पर्वत के शिखर की ओर छिप कर उसके साथ हँसी और छेड़खानी कर रहा है। उसने भी बदले में ऊँचान की ओर के स्थान की ओर ढेले मारने प्रारम्भ किये। दोनों ओर से गुत्थम-गुत्थी सी ही होने वाली हो सकती थी किन्तु वह तो ढाल पर से ऊपर की ओर थोड़े ढेले फेंक पाता, उधर ऊपर से अधिक ढेले आते किन्तु उसके आश्चर्य का उस समय ठिकाना न रहा जब उसने देखा कि अब इतने बड़े ढोंके गिर रहे हैं जिनको कोई आदमी अपने हाथ से उठा कर नहीं फेंक सकता है। इस घटना को देखकर उसके पैर उखड़ गये। उसने समझ लिया कि यह किसी चरवाहे की नहीं, बल्कि भारी शक्ति का खेल है जिस पर उसका कुछ बस नहीं चल सकता।

उस चरवाहे ने ढेला फेंकने में अपने दुस्साहस को उस समय और अधिक भय से देखा जब ऊपर की ओर शिखर पर से प्रगाढ़ धूम-राशि उठने लगी जो घासपात के सुलगाने से उठी आग की पूर्वगामिनी धूम-राशि नहीं थी, बल्कि घातक रूप के गैसों, धूलियों तथा चूर्णों से परिपूर्ण भयंकर ज्वालामुखीय आँधी थी। अब तो क्या पूछना था, अपने ढोरों की भी कुछ परवा न कर उसके पैर उखड़ गए। उधर वह भागता जा रहा था, इधर पीछे पर्वत अपनी गड़गड़ाहट गंभीर करता जा रहा था।

तीन दिनों तक ऐसा ही दृश्य रहा। तीसरे दिन लावा की लहर फूट पड़ी और कुंड की ऊपरी छोर से बाहर आकर वेग पूर्वक बह चली। ढाल से बढ़ती चार घण्टे में वह समुद्र-तट तक जा पहुँची। उसके पश्चात् उभाड़ का अंत हुआ।

दक्षिणी अमेरिका के उत्तरी तट पर स्थित वेनेजुएला देश में इस ज्वालामुखी को उत्पन्न करने वाली भूगर्भीय शक्ति को अपना प्रकोप दिखाते पाया गया। धरती के नीचे से आती हुई कर्कश ध्वनि से वहाँ के निवासी भयातुर हो उठे। यहाँ गड़गड़ाहट की आवाज सुनकर सैनिकों को अपनी बंदूकें सँभालते देखा गया मानो उन पर कोई समुद्री युद्धपोत अपने गोले बरसाकर आक्रमण ही कर रहा था और उसी कारण यह गरज उठ रही थी। सहस्रों मीलों की दूरी पर के स्थानों में यह आतंक जिस शक्ति ने किया, उसे ही सौफ्रियेर के इस उभाड़ के एक मास ही पूर्व इसी वेनेजुएला में ऐसा भूकम्प उठाते पाया गया जिसमें केरेकेरुस नगर सर्वथा ध्वंस हो गया जिसमें १०००० प्राणी एक पल में विनष्ट हो गये।

इसी प्रकार १९०२ ई० के पेली ज्वालामुखी के उभाड़ के पश्चात् मध्य अमेरिका के ग्वाटेमाला देश में सेंटामेरिया ज्वालामुखी को कीचड़ तथा भाप की वर्षा कर अपना उभाड़ कुछ मास पश्चात् ही दिखाते पाया गया था। १९२९ में भी पेली ज्वालामुखी के उभाड़ के कुछ पश्चात् सेंटामेरिया का भयङ्कर उभाड़ होते देखा गया।

दक्षिणी अमेरिका के ज्वालामुखी

दक्षिणी अमेरिका ज्वालामुखियों का प्रधान देश कहा जा सकता है। संसार के सर्वोच्च तथा विशालतम ज्वालामुखी यहाँ ही मिलते हैं जिनका मुख्य आश्रय-स्थल ऐंडी पर्वत-श्रेणी है। भूमध्य रेखा के निकट के स्थलों में इनका विशेष वृहद् रूप मिलता है। यथार्थ में दक्षिणी अमेरिका के सभी सर्वोच्च पर्वत-शृंग ज्वालामुखीय ही अनुमान किए जाते हैं। शङ्कुओं तथा मुखकुंडों का इनमें जाल बिछा मिलता है जिनके मुख से निःसृत लावा, चूरे आदि उनके पार्श्वों तथा मध्य में स्थित घाटियों को पाटकर धरातल के रूप-परिवर्तन में सहायक हुये हैं। इन सब ज्वालामुखियों में कुछ जागृत हैं तथा कुछ सुप्त हैं या विलुप्त हो गये हैं। इन सबको चाइल से लेकर आरजेंटिना, बोलविया, पेरू, इक्वेडर तथा कोलंबिया तक प्रसारित पाया जाता है।

कोटोपाक्सी—यह ज्वालामुखी देखने में तो विशेष ऊँचा नहीं दिखाई पड़ता किन्तु यथार्थ में यह समुद्र तल से १९५५० फीट ऊँचा है। इसके अञ्चल की घाटी समुद्र तल से ९००० फीट ऊँची है। इसी कारण समीप से देखने पर वह उतना ऊँचा नहीं दिखाई पड़ता। यह भूमध्य रेखा के बिल्कुल निकट ही स्थित है। इसका शिखर पूर्ण शंकुनुमा ४४०० फीट ऊँचा है तथा सतत हिमाच्छादित ही रहता है। इससे कितने ही हिमनद निकलते हैं। परन्तु मुखकुंड के समीप हिम का अभाव रहता है। मुखकुंड को एक गोल दीवाल रूप परकोटे या भींटे से घिरा देखा जाता है जो दूर-दर्शक

यंत्र से देखने पर एक श्यामवर्ण बिम्ब की भाँति दिखाई पड़ता है जिसके नीचे भूरे रङ्ग की ज्वालामुखीय धूल बिछी दिखाई पड़ती है, परन्तु यह धूल की तह किसी वस्तु पर वायु से आकर गिरे मैल की तह की भाँति ही होती है जिसके नीचे हिम राशि पड़ी रहती है। इसके मुखकुंड का आकार उत्तर-दक्षिण दिशा में २३०० फीट तथा पूर्व-पश्चिम दिशा में १६५० फीट चौड़ा है। दक्षिणी ढाल पर लगभग १५००० फीट ऊँचाई पर एक श्यामवर्ण का नङ्गा शंकु है जिसमें शिखर १००० फीट ऊपर उठा है। लोगों का विश्वास है कि ज्वालामुखी शृङ्ग का मूल खण्ड है जो टूट कर पृथक होने पर यहाँ आ गिरा। पठार पर इसके चारों ओर पंक, ज्वालामुखीय रेत तथा छिद्रमय ढोंके (प्यूमाइस) फैले पड़े हैं जिनकी गहरी तह जमी पड़ी है। यह ज्वालामुखी इक्वेडर राज्य के उत्तर-मध्य भाग में भूमध्य रेखा के दक्षिण अवस्थित है और ऐंडी पर्वत-माला के ज्वालामुखियों में सर्वाधिक प्रसिद्ध है तथा संसार का सर्वोच्च जागृत ज्वालामुखी है।

सौन्दर्य के पारखी जापान के फ्यूजीयामा तथा दक्षिणी अमेरिका के इक्वेडोर देश में स्थित ऐंडी पर्वतमाला के शृङ्ग-शिरोमणि कोटोपाक्सी में होड़ खड़ी करते हैं। सौन्दर्य की प्रतियोगिता में दोनों को एक दूसरे से बढ़कर मानें तो भी हमें कोटोपाक्सी अपने उच्चतर शृङ्ग का फ्यूजीयामा से ७००० फीट अधिक ऊँचा दिखाता दृष्टिगोचर होगा किन्तु जङ्गल में मोर नाचने की भाँति कोटोपाक्सी के शिखर तक पहुँच सकने की असुविधा भी सौन्दर्य-दर्शन में भारी बाधक देखेंगे। शिखर पर पहुँच जाने पर कुछ दर्शन होना कठिन ही हो सकता है क्योंकि वह प्रायः मेघाच्छन्न रहती है और वर्ष के निर्मलतम मासों में भी आठ-दस दिन से अधिक उसे दर्शन करना सम्भव नहीं हो सकता।

इस रूप के कोटोपाक्सी का सर्वप्रथम उभाड़ लिखित रूप में सन् १५३२-३३ ई० में होना पाया जाता है। तब से तो बराबर उभाड़ होते ही आये हैं। १६८६ ई० के उभाड़ ने तो टाकुंगा नगर को ध्वंसकर उसके तीन चौथाई निवासियों को नष्ट कर दिया। सन् १७४४ ई० के उभाड़ की ध्वनि ६०० मील दूर तक सुनाई पड़ी थी। सन् १८७७ के उभाड़ ने आस-पास के स्थल-खण्ड को उजाड़ बना डाला। १००० मनुष्यों की भी मृत्यु हुई। १६०३ ई० में भी उभाड़ हुआ था।

सैंगे ज्वालामुखी—यह भी ऐंडी पर्वतमाला का भाग है तथा भूमध्य रेखा के निकट ही स्थित है। इसकी ऊँचाई १७४५० फीट है जिसका ऊपरी भाग २००० फीट तक तुषाराच्छन्न ही रहता है। इसके आधार में लावा की पुरानी तहें वृक्ष की जड़ों की भाँति आश्रय प्रदान करती हैं। किसी समय इसको संसार का सबसे प्रबल जागृत ज्वालामुखी कहा जाता था।

पेरू में एरेक्विपा नाम का नगर संसार के एक सुन्दरतम नगरों में गिना जाता है जिसे तीन ओर से हिमाच्छादित ज्वालामुखीय शिखरें आवृत रखती हैं। नगर समुद्र-तल से ७५५० फीट ऊँचा है परन्तु उसका परकोटा-सा बनने वाले तुषाराच्छन्न शिखरों में एल-मिस्ती, नगर की अपेक्षा ११५०० फीट अधिक ऊँचा है। इस भव्य नगर पर तीन ज्वालामुखियों के शृङ्ग दृष्टिपात करते हैं। नगर से चचानी, एलमिस्ती तथा पिचूपिचू नाम के तीनों ज्वालामुखियों का तीन दिशाओं में दर्शन किया जा सकता है। ये तीनों अतीतकाल से शान्त देखे जा रहे हैं। इस कारण यह जनाकीर्ण नगर इनके दृश्यों का भव्य आनन्द उपभोग करता हुआ निरापद समय व्यतीत करता जाता है। इन तीनों ज्वालामुखियों में एलमिस्ती ही सबसे कनिष्ठ है, इस कारण वह अपना सुडौल रूप प्राकृतिक तल-भंजक

शक्तियों से सुरक्षित रख सका है। अन्य दो ज्वालामुखियों ने तुषार तथा हिम के आघातों से हतबुद्धि होकर अपना मूल रूप खो दिया है। एलमिस्ती से धूम-राशि प्रायः ही उठा करती है किन्तु योरोपीय जातियों के वहाँ पहुँचने के समय से लेकर अब तक उसमें कभी उभाड़ होता नहीं देखा गया। इसलिए यह कह सकना कठिन सा ही है कि पहले से कितने अधिक समयों से वह शान्त रहता आ रहा है। पूर्व-इतिहास बता सकने वाला कोई साधन सुलभ नहीं है।

सन् १६७७ ई० में एलमिस्ती के मुख-कुंड के अन्दर एक तीन-कक्षीय भवन के अवशेष रूप में लकड़ी और पत्थर पड़े देखे गए। वे कदाचित किसी आराधना-गृह के अवशेष थे जिन्हें वहाँ के मूल निवासियों ने इसकी पूजा करने के लिए निर्मित किया हो। अब वैज्ञानिकों ने अपना आक्रमण कर ज्ञान-वृद्धि के लिए उस ज्वालामुखी के भीटे के सर्वोच्च भाग पर एक वेधशाला निर्मित कर ली है जहाँ हावर्ड विश्वविद्यालय के शोधक शोध-कार्य करते हैं। इन सब ज्वालामुखियों को इक्वेडर देश आश्रय देता है जो ज्वालामुखीय उपद्रवों के लिये दक्षिण अमेरिका में सबसे अधिक कुख्यात है।

चाइल और आरजेंटिना के मध्य सीमावर्ती रेखा दक्षिणी ऐंडी पर्वतमाला में एकोकागुआ ज्वालामुखी है जो समुद्र-तल से २३००० फीट ऊँचा है। यह दक्षिणी अमेरिका का सर्वोच्च ज्वालामुखी है किन्तु इस समय विलुप्त अवस्था में पहुँच चुका है। दक्षिणी चाइल में दो सर्वाधिक जागृत ज्वालामुखी कालबुको तथा लैमा नाम के हैं।

दो जलाशयों के मध्य स्थित एक ज्वालामुखी स्थित होने का भव्य दृश्य हमें ओसोनों नामक ज्वालामुखी में देखने को मिलता है जिसके पार्श्व की दोनों झीलें कभी एक ही रही होंगी और बाद में पृथक होकर दो बन गईं। इनकी विभाजक रेखा यह ज्वालामुखी अपने मुख से बाहर निःसृत लावा की लंबी धारा, छिद्रमय

ढोंके तथा चूर्ण, धूल आदि से बना सका है। इसका शीर्षीय तृतीयांश भाग पूर्णतया हिमाच्छादित ही है जिस पर से वर्ष भर तक हिम हटने का नाम नहीं लेता। केवल दो स्थानों पर थोड़ा अंतराल दीखता है जहाँ लावा का श्याम वर्ण अवलोकन किया जा सकता है। आज एक शती से इस ज्वालामुखी का उभाड़ होते नहीं देखा गया है, फिर भी इसमें ताप आज भी विद्यमान ही है। रस्सी जल गई है, किन्तु ऐंठन नहीं जा सकी है। उस अवशिष्ट ताप से ही लावा पिघल कर दो स्थलों पर निकली दिखाई पड़ती है जहाँ शीत अपना प्रभाव दिखाने में असमर्थता देख हिम जमाने के स्थान पर लावा का ही श्याम वर्ण दिखाने को विवश होता है। चारों ओर से हिमाच्छादित स्थल में यह दो छोटे हिम-हीन स्थल शीत और ताप के द्वन्द्व का अद्भुत दृश्य ही उपस्थित करते दीखते हैं।

ऐंडी पर्वतमाला में चार ज्वालामुखियों ने मीलों दूर के स्थानों में रहते हुए भी एक समय ही अपना उद्गार सन् १९३२ ई० में प्रकट किया। इनमें एक के विलुप्त हो जाने का विश्वास कर लिया गया था। इनका उभाड़ भयानक रूप का हुआ। सात सौ मील दूर के नगर ब्यूनस आयर्स में ज्वालामुखीय चूर्ण की ऐसी जम कर वर्षा हुई कि उसकी राशि एक लाख मन तक पहुँची। उसने प्रत्येक वस्तु को आच्छादित कर लिया, सब लोग साथ ही खाँसने और अश्रुपात करने लग गए। मेंडोजा नगर में तो एक फीट से भी गहरी तह चूर्ण की जम गई। जब मेंडोजा से ब्यूनस आयर्स रेलगाड़ी पहुँची तो बड़ा विचित्र ही दृश्य था। सारी गाड़ी ज्वालामुखीय चूरे से पटी पड़ी थी। सबसे निकट के उभड़े ज्वालामुखी से ८०० मील की दूरी पर उरुगायी के मांटिविडियो नगर में भी ज्वालामुखियों के मुख से निर्गत धूल, चूर्ण आदि की भारी वर्षा हुई। इन ज्वालामुखियों में

डेस्कावेजाडो नाम का जो ज्वालामुखी बहुत दिनों से विलुप्त माना जा रहा था उससे तो लगभग ३०० मील दूर तक चारों ओर गंधकीय गैस के विषाक्त रूप का इतना फैलाव हुआ कि लोगों का गला घुटने लगा। मेंडोजा प्रदेश में धरती में भारी फटान हुई, लावा की धारा भी साँप के पाश की तरह पर्वत तथा पठार पर फैल गई। इस कारण लाख व्यक्तियों तक के हटाने की व्यवस्था की गई। इन ज्वालामुखियों में लास येगुआस ने पश्चिमी आर्जेंटिना पर अपने लावा, गैस, चूरे आदि का प्रहार किया था। टिंगुरिका तथा ज्युजापू नाम के तीसरे और चौथे ज्वालामुखियों का प्रकोप भी कुछ कम नहीं था।

पूर्वी द्वीप-समूह के ज्वालामुखी

भारतवर्ष का पूर्वकाल का उपनिवेश यव द्वीप आज जावा नाम से ज्ञात है। इसका क्षेत्र ज्वालामुखियों के लिए बड़ा ही उर्वर ज्ञात होता है। इसमें अनेक बड़े ही भयानक तथा संहारक ज्वालामुखी हैं। १३ ज्वालामुखियों को इस छोटे देश में जागृत रूप में पाया जाता है। सुप्त और विलुप्त ज्वालामुखियों को भी मिला कर इनकी संख्या १२५ तक पहुँचती है। जावा के इतने बहुसंख्यक ज्वालामुखियों में पापान्दयन नामक ज्वालामुखी सबसे सुन्दर है। इसकी उँचाई समुद्र-तल से ८७५० फीट है। यह जागृत ज्वालामुखी है। इसके मुख से भाप और धूम का निष्कासन लोगों को दिखाई पड़ता किन्तु उससे कोई हानि होती न देख लोग इसकी चिन्ता से मुक्त ही जान पड़ते थे। इसी मध्य सन् १७७२ ई० में इसका भयंकर उभाड़ हुआ। इसका वृहद् भाग भंग हो गया जिससे १५ मील लंबा तथा ६ मील चौड़ा अंतराल बन गया। इससे कितनी अधिक राशि की वस्तुएँ आकाश में फेंकी गई होंगी इसका अनुमान किया जा सकता है। इसके आगे तो क्राकाटाओ के द्वारा बाहर फेंकी गई वस्तुओं की मात्रा भी मात थी। जो भीषण दृश्य क्राकाटाओ ने सन् १८८३ ई० में दिखाया, वैसा ही भयंकर दृश्य इस ज्वालामुखी ने १७७२ ई० के इस उभाड़ में दिखा दिया। इस संहार-लीला में इसके अंचल में निर्विघ्न निवास करने वाले निरीह निवासी नष्ट हो गए। ४० गाँवों का लोप हो गया। कुछ तो दूर फेंक दिए गए, कुछ

भस गए, पंक तथा लावा ने उन्हें अपने पेट में दबा लिया। ऐसे दबे हुए कुछ गाँव तो ज्वालामुखी से बहुत दूरी पर स्थित थे। कुल ३००० मनुष्यों का प्राणान्त हुआ। ढोरों के विनाश का तो कुछ ठिकाना ही नहीं रहा। कहवा के अधिकांश बागान विनष्ट हो गए, ज्वालामुखी ६००० फीट की ऊँचाई से घटकर ५००० फीट ऊँचा ही रह गया। जावा के एक ज्वालामुखी सालेक का उभाड़ इससे भी अधिक भयानक हुआ था। इसकी उठती ज्वाला को सैकड़ों मील से देखा जा सकता था तथा धरती की कँपकँपी तथा इसकी हलचल का वज्र-घोष तो बहुत ही दूर तक अनुभव किया जा सकता था। सात पहाड़ियाँ, जिनके अंचल में प्रवाहित नदी नाना प्रकार के जंतुओं, महिषों, मृगों, वानरों, व्याघ्रों तथा नक्रों के मृत शव से आकीर्ण हो चली थी, भस कर एक समतल भूखंड बन गई। नदी का मार्ग ही परिवर्तित हो गया। वन अंगारमय हो गए। सारे देश का रूप ही बदल गया।

एक अन्य ज्वालामुखी गैलुंग गुंग नीचे से ऊपर तक वृक्ष-राजि के सघन वन से पूरित था और उसके चारों ओर ग्रामों का निवास था। इस उच्च पर्वत के शिखर पर एक छिछले मुख-कुंड का रूप हरियाली से परिपूर्ण तसलानुमा घाटी बना हुआ था। किन्तु सन् १८८२ ई० में इसने अपनी समाधि तोड़ी। शान्ति भङ्ग हुई। एक नदी ने अपना रूप पलटा। उसमें पानी गर्म हो चला। इस घटना के ३,४ मास पश्चात् अक्तूबर मास में बिना किसी पूर्व सूचना के ही एक भयानक विस्फोट का शब्द सुना गया। धरती काँप उठी। पर्वत शिखर से खौलते पानी और पंक तथा दहकते पत्थरों, चूरों आदि के मिश्रण की एक भारी मात्रा विशाल धारा रूप में ऊपर उठ गई मानो कोई गीसर अपना विचित्र रूप दिखा रहा हो। इन वस्तुओं की भारी राशि इतने अधिक वेग से ऊपर फेंकी

गई कि वह चालीस मील दूर गिरती दिखाई पड़ी। पर्वत के निकट की सभी घाटियाँ भस गईं जिनमें दहकते पदार्थों का प्रवाह दीखता रहा। नदियों में उष्ण जल प्रवाहित होकर कीचड़ से मिश्रित हो तटों से ऊपर की ओर उमड़ पड़ा तथा किनारों की ओर प्राण-रक्षार्थ भागते हुए मनुष्यों तथा ढोरों को काल-कवलित कर लिया। वन्य पशु-पक्षियों को भी कहीं शरण नहीं रही। वे मृत्यु के ही घाट उतर सके। इन सब के शव नदी की दहकती धारा के ऊपर बह चले। यमपुरी का भयावह दृश्य इस धरा पर मानव-चक्षुओं को देखने को मिल सका। यह बात दूसरी थी कि वे इस कथा को सुना सकने के लिए जीवित रह सके या नहीं। एक पर्वत तथा नदी के मध्य ४० मील का अंतर था। उस मध्य खण्ड में २४ मील भूमि ऐसे नील वर्ण की गहरी पंक-राशि से पट गई कि सारे ग्राम-वासी अपने घरों में ही समाधिस्थ हो गए। उन ग्रामों तथा बाग-बगीचों का कहीं नाम भी नहीं पाया जा सका। इस विचित्र घटना में एक अद्भुत बात थी। पर्वत-शिखर से उभड़ी वस्तुएँ इतने अधिक वेग से फेंकी जा रही थीं कि दूर-दूर के गाँव सर्वथा स्वाहा होते जा रहे थे किन्तु कुछ निकट के ही गाँव बच निकले। अपनी छाती से ही चिपटे व्यक्ति को तीर मारना तो अव्यावहारिक बात ही है। वही दशा इन निकट के गाँवों की रक्षा के सम्बन्ध में भी हुई। इन सब नारकीय दृश्यों का घटना-काल केवल ५ घंटे ही था।

मृत्यु को मानो अपने प्रहार से कभी भी पूर्ण संतोष नहीं होता, इसी कारण इस पहले उभाड़ के चार दिन पश्चात् फिर दूसरा उभाड़ हुआ जो और भी भयानक था। एक भारी भूकम्प ने उस क्षेत्र को पूर्णतया कँपा दिया। कीचड़ और लावा की तरह वस्तुएँ सात मील दूर तक जा गिरीं। पर्वत का शिखर पूर्णतया भग्न हो

नीचे गिर गया। पार्श्व भाग भी खण्डित हुए। इस तरह भारी आखातों का निर्माण हुआ। समतल भूमि ने पहाड़ियों का रूप धारण किया।

नदियों के मार्ग परिवर्तित हो गए जिससे २००० मनुष्य एक रात में ही मृत हुए। एक नदी के तट पर कुछ दूरी पर एक नगर अवस्थित था। वहाँ के लोगों को इस दुर्घटना की प्रथम सूचना उस समय मिली जब उन्होंने जल-तल पर बहुसंख्यक मनुष्यों तथा मृगों, गेंडों, व्याघ्रों तथा अन्य वन्य जंतुओं के शव नदी के वेग के साथ समुद्र की ओर बहते जाते देखे। इस दुर्घटना में सौ से अधिक ग्राम ध्वस्त हुए तथा ४००० मनुष्य मृत हुए।

सन १६१६ ई० में जावा के केलुइट नामक ज्वालामुखी में उभाड़ हुआ। अठारह वर्षों से वह शान्त रहता आया था जिससे उसके मुखकुंड ने जलाशय का रूप धारण कर लिया था। उभाड़ के समय भीटे टूटने से इस जलाशय की भारी जल-राशि वेग पूर्वक नीचे बह चली जिसमें ५५०० व्यक्ति बह गए। अब तो इस दुर्घटना से पाठ सीखकर उस मुखकुंड में एक सुरङ्ग खोद दी गई है जिसके मार्ग उसका पानी बराबर बहा दिया जाता रहता है और इस प्रकार की दुर्घटना पुनः घटित होने की आशंका दूर कर दी गई है।

एक दूसरा ज्वालामुखी मेलापी नाम का है। इसने भी भयानक नर-संहार करने की कुख्याति प्राप्त की है। सन १६३१ ई० में इसके उभाड़ से १३०० मनुष्य मरे। इसके मुख से चूरे की प्रचुर वर्षा होकर उसे चारों ओर के स्थानों में बिछा गई। इसके साथ ही एक लावा की धारा भी चार मील लंबी, २०० फीट चौड़ी तथा ८ फीट ऊँची निकली जिसने भारी संहार-कार्य किया।

जावा के पूर्व सम्बावा द्वीप में टोम्बोरो नाम का ज्वालामुखी है। अप्रैल सन १८१५ के उभाड़ में इसने १२००० मनुष्यों का प्राण लिया। उभाड़ बड़ा ही भयानक था। बड़ी दूर तक इसकी गड़-गड़ाहट सुनी जा सकी। घोर अंधेरा मच गया। भारी उभाड़ के झोंके में ऐसा बवंडर उठा कि बड़े-बड़े वृक्ष जड़ से उखड़ गए। मनुष्य, घोड़े तथा ढोर या अन्य सभी अस्थावर वस्तुएँ वायु में उड़ा दी गईं।

— — —

मेक्सिको के ज्वालामुखी

पेरिकुटिन तथा जोरुलो नाम के आधुनिक काल में जन्म देने वाले मेक्सिको देश में ज्वालामुखियों का अभाव नहीं है। इसके दक्षिणी भाग में एक ज्वालामुखीय पट्टी सारे देश के आरपार पूर्व पश्चिम तक फैली है जो पश्चिम में पैसिफिक महासागर तथा पूर्व में मेक्सिको की खाड़ी को स्पर्श करती है। इस पट्टी में अनेक विलुप्त तथा जागृत ज्वालामुखी पाए जाते हैं।

पोपोकेटे पेटल (धूम्रवर्षी) ज्वालामुखी—यह ज्वालामुखी दक्षिणी स्पेन की इस पट्टी में ही स्थित है। यह मेक्सिको नगर से कई मील दक्षिण की ओर है तथा बड़ा ही प्रसिद्ध है। मेक्सिको देश के मूल-वासी ऐज़टेक लोगों की देशी भाषा में इस नाम का अर्थ धूम्रवर्षी ज्वालामुखी है। इसकी ऊँचाई १७८८० फीट है तथा इसका शिखर सदा ही हिमाच्छादित रहता है किन्तु उसके पादतल में कदली, ताड़, नारंगी तथा आम्र के वृक्षों की शोभा देखी जाती है। इस ज्वालामुखी का मुखकुंड २००० फीट व्यास का है तथा उसमें हिम के पिघलने से जल-राशि सिंचित रहकर सरोवर का रूप प्रदान करती है। उसमें अब भी वाष्प-धारा मुखकुंड के पेटे से उठती पायी जाती है। इन दृश्यों के अतिरिक्त गंधकीय गैस के क्षुद्र बादल उठकर उसके मुख पर ही मँडराते पाए जाते हैं। निदान कुछ उद्योगी व्यक्ति मानव-उपयोग के लिए भीटों पर छिटकी पड़ी गंधक-राशि के संचय का भी प्रयत्न करते देखे जाते हैं। हमें इन रूपों में ज्ञात

होता है कि धूम्रवर्षी ज्वालामुखी सुप्तावस्था में ही पड़ा है, जिसका कभी जागृत रूप भी देख सकना संभव हो सकता है।

इस्टाक्सिहुटल (श्वेत सुन्दरी) ज्वालामुखी—यह भी स्पेन के दक्षिण भाग को पट्टी में ही है। यह वहाँ के मूलवासियों की देशी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ श्वेत रमणी या सुन्दरी है। इसके शृंग भाग के तुषाराच्छादित होने तथा उसका रूप किसी प्रसुप्त रमणी सा ज्ञात होने से यह नाम पड़ा है। वहाँ के मूलवासियों की कल्पना में ये ज्वालामुखी एक दम्पति रूप के थे जिनमें पुरुष तो धूम्रवर्षी था तथा नारी श्वेत सुन्दरी। इनमें श्वेत सुन्दरी तो धूम्रवर्षी से दीर्घायु है, इस कारण उसके मुखकुंड का तलभंजक शक्तियों ने लोप ही कर दिया है। इसको विलुप्त ज्वालामुखी कहा जाता है।

ओरिजाबा (तारक) ज्वालामुखी—यह भी ऐज़टेक लोगों की देशी भाषा का शब्द है। इसका अर्थ है तारक ज्वालामुखी। इसकी ऊँचाई १८२०० फीट है तथा इसका शिखर हिमाच्छादित तथा सुडौल रूप का है। उस पर तीन मुख-कुंड देखे जाते हैं। उनमें प्रायः हिम की राशि संचित रहती है। उसके चारों ओर उसी के मुख से निकला लावा जमा पड़ा है। अठारहवीं शताब्दी में इसके अंतिम उभाड़ होने के पश्चात् फिर उभाड़ नहीं देखा गया। कदाचित् यह सुषुप्त है या विलुप्त अवस्था को ही प्राप्त हो गया है।

जिनान्टी केटेल (नग्नदेव) ज्वालामुखी—यह मेक्सिको नगर से ४० मील दूर उत्तर-पश्चिम की दिशा में टोलुका नगर के समीप स्थित है। शिखर पर दो मुखकुंड हैं जो सरोवर का रूप धारण किए हैं। इसका मुखकुंड आज तक भग्न नहीं हो सका है, इसलिए यह अल्पायु होगा।

टक्स्टला (भग्नशिखी)—मेक्सिको की खाड़ी में पूर्वी तट पर वेराक्रुज नगर से ८० मील दूर दक्षिण-पश्चिम दिशा में यह अव-

स्थित है। इसकी ऊँचाई ५००० फीट से कम ही होगी किन्तु १७६६ ई० के उभाड़ में इसके शिखर का पूरा भाग ही उड़ गया था, इसी कारण इतनी कम ऊँचाई है। यह एक बहुत ही भयंकर उभाड़ था। परन्तु उसके बाद से हलके उभाड़ ही उसमें होते आए हैं।

कोफरी डी पेरोट (शवाधार) ज्वालामुखी—यह ओरिजावा से ३० मील उत्तर स्थित है। इसकी ऊँचाई १३५०० फीट के लगभग है। मेक्सिको की खाड़ी से देखने पर इसका चौकोर शिखर शव रखने के संदूक की तरह ज्ञात होता है। इसलिए इसका यह नाम है। युवावस्था पार कर लेने पर तल-भंजन क्रियाओं के परिणाम-स्वरूप ही शिखर का यह अर्द्ध भग्न रूप बन गया है।

कोलिमा—यह १२००० फीट ऊँचा एक बड़ा भव्य ज्वालामुखी है और मेक्सिको के पश्चिमी तट पर स्थित है। मेक्सिको के दक्षिणी भाग की ज्वालामुखीय क्षेत्र की पट्टी का पश्चिमी छोर कोलिमा है तथा पूर्वी छोर टक्स्टला ज्वालामुखी है। किन्तु ये दोनों छोर स्थल-खंड की ज्वालामुखीय पट्टी की सीमा ही बतलाते हैं। यथार्थ में भूगर्भीय पट्टी समुद्र में भी आगे की ओर बढ़ गई है जिसका प्रसार कदाचित दोनों दिशाओं में है। कोलिमा का उभाड़ पिछली शताब्दी में हुआ था। लावा का भी उद्‌गार हुआ था, किन्तु मुख्य मुख से नहीं बल्कि पार्श्व-मुखों से ही। सन् १६०३ ई० में इसका कई सप्ताह तक उभाड़ हुआ था। कहते हैं कि इसके मुख से बाहर फेंके गए पदार्थों की पहुँच आकाश में १७ मील ऊपर तक हो सकी थी।

मेक्सिको नगर के अंचल में किसी प्राचीन अजुस्को नामक ज्वालामुखी के मुख से निःसृत लावा की जमी तह पाई जाती है। कहा जाता है कि उस ज्वालामुखी का उभाड़ आज से दस-पाँच हजार वर्ष पहले हुआ होगा। लावा की यह तह कई वर्गमीलों में

फैली है जिसकी गहराई २० से ५० फीट तक पाई जाती हैं। जैसा ऊँचा-नीचा तल मिला होगा उसी के अनुसार इसकी जमी तह की मुटाई बनी होगी। इन तहों की खोदाई कर तहों के नीचे गाँवों के दबे होने का प्रमाण पाया गया है। अभी तो दो-एक गाँवों के ही दबे होने का प्रमाण मिला है किन्तु अनुमान है कि कितने ही गाँव इसकी तह के नीचे दब गए होंगे। उनको इस तह ने जितनी अधिक गहराई में तथा दृढ़ता के साथ समाधिस्थ कर दिया है, वैसे रूप का दूसरा उदाहरण इतिहास में नहीं मिल सकता। इस अटल समाधि में अपनी तह के नीचे उसने कितने ही सहस्रों वर्ष तक इन गाँवों को दबाये रक्खा। मेक्सिको नगर की सड़कों का निर्माण करने के लिए इस तह की दृढ़ बसाल्ट शिला को काट-काट कर ले जाने पर इन गाँवों के दबे रहने का रहस्य खुल सका। कई सौ फीट की गहराई में डाइनामाइट की मार से ऊपर की शिलाएँ तोड़ने का प्रयत्न करने पर प्रकृति द्वारा जमाए ऊपरी तल से इतनी अधिक गहराई में मानव-कंकाल, हाथ से बने मिट्टी के बर्तन आदि मनुष्य की दृष्टि में आकर बड़े विस्मय के विषय बने। संयोग से किसी बहुत ही पुरातन सभ्यता ने अपने भग्नावशेष की यह झाँकी दिखलाई।

———

आइसलैंड के ज्वालामुखी

ध्रुव प्रदेश शीत कटिबन्ध का क्षेत्र है। ऐसे शीत-प्रधान क्षेत्र के निकट आइसलैंड में आग के खेल दिखाकर ज्वालामुखियों का उभड़ना एक विस्मयजनक ही बात है। ऊपरी तल से हिम तथा निचले तल से ताप के बल लगाने से हम इन दोनों ही विरोधी शक्तियों का समन्वय ज्वालामुखी पर्वतों के रूप में आइसलैंड में देख सकते हैं।

आइसलैंड का प्रसिद्ध ज्वालामुखी, हेकला, लगभग १०० वर्ष पूर्व जागृत हुआ था। फिर पता नहीं, वह कब जागृत हो उठे। ऐतिहासिक काल में ही हेकला में बीस बार भयंकर उभाड़ होने की बात देखी गई है। इसके उभाड़ से आसपास की भूमि में लावा तथा चूर्णों का विशेष फैलाव होता रहा है। इसका एक उभाड़ तो छः वर्षों तक अनवरत जारी रहा। इसका १८४५ ई० का उभाड़ एक बड़ी प्रसिद्ध घटना है।

साढ़े तीन हजार वर्ष पूर्व से लेकर अब तक आइसलैंड ने लावा के उभाड़ में अन्य सभी स्थलों को पछाड़ दिया है। संसार भर में जितनी मात्रा लावा की उभड़ी होगी उस समस्त मात्रा का तृतीयांश इस छोटे द्वीप में ही उभड़ा पाया जाता है। यथार्थ में यह सारा द्वीप ही ज्वालामुखी का प्रसाद है जो समुद्र के पेटे में किसी दिन एक लावा के उभाड़ का प्रारम्भ होने से आज इतने बड़े द्वीप का रूप धारण किए पड़ा है। ज्वालामुखियों के उभाड़

की भीषणता तथा ज्वालामुखियों की संख्या की दृष्टि से आइसलैंड एक भारी ज्वालामुखीय क्षेत्र है। वहाँ १०७ ज्वालामुखियों को विद्यमान पाया जाता है। उनमें से कम से कम २० ऐतिहासिक काल में जागृत हो चुके हैं। इसके दक्षिणी भाग में हेकला तथा उत्तरी भाग में स्केप्टर बहुत ही प्रसिद्ध ज्वालामुखी हैं।

आइसलैंड के ऊँचे भाग बर्फ से ढँके रहते हैं। इनमें सबसे बड़ा हिम-क्षेत्र वटनाजोकल नाम का है। तुषार से घिरे शिखरों को ऊपर नग्न रूप में निकला देख कर अग्निवर्षा की प्रतीक्षा में बैठे रहते पाया जाता है। इन स्थितियों में ज्वालामुखीय उभाड़ कितना अधिक भयानक हो सकता है उसकी कुछ कल्पना की जा सकती है। उभाड़ की गर्मी से बर्फ की भारी राशि का गल कर पानी बन जाना एक समस्या हो जाती है। वह ढाल पर जल का भारी प्रवाह बहाकर नीचे की बस्तियों का लोप ही कर देता है। आइसलैंड में इसी प्रकार के ज्वालामुखीय पर्वत हैं। आइसलैंड के उच्च खंड जहाँ हिमाच्छादित रहते हैं वहाँ इस हिममेखला के ऊपर यत्र-तत्र जागृत ज्वालामुखियों का मुख निकला रहता है। उससे समय कुसमय अग्नि-वर्षा रूप में लाल, दहकते लावा का उभाड़ होने से हिम की भारी राशि गलकर अपनी बाढ़ से भयानक हानि पहुँचाती है। इसलिए ज्वालामुखी के उभाड़ों के पश्चात् प्रायः ऐसी बाढ़ें आती हैं और वे ही भीषण संहार करती हैं। संसार में कहीं अन्यत्र आग और पानी का ऐसा भीषण गठबंधन देखने को नहीं मिल सकता। इनके संयोग द्वारा आइसलैंड इतनी संहार-लीला कहीं भी अन्यत्र देखने को नहीं मिल सकती।

आइसलैंड के पूर्व मध्य खंड में अस्कजा नाम का ज्वालामुखी है। सन् १८७५ ई० में इसमें भयंकर उभाड़ होने पर इसके अस्तित्व का पता चला। आज भी इसके चारों ओर लावा की विस्तृत तह

जमी मिलती है जो इसके संहार-कार्य का स्मरण दिलाती है। इसने मैदान, घाटी आदि सब जगह अपने लावा को फैला कर जैसा उभाड़ और धरातल का टेढ़ा-मेढ़ा रूप बना दिया उसे देखते ही बनता है।

ओरेफा जोकल आइसलैंड का सर्वोच्च पर्वत है। १३६२ ई० में उस ज्वालामुखी के उभाड़ से इतनी अधिक बर्फ गल पड़ी कि उसके भारी बहाव में चालीस किसानों के खेत, घरबार, तथा पशु आदि एक साथ ही समुद्र में फेंक दिए गए।

सन् १७८६ ई० का स्केप्टर जोकल ज्वालामुखी का उभाड़ चिरस्मरणीय दुर्घटना है। ऐसे भयानक रूप के उभाड़ संसार भर में बहुत थोड़े ही हुए हैं। कई बार के भूकंपों के पश्चात् ८ जून १७८३ ई० को इसने बड़ा ही रौद्र रूप धारण किया। उसके मुख से भाप की धारा उभड़ने लगी। तीन दिन पश्चात् भारी लावा-राशि उभड़ पड़ी। एक १५ मील लम्बी धरती की फटान में बहुसंख्यक मुखों से लावा उभड़-उभड़ निकलने का लोमहर्षक दृश्य उपस्थित हुआ। फटान द्वारा लावा के उभाड़ का आधुनिक काल में यह अद्भुत दृश्य था।

इस ज्वालामुखी के उभाड़ की कहानी पुरानी दंत-कथाओं को भी मात करती है। अनेक मुखों से निर्गत लावा की धाराएँ सम्मिलित होकर एक वृहद् धारा का निर्माण कर सकीं। वह अग्नि-धारा स्कैप्टा नदी में बह चली। पानी सूख गया। नदी के पेटे ने शीतलता के स्थान पर उष्णता का कलेवर धारण किया। शीतल वारिनद के स्थान पर उसने उत्तप्त लावा नद का रूप प्राप्त किया। जिस खड्ड से वह प्रवाहित होती थी वह लावा से परिपूर्ण हो गया। यह खड्ड २०० फीट चौड़ा तथा ४०० से ६०० फीट तक गहरा रहकर, नदी का पेटा बनाता था। उस सम्पूर्ण गहराई तथा चौड़ाई

में ही लावा ने अपना फैलाव नहीं किया, बल्कि बरसाती नदी की तरह उमड़ कर किनारों के बाहर भी जा पहुँचा। दोनों ओर के मैदान तथा खेत इसके पैर तले रौंदे, झुलसे जा रहे थे। नदी के पेटे का यह कायापलट कर लावा का बहाव उस झील में भी हुआ जो नदी के मार्ग में ही थी। उस झील को लावा ने अपने पिघले, दहकते रूप से भरना प्रारंभ किया, कुछ घड़ी के लिए उसका प्रवाह मन्द तथा स्थगित सा ज्ञात हुआ किन्तु धरती की कोख ने अपना लावा भण्डार उगल-उगलकर अपनी अक्षय निधि का परिचय देना प्रारम्भ किया। एक छोटी झील प्रकृति के संघर्ष में कहाँ तक टिकती। उसका भी पेटा भरपूर हो गया। जो कल आखात, गर्त, लंबे-चौड़े खड्ड आदि की गिनती में आती, वह अपना झील नाम पलट कर एक सपाट तल बनी। लावा ने विजय गर्व में अपना प्रसार आगे की ओर किया। अपनी पिपासाग्नि तुष्ट करने के लिए नदी के आगे का मार्ग पकड़ा। झील का पानी या तो सूख गया या लावा के धक्के से आगे ढकेल दिया गया था। पीछे-पीछे दहकता लावा बढ़ा। आगे चलकर लावा के मार्ग में गुहाओं से पूर्ण आग्नेय शिलाएँ मिलीं। उनके अंतस्तल, खुले गर्भ में लावा घुस पड़ा। वह शिला को पिघला कर अपना मार्ग और आगे बढ़ाता। मार्ग न बना सकने पर तल ही ध्वस्त कर वह पुरानी शिला के खंड आकाशगामी कर देता।

दस दिन पश्चात् एक दूसरी धारा मुख से निकल पड़ी। वह लावा की जमती हुई पहली धारा के ऊपर बहकर आगे बढ़ी तथा आगे मिलकर पिघले अंग के अग्रिम भाग से सम्मिलित होकर उसको शक्ति प्रदान कर दुगुने वेग से और आगे बढ़ सकने में समर्थ बनाया। लावा की यह दूसरी धारा जब मार्ग की झील के पेटे में जमी पहली तह के ऊपर पहुँची तो उसका एक भाग अवरुद्ध

होकर नदी के प्रवाह की विपरीत दिशा में उस स्थान की ओर बढ़ चला जहाँ से नदी निकलती थी। इस प्रकार के कई दिन के अभियान के पश्चात् लावा की मुख्य धारा एक झरने के पास पहुँची। यह प्रपात एक बड़े गहरे गर्त्त में गिरता था। लावा ने पानी के मार्ग से ढकेल कर इस गर्त्त में अपना भण्डार भरना प्रारम्भ किया। इस क्रिया के पश्चात् लावा ने अपना बहाव समुद्र तक कर लिया।

एक तीसरी धारा ने आकर और बल प्रदान कर लावा की राशि बहाना प्रारंभ किया परन्तु अब नदी के पेटे का मार्ग बिल्कुल ही भर चुकने से उसने एक नया मार्ग ही पकड़ा। दक्षिण-पूर्व दिशा में कुछ दूर बहकर इसने एक दूसरी नदी के मार्ग को पकड़ लिया। यहाँ भी पहली नदी के पेंटे की दशा दुहराई गई। गहरे गर्त्त पट गए। किनारों के बाहर लावा की भारी राशि अपना फैलाव कर सकी।

दो वर्षों तक इस ज्वालामुखी ने लावा का उभाड़ जारी रक्खा। बीच-बीच में थोड़ी ही रुकावट होती थी। लावा की इन धाराओं में से एक तो ५० मील लंबी थी, दूसरी ४० मील। एक धारा की चौड़ाई १२ से १५ मील तक की थी। इससे अनुमान हो सकता है कि कितनी अधिक लावा-राशि का उभाड़ हुआ। इन तहों की गहराई औसत रूप से १०० फीट होगी। गहरे गर्त्तों में तो लावा की तह ६०० फीट तक मोटी बनी। ग्यारह वर्ष के पश्चात भी इन तहों से भाप निकलती दिखाई पड़ती थी। इनकी फटानों में जमा पानी गर्म पाया जाता था।

अकस्मात् हिम के पिघलने तथा नदियों का मार्ग अवरुद्ध हो जाने से प्रलय-लीला ही मचती देखी गई। देश भर में भारी जल-प्रलय का दृश्य उपस्थित हुआ। कितने ही ग्राम स्वाहा हो गए।

खेतिहरों की अपार सम्पत्ति नष्ट हो गई। लावा की तह में भी कितने ही गाँव दब गए।

इस भारी विपत्ति में आइसलैंड ने अपने कुल निवासियों का पंचमांश, भेड़ों का चार पंचमांश, घोड़ों का तीन चतुर्थांश, तथा ढोरों की अर्द्ध संख्या नष्ट होते देखी। इस प्रकार १०००० मनुष्य, दो लाख भेड़ें, २८००० घोड़े, तथा ११००० ढोर नष्ट हो गए।

———

अफ्रीका के ज्वालामुखी

किलिमंजारो—अफ्रीका महाद्वीप का सर्वोच्च ज्वालामुखी किलिमंजारो ज्वालामुखी है। इसकी ऊँचाई लगभग १९६०० फीट होगी। इसका सबसे ऊँचा शिखर किवो नाम का है। दूसरा शिखर मवेंजी लगभग १७३०० फीट ऊँचा होगा। ये दोनों शिखर ७ मील की दूरी पर हैं तथा इनके मध्य का भूखंड १४४०० फीट ऊँचाई में रहकर इन दोनों को संबद्ध करता है। किवो शिखर का २०० फीट नीचे तक का ढाल हिम-मेखला से आच्छादित रहता है। इसमें जहाँ कहीं नालेनुमा गर्त्त हैं उनमें हिम-नद प्रवाहित होता है। इन हिमनदों को ४ या ५ सौ फीट नीचे तक फैला देखा जाता है। एक हिमनद तो १३८०० फीट ऊँचाई तक उतर आता है। मैवेंजी के शिखर पर स्थायी हिम-राशि आच्छादित नहीं रहती। वास्तव में तलभंजन ने तो इसके मुखकुंड की ऊपरी तह विनष्ट ही कर दी है। अब उस मुखकुंड का आधार भाग ही शिखर रूप में रह गया है। किलिमंजारो के सर्वोच्च शिखर किवो के मुखकुंड को आज भी ७४०० फीट व्यास की गोलाई में फैला देखा जा सकता है।

मेस ज्वालामुखी १४००० फीट ऊँचा है। उसका पूर्वी खंड एक उभाड़ में पूर्णतया ही ध्वस्त हो गया था। यह ज्वालामुखी किलिमंजारो के सम्मुख ही है।

किलिमंजारो के १२५ मील उत्तर एक पठार है जो ६० मील लंबा और ३० मील चौड़ा होगा। यह महान् ज्वालामुखीय मुख-कुंडों की भूमि कहा जा सकता है। कदाचित् संसार के महानतम

ज्वालामुखियों का किसी युग में इस क्षेत्र में उभाड़ हुआ था। इन मुखकुंडों में एक का नाम गोरोंगोरो है। आकार की बात सुन कर स्तब्ध हुए बिना नहीं रहा जा सकता। इसे १२ मील व्यास की गोलाई में फैला देखा जाता है जिसके पेटे का तल भींटे के किनारों से २००० फीट नीचे है। मुखकुंड का पेटा समतल ही है। इतने विस्तृत आखात में एक मध्यवर्ती गर्त्त जलाशय को आश्रय देता है जिसमें भींटे के भीतर के क्षेत्र से चारों ओर से बहकर आया पानी एक होता है। इस रूप में यह जन्तुओं का एक भारी उपनिवेश बन गया है। सरोवर का पानी मीठा है। उसके चारों ओर के भींटे के परकोटे के अंदर की भूमि हरियाली से आच्छादित है जिसमें सहस्रों वन्य जन्तु आनन्दपूर्वक कालयापन कर सकते हैं। अतएव इस ज्वालामुखीय वृहद् मुखकुंड के पेटे में इस विस्तृत चरागाह में सहस्रों जंतुओं का निवास है। दरयाई घोड़े, गेंडे, शुतुर्मुर्ग, जब्रा, सिंह, चीते, भेड़िये, शृगाल, बानर तथा अन्य पशु-पक्षी कदाचित् ५०००० की संख्या में पोषण पाते हैं। किसी सम्राट ने तो वहाँ मांस को डिब्बों में सुरक्षित करने का कारखाना ही खोलने की योजना कर रखी थी जो किसी कारण कार्यान्वित न हो सकी किन्तु अब यह सुरक्षित भूमि घोषित कर दी गई है।

ओल्डोन्यो-लेंगाई (गंगाजमुनी) ज्वालामुखी—यह सोने चाँदी के सौन्दर्य से विभूषित रूप का ज्वालामुखी सूर्य की प्रभा में जगमग हो उठता है। इस कारण गंगाजमुनी नाम उचित ही है। उस क्षेत्र में मूलवासियों द्वारा यह ज्वालामुखी देवता की भाँति पूजा जाता है। यह जागृत ज्वालामुखी है।

विक्टोरिया झील के पश्चिम में बेलजियम कांगो के कीऊ जिले में एक राष्ट्रीय उद्यान है। उसके अंदर ज्वालामुखी की पट्टी है

जिसे विरुंग रेंज कहते हैं। इस पट्टी में आठ ज्वालामुखी हैं। अफ्रीका की धसान की घाटी विशेष प्रसिद्ध है जिसमें लाल सागर के क्षेत्र में विस्तृत भूमि नीचे दब गई है। इसी धसान की घाटी की एक शाखा पश्चिमी धसान की घाटी नाम से फैलाती है। उसी से ये आठों ज्वालामुखी ऊपर उठे हैं। उनमें सबसे पश्चिम की ओर शानिना गोंगो तथा न्यामलागिरा नाम के दो ज्वालामुखी हैं।

न्यामलागिरा हवाई द्वीप के ज्वालामुखियों की तरह ढालनुमा चपटे शिखर का ज्वालामुखी है। इसमें से बहुत ही पतला लावा निकलकर पानी की तरह बह कर दूर के क्षेत्रों तक पतली तह जमा देता है। उसकी एक तह के ऊपर दूसरी, तीसरी अन्य तहें जमकर कच्छप-पृष्ठ की भाँति दृढ़ तल निर्मित करती हैं। लावा पहले आखात, मुखकुंड, में ही ठूसा पड़ा रहता है। फिर उभाड़ कर बाहर फैल जाता है। इसका मुखकुंड २ मील चौड़ा होगा। उसमें लावा भरे पड़े रहने के बाद किनारों से भीटों के बाहर उभड़ कर बहने लगा। फिर २८ जनवरी १९३८ को इसके पार्श्व में ही फटान उत्पन्न हुई। उसमें से लावा की भारी राशि उभड़ पड़ी। ढाल पर वेग पूर्वक उसका बहाव प्रारम्भ हुआ। सैकड़ों मील तक जंगलों में इसने आग लगा दी। कितने ही बारहसिंगे उसमें फँसकर राख बन गए। फटान से लावा की भारी मात्रा बह निकलने से मुखकुंड के लावा में भारी धसान पैदा हुई। इसी समय ज्वालामुखी के पादस्थल में एक धड़ाका हुआ और वहाँ एक नए ज्वालामुखी ने जन्म लिया। उसके मुख से लावा निकलने लगा। अन्य अनेक छिद्रों से भी लावा, गैस आदि का उभाड़ होने लगा। इनका एक दूसरे से कोई सम्बन्ध ज्ञात नहीं होता था। इन नए मुखकुंडों के लावा का कई सौ वर्गमील क्षेत्र में मैदानों में फैलाव हो गया। इससे जंगलों को भारी हानि पहुँची।

न्यूजीलैंड के ज्वालामुखी

न्यूजीलैंड का गारू ज्वालामुखी ही जागृत रूप का है। इसका उभाड़ प्रति तीसरे या चौथे वर्ष होता रहता है। ये उभाड़ अधिक प्रबल नहीं होते तथा लावा का उभाड़ भी हलका ही होता है। प्रत्येक उभाड़ के पहले पूर्वसूचना रूप में एक भारी धूम-राशि उभड़ पड़ती है जो बहुत ऊँचाई तक पहुँचती है। उसमें प्राय: प्रकाश की झलक भी दिखाई पड़ जाती है।

न्यूजीलैंड का सबसे प्रबल ज्वालामुखीय उभाड़ १८८६ ई० में

गारू (न्यूजीलैण्ड)।

हुआ था जिसमें तारावेरा पर्वत दो खण्डों में टूट गया था। ८ मील लंबी एक दरार फट गई थी जिसमें २० मुखकुंड उत्पन्न दिखाई पड़े। उनसे चूरों की भारी वर्षा हुई। इस प्रकार बरसे चूरों का फैलाव ४००० वर्गमील में हो गया।

न्यूजीलैंड के नार्थ आइलैंड में एगमांट ज्वालामुखी विलुप्त रूप का है। निचले ढाल पर दिव्य अछूती हरियाली दिखाई पड़ती है जिसके मध्य बर्फ के गलने से बनने वाले नाले बहते रहते हैं। इस ज्वालामुखी का शिखर सदा ही हिमाच्छादित रहता है तथा साल भर तक ऊपरी शिखर से लगभग २०० फीट नीचे बिम्ब रूप में चारों ओर बादल की टुकड़ी फैली रहती है। यह बड़ा ही मनोरम दृश्य होता है। देखने पर ऐसा ज्ञात होता है मानो बादल हिम-शिखर से लटके पड़े हैं।

ह्वाकरी (श्वेत-मेघावलम्बी) ज्वालामुखी—यह शब्द न्यूजीलैंड के मावरी लोगों की भाषा का है जिसका अर्थ श्वेत मेघ द्वारा आकाश में लटका हुआ पर्वत है। इसलिए ज्वालामुखी का नाम भी श्वेत मेघावलम्बी रक्खा जा सकता है। मावरी लोगों की कल्पना में यह बात कभी नहीं आ सकती थी कि ज्वालामुखी का जन्म समुद्र की कोख से हो सकता है, अतएव साधारण धरातल से ऊँचे इस ज्वालामुखी के उच्च शिखर को उन्होंने आकाश में बादलों की सहायता से लटका होने की कल्पना कर ली। किन्तु आज के वैज्ञानिकों ने यह पता लगा लिया है कि उन भागों में पाँच-सात मील गहरा समुद्र होने पर भी इस ज्वालामुखी का जन्म समुद्र के निचले पेटे से ही हुआ। कप्तान कुक ने अपनी संसार-प्रसिद्ध समुद्री यात्राओं में इस द्वीप का भी पता लगाया था। जिप्सम धातु को धरातल पर चारों ओर फेंक कर इस ज्वालामुखी ने चारों ओर से श्वेत रंग की चादर सी ओढ़ ली थी। इस कारण

यह बिल्कुल हिमाच्छादित रूप का ही जान पड़ सकता है। एक उभाड़ के पश्चात् ही कुक ने इस द्वीप के दर्शन किये थे, इसलिए उसने इसका नाम ही श्वेत द्वीप ह्वाइट आइलैंड रख दिया।

इस ज्वालामुखी के मुखकुंड से गंधक की धारा प्रवाहित होकर समुद्र में गिरती है तथा उसके जल को पीत रंग-रञ्जित कर देती है। इन धाराओं के कारण धरातल पर सूखी पड़ी गंधक को शुद्ध कर एकत्र करने के लिए उस द्वीप पर एक गंधक का कारखाना ही खोल दिया गया था किन्तु १६१४ ई० के उभाड़ में इस कारखाने का सर्वथा ही लोप हो गया। सभी कर्मचारी मृत हो गए किन्तु रात के इस उभाड़ में एक बेचारी बिल्ली मृत्यु के मुख से बच निकली और प्रातःकाल जीवित प्राणियों में केवल वही देखी जा सकी।

— — —

फिलीपाइन के ज्वालामुखी

फिलीपाइन द्वीप के सब से जागृत ज्वालामुखी मेयोन की संसार के सुन्दरतम ज्वालामुखियों में गिनती की जाती है। यह मैदानी भूमि से ऊपर उठकर समुद्रतल से ८००० फीट ऊँचा अपना सुडौल शंकु निर्मित करता है। इसके किनारों पर ऊपरी सिरे तक घास जमी पाई जाती है। शिखर के निकट फटानों से भाप और गंधकीय गैस निकला करती है। रात को इसकी आभा बड़ी ही भव्य दिखाई पड़ती है जो शिखर के ऊपर आच्छादित पड़ी रहती है।

मेयोन का सबसे भयानक उभाड़ कदाचित् १८९७ का था। उस समय किसी भी प्रकार पूर्वसूचना मिले बिना ही इसका उभाड़ प्रारंभ हो गया और एक सप्ताह तक जारी रहा। इस अवधि में लावा तथा चूरे की भारी मात्रा निःसृत हुई। लावा की धाराओं ने कितने ही गाँवों का लोप कर दिया। लावा की धारा तो सात मील तक पहुँची परन्तु चूरे की वर्षा पूर्व दिशा में १०० मील तक तथा पश्चिम दिशा में ७५ मील तक अपना प्रभाव दिखा सकी। सन् १९१४ के उभाड़ ने कगसौआ नगर का पूर्णतः ध्वंस कर दिया जो उसके अंचल में अवस्थित था।

फिलीपाइन के लूजोन द्वीप पर यह ज्वालामुखी स्थित है। एक दूसरा प्रसिद्ध ज्वालामुखी, टाल भी लूजोन द्वीप पर ही उसके दक्षिणी भाग में है। १९११ ई० में टाल का उभाड़ फिलीपाइन का

सब से अधिक भयानक उभाड़ था । इसके मुख से निकली वस्तुओं में भाप, कीचड़ और चूर्ण ही थे । लावा नहीं निकला था । पेली ज्वालामुखी के प्रसिद्ध उभाड़ की तरह इसकी भाप, चूर्ण, रेत आदि की दहकती आँधी धरातल पर ही बह कर भीषण संहार कर सकी । १३०० के लगभग मनुष्य मृत हुए ।

कहा जाता है कि फिलीपाइन में ५० ज्वालामुखी हैं जिनमें से १२ जागृत हैं ।

उत्तरी अमेरिका के ज्वालामुखी

लेस्सेन पीक—यह समुद्र-तल से १०४५३ फीट ऊँचा शिखर है। इसमें हिमराशि जमी पड़ी थी परन्तु १९१४ ई० में उस हिम-राशि के मध्य ४० फीट लंबा और २५ फीट चौड़ा एक आखात बन गया और उसमें से धूल तथा पत्थर के चूरे बाहर फेंके गए जो बर्फ की तह पर चारों ओर ३०० फीट तक फैल गए।

पहले वर्ष १५० उभाड़ हुए। किसी-किसी उभाड़ में दस हज़ार फीट की ऊँचाई तक धुआँ उठता, एक मील दूर तक ढोंके जाकर गिरते।

लेस्सेन ज्वालामुखी ने १९१५ ई० में पहले पहल दहकते लावा का उभाड़ प्रारंभ किया। यह मुख के एक छेद से बाहर निकल कर लपलपाती लंबी जीभ की तरह १००० फीट नीचे तक पहुँच गया। कुछ मास पश्चात् एक और लावा का विशेष उभाड़ होने से बाहर जमी हिमराशि पिघल पड़ी जिससे भारी क्षति पहुँची। इससे एक कीचड़ की भारी नदी ही बह चली जिसमें चौदह पन्द्रह मन के पथरीले ढोंके पाँच छः मील तक लुढ़का दिए गए। इसके बाद भी कीचड़ की धाराएँ छोटी-मोटी उभड़ती रहीं। एक बार गर्म हवा, धूल तथा ढोंकों की मिश्रित आँधी इतनी तीव्र उठी कि ३ मील की दूरी तक उसके मार्ग में वृक्ष एक पंक्ति में धराशायी हो गए। ऊपर की ओर भी ५ मील ऊँचाई तक धुआँ उठा।

१९१५ ई० के इस उभाड़ में निकली वस्तुओं से ही आज लेस्सेन ज्वालामुखी का मुखकुंड पटा पड़ा है। बाद में छोटे-मोटे जो उभाड़ हुए उन्होंने कुछ मुख का रूप परिवर्तन करने के अति-

रिक्त कोई अन्य प्रभाव नहीं दिखाया। यह कहा जाता है कि ऊपर की बर्फ पिघल-पिघलकर दरारों द्वारा ज्वालामुखी के भीतरी भाग में पहुँच सकी। इसी कारण वह भारी उभाड़ हुआ।

उभाड़ के पहले ढालनुमा रूप का ही इसका चपटा शिखर था जिसमें लावा की कई तहें एक के ऊपर एक जमती जाकर वह रूप दे सकी थीं किन्तु बाद में यह अधिक ढालू रूप धारण कर ८५०० फीट ऊंचा बन सका। इसका पादस्थल उत्तर-दक्षिण ५ मील चौड़ा तथा पूर्व-पश्चिम ७ मील लंबा बना था। इसी आधार के ऊपर शंकु का निर्माण हुआ।

यह ज्वालामुखी लेस्सेन ज्वालामुखीय राष्ट्रीय उद्यान में है जो सरकार द्वारा सुरक्षित भूखंड है। इस उद्यान का फैलाव उत्तर-पूर्व कैलिफोर्निया में १६४ वर्गमील में है।

शास्ता ज्वालामुखी—यह केलिफोर्निया का दूसरा ज्वालामुखी है जो १४३५० फीट ऊँचा है। इसका शिखर एक छोटे हिमनद से सुशोभित है। पश्चिम दिशा में २००० फीट नीचे की ओर एक क्षुद्र मुखकुंड है। नीचे की ओर अन्य क्षुद्र मुख भी भरे पड़े हैं जिनमें कुछ लावा निर्मित तथा कुछ चूर्ण निर्मित हैं।

मुखकुंडीय झील—किसी समय अमेरिका के ओरेगन राज्य में बहुत भारी ज्वालामुखी था। उसके मुखकुंड की जगह एक झील २००० फीट गहरी ६ मील लंबी तथा ४ मील चौड़ी विद्यमान है। इसके तटों पर चारों ओर ५०० से लेकर २००० फीट ऊँची पहाड़ियों के भींटे हैं। इस प्रकार कहीं-कहीं यह ४००० फीट तक गहरी दिखाई पड़ती है। यह मोजमा नामक ज्वालामुखी के पुराने मुखकुंड का रूप है जिसका किसी पुराने काल में उभाड़ होने पर दशमांश उड़ गया था।

———